

- Framing of the Constitution, Preamble of the Constitution and Nature of the Constitution.

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. भारतीय संविधान की उत्पत्ति एवं विकास पर विस्तृत चर्चा कीजिए।

उत्तर- **भारतीय संविधान की उत्पत्ति 1858-1935**

भारत के संविधान में सभी नागरिकों के लोकतांत्रिक अधिकारों के प्रावधान मौजूद हैं। ये प्रावधान उन्हें भी दिये गये हैं जो भारत नागरिक नहीं हैं। इन अधिकारों की पूर्ति के लिये विधायी संस्थानें व्याप्त हैं। संविधान भारत में लोकतंत्र एवं सामाजिक परिवर्तन की रतीय संविधम ॐ विकास परिकल्पना को पेश करता है। भारतीय संविधान के निर्माण में लोकतांत्रिक संस्थाओं की उत्पत्ति की प्रक्रिया एवं अधिकार संविधान सभा के गठन से पूर्व ही शुरू हो गयी थी। लेकिन यहां यह बताना जरूरी है कि जो लोकतांत्रिक मूल्य एवं लोकतांत्रिक संस्थाएँ उपनिवेश काल में थी उनका मकसद सिर्फ औपनिवेशिक हितों को पूरा करना था जबकि संविधान सभा द्वारा किये गये प्रावधान उनके विपरीत थे। यद्यपि भारतीय संविधान दिसंबर 9, 1947 से लेकर नवंबर 26, 1949 के बीच विचार-विमर्श की उपज है, लेकिन उनकी कुछ विशेषताएँ विभिन्न अधिनियमों द्वारा पारित प्रावधान से मिली हैं।

भारत शासन अधिनियम 1935, एवं अन्य अधिनियम

ईस्ट इंडिया कंपनी से ब्रिटिश शासन को सत्ता हस्तांतरण के पश्चात, ब्रिटिश संसद भारत के मामलों के व्यवस्थापन में लिप्त हो गयी। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिये, 1885 से 1935 तक औपनिवेशिक शासन द्वारा कई प्रकार के शासन अधिनियम लागू किये। भारत सरकार अधिनियम 1935 इनमें से एक महत्वपूर्ण अधिनियम था। इस इकाई में आप इस अधिनियम से पहले अन्य अधिनियमों के बारे में अध्ययन करेंगे। इन अन्य अधिनियमों में सबसे पहले 1858 का भारत सरकार अधिनियम था। इस अधिनियम के द्वारा भारत में शासन का केन्द्रिकृत एवं विकेन्द्रीकृत ढाँचा सामने आया। केन्द्रिकृत ढाँचा वहां लागू किया गया जिसका सीधा नियंत्रण ब्रिटिश राज के अधीन था। ये क्षेत्र ब्रिटिश इंडिया प्रांत के रूप में जाने जाते थे। विकेन्द्रिकृत ढाँचा वहां लागू किया गया जहाँ पर ब्रिटिश राज शाही का कोई सीधा नियंत्रण नहीं था। ये क्षेत्र भारतीय राजाओं के शासन के अधीन थे। इन्हें शाही राज्य कहते थे या देशी रियासत के नाम जाना जाता था। इस प्रकार की व्यवस्था में राजा अपने राज्य के आंतरिक मामलों में पूर्ण रूप से स्वतंत्र था, लेकिन ये ब्रिटिश नियंत्रण के अधीन थे। केन्द्रिकृत ढाँचे के अंतर्गत सभी प्रकार की शक्तियां भारत के राज्य सचिव के पास थी जिसका सीधा नियंत्रण ब्रिटिश राज के पास था। वह (सचिव) राज शाही की तरफ से कार्य करता था। उनकी सहायता के लिये 15 सदस्यीय मंत्रिमंडल था। उस समय कार्यपालिका, विधायिका एवं न्यायपालिका अलग नहीं थी। ये सब भारत के सचिव के नियंत्रण में थी।

ब्रिटिश शासन में सचिव की सहायता के लिये वायसराय था। वायसराय को भी कार्यकारी परिषद सहायता करती थी। जिला स्तर पर वायसराय की सहायता के लिये ब्रिटिश प्रशासक होते थे। प्रांतीय सरकारों के पास वित्तीय स्वायत्ता नहीं होती थी। 1870 में लार्ड मेयो ने प्रांतीय प्रशासन को चलाने के लिये उनकी जरूरतों को पूरा करने को सुनिश्चित किया।

1909 में भारत परिषद अधिनियम के लागू होने के पश्चात् प्रांतीय सरकारों के राजनीतिक संस्थाओं के क्षेत्रों को विस्तृत किया गया। इस अधिनियम को पहली बार लागू किया गया जिसका उद्देश्य 'प्रतिनिधित्व प्रणाली ब्रिटिश शासन में लागू करना था। इसमें गैर सरकारी चुने हुए सदस्य शामिल थे। इस अधिनियम के द्वारा मुस्लिम समुदाय को भी अलग से प्रतिनिधित्व दिया गया। 1919 के भारत सरकार अधिनियम ने प्रांतीय सरकारों को कुछ सत्ता सुपूर्द की। जिसमें केन्द्र सरकार का नियंत्रण उन का प्रमुख था। इसने केन्द्र सरकार के नियंत्रण को कुछ कम किया। इसके द्वारा प्रशासन के कार्यक्षेत्र और राजस्व के स्रोतों का केन्द्र एवं प्रांतों में विभाजन किया। इस व्यवस्था के अंतर्गत प्रांतीय सरकारों को राजस्व के स्रोतों पर नियंत्रण का अधिकार दिया जैसे भूमि, सिंचाई और न्यायिक मामले। प्रांतीय विषयों को स्थानांतरित एवं आरक्षित श्रेणी में बाँटा गया। स्थानांतरित विषयों पर कानून बनाने का अधिकार राज्यपाल को था जबकि आरक्षित विषयों पर कानून बनाने का अधिकार विधायिका के पास था। राज्यपाल (कार्यकारी प्रमुख) विधायिका के प्रति उत्तरदायी नहीं था।

भारत सरकार अधिनियम 1935, अन्य भारत सरकार अधिनियमों से भिन्न था। जैसा कि आपने पढ़ा होगा उन अधिनियमों में ब्रिटिश इंडिया के प्रांत की सरकार एकात्मक या केन्द्रिकृत थी। अर्थात् हर स्तर पर वही सरकार कार्यरत थी। पिछले अधिनियमों के बजाय भारत सरकार अधिनियम 1935 प्रांतीय स्वायत्ता की बात करता है। इसके द्वारा अल्पसंख्यकों को संरक्षण प्रदान किया गया। इन संरक्षणों में अल्पसंख्यकों जैसे मुस्लिम, सिख, पारसी, यूरोपियन एवं ऐंग्लो इंडियन समुदाय को पृथक् प्रतिनिधित्व के प्रावधान दिये गये।

इस अधिनियम के द्वारा संघ एवं प्रांतों के बीच तीन सूचियों के तहत सत्ता के बंटवारे का प्रावधान किया गया। प्रथम संघ सूची, द्वितीय समवर्ती सूची तथा तृतीय प्रांतीय सूची। इस अधिनियम के माध्यम से संघ एवं प्रांतों के बीच विवादों को सुलझाने के लिए संघीय न्यायालय का भी प्रावधान किया गया। प्रांतीय सरकार का कार्यकारी अध्यक्ष राज्यपाल था जिन्हें विशेष शक्तियाँ प्राप्त थीं।

विशेष शक्तियों के तहत राज्यपाल प्रांतीय विधायिका के निर्णयों पर वीटो का प्रयोग कर सकते थे। वे राज शाही की तरफ से कार्य करते थे और वे गवर्नर-जनरल के अधीन नहीं थे। गवर्नर-जनरल वायसराय को कहते थे। उन्हें कुछ व्यक्तिगत मामलों में भी कुछ विशेषाधिकार प्राप्त था। इन मामलों में उन्हें मंत्रियों की सलाह की जरूरत नहीं थी। राज्यपाल को गवर्नर-जनरल के नियंत्रण में कार्य करना पड़ता था और गवर्नर-जनरल वास्तव में राज्य का सचिव होता था। वे विधायिका के प्रति उत्तरदायी नहीं थे लेकिन उन्हें मंत्रियों की सलाह पर कार्य करना पड़ता था जो कि विधायिका के प्रति उत्तरदायी थे।

भारत सरकार अधिनियम 1935 में केन्द्र सरकार के गठन का प्रावधान भी था जिसमें राज्य एवं प्रांतों के प्रतिनिधि आते थे। इस प्रकार की सरकार को संघ सरकार कहते थे

क्योंकि इसमें राज्य एवं प्रांत दोनों के सदस्य होते थे लेकिन संघ सरकार की स्थापना नहीं हो सकी क्योंकि राजाओं के बीच संघ में शामिल होने पर सहमति नहीं थी। इस प्रकार इस अधिनियम के अंतर्गत केवल प्रांतीय सरकारों का गठन किया गया और इस अधिनियम के अंतर्गत प्रांतीय विधायिका के चुनाव 1937 में हुए चुनाव के बाद आठ प्रांतों में कांग्रेस की सरकार बनी। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने 1937 में त्यागपत्र दे दिया। इस तरह एम. गोविन्द राव और निर्विचार सिंह के अनुसार भारत सरकार अधिनियम 1935 ने संविधान सभा के लिए संविधान निर्माण की आधारशिला रखी।

नेहरू रिपोर्ट : संविधान के मसौदे का प्रथम भारतीय प्रयास

जैसा कि आपने पढ़ा होगा संविधान निर्माण में ब्रिटिश शासन के द्वारा विभिन्न अधिनियमों को शामिल करने का प्रयास किया गया। भारतीयों को इसमें कोई भूमिका नहीं थी। भारतीयों के द्वारा संविधान तैयार करने का प्रथम प्रयास 1928 में नेहरू रिपोर्ट में किया गया। इसके पूर्व 1921-22 में असहयोग आंदोलन के दौरान भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के नेताओं के द्वारा स्वराज के रूप में प्रयास किया गया।

नेहरू रिपोर्ट, मोतीलाल नेहरू के नाम पर तैयार की गयी जो मसविदा समिति के अध्यक्ष थे। मसविदा समिति का निर्णय अखिल भारतीय राजनीतिक दलों के सम्मेलन में लिया गया था। उन राजनीतिक दलों में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, स्वराज पार्टी और मुस्लिम लीग शामिल थी। मद्रास की जस्टिस पार्टी और पंजाब की यूनियनिस्ट पार्टी इसमें सम्मिलित नहीं थी। नेहरू रिपोर्ट ने सार्वभौमिक मताधिकार और केन्द्र एवं प्रांतों में जिम्मेदार सरकार की मांग की। इसने हालांकि प्रभुत्व शासन की माँग की न कि भारत को पूर्ण आजादी की। अर्थात् भारतीयों को केवल कुछ मामलों में कानून बनाने की आजादी थी ब्रिटिश सरकार के नियंत्रण में। इसके लिये नेहरू रिपोर्ट ने केन्द्र एवं प्रांतों के विषय की एक सूची तैयार की तथा मौलिक अधिकारों की सूची तैयार की। इसने पुरुष एवं महिलाओं के लिये सार्वभौमिक मताधिकार की माँग की। 1934 में, नेहरू रिपोर्ट के तैयार हो जाने के कुछ वर्षों के पश्चात् भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने आधिकारिक रूप से भारत के लोगों के लिए एक संविधान की माँग की जो भी बिना किसी बाहरी लोगों के हस्तक्षेप के।

प्रश्न 2. संविधान सभा का गठन क्यों आवश्यक था वर्णन कीजिए। संविधान सभा का गठन

उत्तर-

क्रिप्स मिशन-प्रारंभ में औपनिवेशिक शासकों ने भारत के संविधान निर्माण की माँग को ठुकरा दिया था। लेकिन बदलती हुई परिस्थितियों, द्वितीय विश्व युद्ध की आहट और ब्रिटेन में नई सरकार के गठन ने भारत में ब्रिटिश सरकार को नये संविधान निर्माण को मजबूर कर दिया। 1942 में ब्रिटिश सरकार ने अपना कैबिनेट सदस्य सर स्टैफोर्ड क्रिप्स को भारत भेजा। वे एक ड्राफ्ट प्रस्ताव लेकर आये थे जिसमें भारत के संविधान के गठन की बात थी। यह प्रस्ताव द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के पश्चात् लागू किया जाना था। लेकिन इसके लिये मुस्लिम लीग एवं कांग्रेस दोनों की सहमति आवश्यक थी। क्रिप्स मिशन के ड्राफ्ट प्रस्ताव में निम्न सिफारिशें थी - (1) भारत को प्रभुत्व (डोमिनियन) का दर्जा प्रदान करना (2) सभी प्रांत एवं राज्यों को मिलाकर भारतीय संघ का गठन करना (3) निर्वाचित संविधान सभा के द्वारा भारत के संविधान की रचना करना लेकिन जो प्रांत संविधान को स्वीकार करने को तैयार नहीं थे उन्हें अपनी वास्तविक स्थिति बरकरार रखने की छूट थी। इन प्रांतों को अलग संविधानिक प्रबंधों को अपनाने की छूट थी।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों ने ही क्रिप्स मिशन के प्रस्ताव को मानने से इनकार कर दिया। मुस्लिम लीग ने भारत को सांप्रदायिक आधार पर बाँटने की माँग की जिसमें उसने कुछ प्रांतों को स्वतंत्र पाकिस्तान राज्य बनाने की माँग की। उनकी माँग थी कि भारत और पाकिस्तान दोनों के लिए दो अलग-अलग संविधान सभा होनी चाहिए।

कैबिनेट मिशन-ब्रिटिश शासन ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस एवं मुस्लिम लीग के बीच मतभेदों को दूर करने के कई प्रयास किये। लेकिन वह असफल रही। ब्रिटिश सरकार ने कैबिनेट सदस्यों को... दूसरा प्रतिनिधित्व भेजा जिसे कैबिनेट प्रतिनिधित्व कहा गया तथा बाद में वह कैबिनेट मिशन योजना के रूप में सामने आया जिसमें तीन कैबिनेट मंत्री शामिल थे - (1) लॉर्ड पौथिक लारेस, (2) सर स्टैफोर्ड क्रिप्स एवं (3) ए. वी. अलैक्जेंडर। कैबिनेट मिशन भी कांग्रेस और मुस्लिम लीग को एक समझौते पर लाने में असफल रही। लेकिन इसने अपना एक प्रस्ताव तैयार किया जिसे 16 मई 1946 को इंग्लैंड और भारत में समान तौर पर घोषित किया। कैबिनेट प्रतिनिधित्व निम्न सिफारिशें की - ब्रिटिश इंडिया और राज्यों को मिलाकर एक भारत संघ होना चाहिए। इसके पास रक्षा, विदेश मामलें एवं संचार के विषयों पर कानून बनाने का अधिकार हो। बाकी अवशिष्ट अधिकार प्रांतों एवं राज्यों के पास होना चाहिए। संघ के पास कार्य प्रक्रिया एवं विधायिका होनी चाहिये। इसमें प्रांत एवं राज्यों के प्रतिनिधि होने चाहिये लेकिन अहम सांप्रदायिक मुद्दों पर विधायिका को निर्णय लेने का अधिकार है। इसमें उपस्थित सदस्यों के मत द्वारा बहुमत के आधार पर फैसला किया जाता है। प्रांतों को कार्यपालिका एवं विधायिका के साथ समूह बनाने की छूट थी। सभी समूह प्रांतों के विषयों को निर्धारित करने को आजाद है जो किसी समूह संगठन द्वारा उठाये गये हो।

संविधान सभा का चुनाव-कैबिनेट मिशन के प्रस्ताव के अनुसार संविधान सभा के चुनाव कराये गये जिसमें कांग्रेस और मुस्लिम लीग के सदस्यों को वापस लिया गया। संविधान सभा के सदस्यों का चुनाव प्रांतीय विधायी सभा द्वारा किया गया। कांग्रेस एवं मुस्लिम लीग के बीच कैबिनेट मिशन के समूह खंड के उपर विवाद दिखाई दिये। ब्रिटिश

सरकार ने इसमें दखल देकर स्थिति स्पष्ट की और बताया कि मुस्लिम लीग के तर्क सही थे। 6 दिसंबर, 1946 को ब्रिटिश सरकार ने एक विवरण प्रकाशित किया जिसमें दो विधान क्षेत्र एवं दो राज्यों की संभावना को उजागर किया। इसके परिणामस्वरूप, संविधान सभा की प्रथम बैठक 9 दिसंबर 1946 को बुलाई गयी उसका मुस्लिम लीग ने बहिष्कार किया और इसने मुस्लिम लीग की उपस्थिति के बिना कार्य किया।

प्रश्न 3. संविधान सभा के प्रतिनिधित्व की प्रकृति का विवरण प्रस्तुत कीजिए। संविधान सभा के प्रतिनिधित्व की प्रकृति

उत्तर-

प्रायः यह दलील दी जाती है कि संविधान सभा के अंतर्गत भारत के आम नागरिकों का प्रतिनिधित्व नहीं था। क्योंकि इसके प्रतिनिधि सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार से निर्वाचित नहीं हुए थे। बल्कि वे अप्रत्यक्ष रूप से समाज के विशिष्ट वर्गों द्वारा प्रतिबंधित निर्वाचन प्रक्रिया से चुने गये थे। ये विशिष्ट वर्ग शिक्षित और आयकर अदा करने वाले थे। ग्रेनाविल ऑस्टिन के अनुसार इसका प्रमुख कारण क्विनेट मिशन योजना की रणनीति थी ताकि संविधान निर्माण की प्रक्रिया की गति को धीमा होने से बचाया जा सके। कैबिनेट मिशन ने संविधान सभा में अप्रत्यक्ष चुनाव का प्रावधान किया। इसका चुनाव प्रांतीय विधायिका के सदस्यों द्वारा किया गया। कांग्रेस ने इस प्रस्ताव को मान लिया ताकि संविधान सभा के चुनाव वयस्क मताधिकार से हो सके। प्रतिबंधित वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचित होने के बावजूद संविधान सभा के अंतर्गत सभी धर्मों एवं वर्गों की राय को संविधान सभा में प्रतिनिधित्व मिला। ऑस्टिन ने यह दावा किया कि संविधान सभा में यद्यपि कांग्रेसका बहुमत था फिर भी यह विश्वास था कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को सामाजिक एवं वैधानिक स्तर पर विविधताओं का प्रतिनिधित्व करना चाहिये। उनकी यह भी नीति थी कि संविधान सभा में विभिन्न अल्पसंख्यक समुदाय के दृष्टिकोण को महत्व दिया जाये। संविधान सभा में विभिन्न विचारधाराओं के सदस्य थे तथा तीन धार्मिक समुदाय के सदस्य भी सिख, मुस्लिम, हिन्दु एवं पारसी इत्यादि थे। के सान्त्वाराम के शब्दों में कोई ऐसी विचारधारा नहीं थी जिसका कि विधानसभा में प्रतिनिधित्व न हो (देखें ऑस्टेन, 2012, पेज नं. 13, फुट नोट 48)। संविधान सभा के ज्यादातर सदस्य भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्य थे। इनमें एक दर्जन से अधिक गैर कांग्रेसी सदस्य भी शामिल थे। उनमें से कुछ इस प्रकार हैं:- ए के अय्यर, एच. एन. कुन्जरु, एन. जी. आयंगर, एस. पी. मुखर्जी, और डा. बी आर अम्बेडकर एस. पी. मुखर्जी हिन्दू महासभा के प्रतिनिधि थे। संविधान सभा में देशी राज्यों के प्रतिनिधि भी शामिल थे। यहाँ पर यह समझने की जरूरत है कि डा. अंबेडकर पहली बार बंगाल से अनुसूचित जाति संघ से संविधान सभा में चुनकर आये थे। लेकिन वे बंगाल के विभाजन के कारण इस सीट से चुनाव हार गये और वे फिर से बंबई नेशनल कांग्रेस से चुने गये। वे कांग्रेस हाई कमान के निवेदन के पश्चात् चुनकर आये थे। संविधान सभा को सभी व्यक्तियों का ध्यान रखना था चाहे वे किसी भी सामाजिक और सांस्कृतिक जुड़ाव से क्यों न हो। संविधान में किसी भी प्रावधान को शामिल करने हेतु संविधान सभा में काफी विचार-विमर्श हुआ। इस प्रकार संविधान सभा के सदस्य अपनी कमजोरियों को दूर कर सकते थे क्योंकि वे प्रतिबंधित मताधिकार से चुनकर आये थे। आप इकाई संख्या तीन में संविधान की प्रस्तावना के बारे में पढ़ेंगे, संविधान सभा ने संविधान में लोकतांत्रिक मूल्यों को शामिल करने का प्रयास किया।

संविधान सभा ने हमारे संविधान में विश्व के विभिन्न संविधानों से कई प्रकार के प्रावधान अपनाने की कोशिश की। ऑस्टिन का तर्क था कि संविधान सभा ने अन्य देशों से लिये गये प्रावधानों को भारत के संदर्भ में अपनाने की कोशिश की।

संविधान सभा के ज्यादातर सदस्यों ने इसकी कार्यवाही में हिस्सा लिया। लेकिन इनमें से 20 ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने इसमें अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनमें से कुछ 10 व्यक्ति इस प्रकार हैं :- राजेन्द्र प्रसाद, मौलाना आजाद, वल्लभ भाई पटेल, जवाहर लाल नेहरू, गोविन्द वल्लभ पंत, पी. सी. राय, ए. के. अय्यर, एन. जी. आयंगर, के. एम. मुन्शी, डा. आर. अम्बेडकर और सत्यनारायण सिन्हा। हालांकि संविधान सभा ही एक ऐसा मंच था जिसमें सारी कार्यवाही हुई एवं बर्तालाप हुआ लेकिन इसके अलावा तीन अन्य निकाय थे जिसमें भी विचार-विमर्श हुआ। ये तीन निकाय थे, संविधान सभा, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस तथा अंतरिम सरकार। संविधान सभा के कुछ सदस्य अन्य निकायों के भी सदस्य थे। ऑस्टिन का मानना था कि संविधान में चार ऐसे लोग थे जिनका पूरी सभा में आधिपत्य था, तथा वे सभा में सबसे सम्मानीय एवं इज्जतदार लोग थे। ये चार व्यक्ति थे - नेहरू, पटेल, प्रसाद एवं आजाद। उनकी संविधान सभा की कार्यवाही में अहम भूमिका थी। इनमें कुछ सरकार, कांग्रेस पार्टी एवं संविधान सभा में थे। प्रसाद संविधान सभा के अध्यक्ष बनने से पूर्व कांग्रेस पार्टी के भी अध्यक्ष थे। जबकि पटेल एवं नेहरू दोनों ही प्रधानमंत्री और उप प्रधानमंत्री थे। वे संविधान सभा की आंतरिक समिति के हिस्सा थे। संविधान सभा की एक प्रारूप समिति थी जिसने संविधान के प्रारूप को तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। डा. अम्बेडकर के इस कार्य की सराहना करने हुए टी. टी. कृष्णामाचारी जो इस समिति के सदस्य थे उन्होंने एक भाषण के दौरान ये बातें कही :-

‘आप सभी को शायद मालूम होगा कि सदन ने सात सदस्यों को मनोवृत्ति किया जिसमें से एक सदस्य ने इस्तीफा दे दिया। एक सदस्य की मृत्यु हो गयी। एक सदस्य अमेरिका में थे तथा एक और अन्य सदस्य राज्य के कार्यों में व्यस्त थे। एक या दो व्यक्ति दिल्ली से काफी दूर थे तथा उनका स्वास्थ्य भी उन्हें बैठक में आने से रोक रहा था। आखिरकार संविधान के प्रारूप को तैयार करने का भार डा. अम्बेडकर के कंधों पर आ गया। और मुझे इसमें कोई संदेह नहीं कि उन्होंने इस कार्य को बखूबी पूरा किया जो कि सराहनीय है।’ डा. अम्बेडकर ने अपनी तरफ से श्रेय एस. इसका एन. मुकजी, बी.एन. राव और उनके असिस्टेंट को दिया जो प्रारूप समिति के अफसर थे। डॉ. अम्बेडकर के अनुसार मुकजी ने संविधान को अच्छे शब्दों में व्यक्त किया था।

प्रश्न 4. भारतीय संविधान सभा की वैचारिक और दार्शनिक पृष्ठभूमि क्या थी? चर्चा कीजिए।

उत्तर-

संविधान सभा के सदस्यों में समाज के सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व था। इसके अंदर सभी बड़े राजनीतिक दलों के नेताओं को भी शामिल किया गया था। भारतीय संविधान के वैचारिक सिद्धांतों का आधार उनके सदस्यों की वैचारिक एवं दार्शनिक पृष्ठभूमि का होना था। संविधान सभा में विभिन्न वैचारिक और सामाजिक पृष्ठभूमि के सदस्य शामिल थे। फ्रेनविल ऑस्टिन ने अपनी किताब डॉ. इन्डियन कांस्टीट्यूशन कार्नेस्टोन ऑफ ए नेशन

(भारतीय संविधान: राष्ट्र की आधारशिला) में सभी सदस्यों का जीवन चरित्र प्रस्तुत किया है। इसमें उनकी दलिय संबंध, उनकी जाति एवं समुदाय का संबंध तथा उनके क्षेत्र का भी जिक्र है। यद्यपि उनके अंदर मतभेद थे फिर भी संविधान के प्रावधान उनके विचारों का संरलेपण है। ये विचार काफी गंभीर चर्चा के बाद उभर कर सामने आये थे। माधव खोसला ने अपनी पुस्तक इन्डियन कांस्टीट्यूशन (भारतीय संविधान (2012)) में यह अवलोकन किया कि संविधान में बौद्धिक विविधता का समावेश एवं प्रतिनिधित्व था। यहां तक कि उनके भीतर मतभेद होने के बावजूद, संविधान सभा के सदस्य विचार-विमर्श करने के पश्चात् आम सहमति पर पहुँच गये। वास्तव में संविधान सभा ने किसी खास समुदाय के हितों की अनदेखी नहीं की थी। संविधान के सदस्यों के अंदर केन्द्रिय आकृति का भाव था।

फ्रेनविल ऑस्टिन के शब्दों में संविधान सभा के चार सदस्यों का संविधान सभा के अंदर आधिपत्य था। ये सदस्य थे, मौलाना आजाद, जवाहर लाल नेहरू, वल्लभ भाई पटेल और राजेन्द्र प्रसाद। उन्होंने संविधान सभा में अपनी अहम भूमिका निभाई थी। बी. एन. राव संविधान सभा के सदस्य नहीं थे फिर भी उन्होंने संविधान सभा सलाहकार की भूमिका निभाई थी। उन्हें पश्चिमी संविधानों की परंपरा का अभ्यास था। संविधान सभा ने गाँधीवादी विचारों को निरस्त कर दिया था। उन्होंने कांग्रेस को नये रूप में देखा और भारतीय राजनीतिक जीवन में पंचायतों को केन्द्र माना। गाँधीवादी और हिन्दू राष्ट्रवादी चाहते थे कि संविधान में हिन्दू धार्मिक मूल्यों को शामिल किया जाये। लेकिन ये निरस्त कर दिये गये। संविधान को संशोधित किया जा सकता है। लेकिन इसके मूल ढांचे को नहीं बदला जा सकता है। कुल मिलाकर, संविधान में वैचारिक आधार इसके केन्द्र बिंदु है। लोकतांत्रिक मूल्य, व्यक्ति एवं समूह अधिकार, अधिकारों का संविधानिक गणना, सार्वभौम मताधिकार संसदीय लोकतंत्र शक्तियों का विभाजन, केन्द्र और राज्यों के बीच शक्तियों का बंटवारा संविधानिक अधिकारों जैसे समानता के अधिकार की गारंटी देना इत्यादि संविधान के अंतर्भाव हैं।

जैसा कि आप इकाई संख्या 3 में पढ़ेंगे, संविधान सभा में कुल 15 समितियाँ थीं जिसमें 80 से अधिक व्यक्तियों की सदस्यता भी शामिल थी। इन समितियों ने अपनी रिपोर्ट 1947 में अप्रैल और अगस्त में सौंप दी थी जिनपर संविधान सभा ने विचार किया। इन निर्णयों के आधार पर संविधान के अंतिम आकार एवं रूप डा. अम्बेडकर ने दिया जो कि ड्राफ्टिंग कमेटी के अध्यक्ष थे। संविधान के मसौदे को संविधान सभा में पेश किया गया तथा इसे 4 नवंबर 1948 को चर्चा के लिए रखा गया। संविधान सभा ने 17 अक्टूबर 1949 के इस पर दुबारा अध्ययन किया। करीब 7635 संशोधन लागे गये जिनमें 2473 पर चर्चा की गयी। संविधान सभा ने अंत में 26 नवंबर 1949 को औपचारिक रूप से संविधान को मंजूरी दी तथा उसी दिन अध्यक्ष ने हस्ताक्षर करके इसे पारित करने की घोषणा की। 24 जनवरी 1950 को संविधान सभा का अंतिम सत्र बुलाया गया और डा. राजेन्द्र प्रसाद को भारत का प्रथम राष्ट्रपति चुना गया। संविधान 26 जनवरी, 1950 को औपचारिक रूप से लागू किया गया। भारतीय संविधान में जो संविधान सभा ने पारित किया उस समय उसमें, 395 अनुच्छेद एवं 8 अनुसूचियाँ थीं।

संविधान निर्माताओं ने संविधान सभा को एक दूरदर्शी संस्था माना था। यह केवल प्रतिनिधि संस्था ही नहीं थी बल्कि इसमें उन लोगों का प्रतिनिधित्व था जो भविष्य के विषय में

सोचते थे। इसका कार्य केवल संविधान का निर्माण करना ही नहीं था बल्कि राजनीतिक एवं सामाजिक ढाँच के इतिहास पर प्रकाश डालना तथा नई सरकार के गठन को प्रयास करना था। जवाहर लाल नेहरू ने संविधान सभा के बारे में कहा कि इसने लोगों के दिमाग में एक मनोवैज्ञानिक क्रांति पैदा की थी। यह स्वतंत्रता आंदोलन के तमाम मुद्दों को नारों, से बदलकर हकीकत में लाना था तथा यह संविधान की रचना की विधि और प्रक्रिया दोनों ही थी।

प्रश्न 5. संविधान सभा के दार्शनिक आधारभूत सिद्धान्त क्या थे? वर्णन कीजिए।

उत्तर- **भारत की संविधान सभा का दर्शन**

दर्शन का अर्थ है दृष्टिकोण जो कि कार्यप्रणाली में प्रतिबिम्बित हुआ था। भारत के संविधान के निर्माण का कार्य संविधान सभा को सौंपा गया था। संविधान सभा के अंदर राजनीतिक और कानूनी विद्वान मौजूद थे। ये सभी सदस्य अपनी व्यक्तिगत विचारधारा को संविधान निर्माण में सभा योजना करने को उत्सुक थे। इसलिए लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद, समानता न्याय एवं स्वतंत्रता जैसे सिद्धांतों को भारतीय संविधान में जगह दी गयी और ये सभी सिद्धांत भारत के संविधान के अहम बिंदु माने गये थे जो संविधान सभा ने बनाये थे। जैसे आप इकाई 2 से 5 में पढ़ोगे, भारतीय संविधान की मुख्य विशेषताएं इसकी प्रस्तावना मूल अधिकारों एवं राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों में दिए गए हैं। संविधान के दार्शनिक आधार बनाने में संविधान सभा के अन्य सदस्यों के साथ-साथ जवाहरलाल नेहरू, डा. बी. आर. अम्बेडकर, वल्लभ भाई पटेल ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। ग्रेनविल ऑस्टिन ने अपनी पुस्तक 'भारतीय संविधान राष्ट्र की आधारशिला (1976)' में यह टिप्पणी की कि 'पटेल की रूचि देशी रियासतों में थी, लोक सेवाओं और ग्रह मंत्रालय के कार्य से थी, जबकि नेहरू की रूचि मूल अधिकार, अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा तथा संविधान के सामाजिक सुधार पहलू पर अधिक था। भारत की संविधान सभा के दार्शनिक आधार निम्न हैं।

(क) **संप्रभुता**—जब संविधान निर्माताओं ने भारत की राजनीतिक भविष्य के बारे में सोचा तो उन्होंने सबसे ज्यादा भारत की संप्रभुता के बारे में सोचा था। भारत को संप्रभु बनाना उनके लिए महत्वपूर्ण था और सर्वोच्च शक्ति को उन्होंने लोगों में निहित की थी। केन्द्र एवं राज्यों के सभी अंग तथा कार्यप्रणाली केवल भारत के लोगों से ही शक्ति ग्रहण करते हैं।

(ख) **लोकतांत्रिक मूल्य**—संविधान निर्माताओं ने इस सिद्धांत को भी बहुमूल्य माना था क्योंकि लोकतंत्र या लोकतांत्रिक मूल्य देश को मजबूती प्रदान करते हैं तथा सभी लोगों की आवाज को समान महत्व देते हैं।

(ग) **आम सहमति से निर्णय लेना**—ग्रेनविल ऑस्टिन के अनुसार आम सहमति की अवधारणा संविधान सभा में आम बात थी। नेतृत्व के लिए यह बहुत महत्वपूर्ण है कि वह किसी नतीजे पर पहुँचने से पहले आम सहमति से निर्णय ले क्योंकि यह तार्किक एवं प्रभावी रास्ता माना जाता है किसी समझौते को अंतिम रूप देने के लिए। यह सिद्धांत भी भारतीय संविधान की रचना के लिये सबसे उपयुक्त था। सबसे अधिक आम सहमति शायद संघीय प्रावधान एवं भाषायी प्रावधानों में देखने को मिली है।

(घ) **समायोजन का सिद्धांत**—ग्रेनविल ऑस्टिन के अनुसार, संविधान निर्माण में भारत का मूल योगदान इसके समायोजन का सिद्धांत था। अर्थात् जाहिर तौर पर असंगत

अवधारणाओं में सामंजस्य करने की क्षमता। इसने संघीय एवं एकल व्यवस्था के बीच सामंजस्य वैठाया, राष्ट्रमंडल एवं रिपब्लिक सरकारों की सदस्यता के बीच सामंजस्य तथा मजबूत केन्द्र सरकार के साथ-साथ पंचायती राज व्यवस्था के प्रावधानों के सामंजस्य की दहाई देना।

(ङ) **चयन एवं परिवर्तन की कला**—संविधान सभा केवल अनुकरणात्मक नहीं थी। विभिन्न राजनीतिक व्यवस्थाओं से लिये गये प्रावधानों को संविधान सभा ने भारतीय स्थिति के साथ अनुकूल बनाने के लिये प्रयास किये। चयन एवं परिवर्तन का सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण, ऑस्टिन के अनुसार संविधान में संशोधन की विधि था। इसने संविधान को लचीला बनाया तथा राज्यों के अधिकारों की भी रक्षा की थी। किसी अन्य देश में संशोधन की प्रक्रिया हमारे देश से अच्छी नहीं है क्योंकि यहाँ संघवाद और ब्रिटिश संसदीय व्यवस्था दोनों संविधान का आधार स्वरूप हैं।

(च) **मूल अधिकार**—विशेष रूप से वल्लभ भाई के कारण मूल अधिकारों को संविधान में न्यायोचित बनाया गया है और ये अधिकार आधुनिक लोकतांत्रिक व्यवस्था में लोगों के जीवन का आधार माने जाते हैं। अधिकारों की वजह से ही सभी नागरिक स्वतंत्र रूप से विचरण कर सकते हैं।

(छ) **धर्मनिरपेक्ष राज्य**—धर्मनिरपेक्षता का सिद्धांत यह सिद्धांत है जो कि भारत के नागरिकों के लिए पूर्ण रूप से अधिकारों का इस्तेमाल करने के लिये हैं। धर्म-निरपेक्षता के सिद्धांत को संविधान सभा में काँग्रेस के एक वर्ग ने स्थापत्य किया था, जिनका मानना था कि भारत को एक धर्म-निरपेक्ष राज्य होना चाहिये।

(ज) **समाजवाद**—वल्लभभाई पटेल के प्रभाव के कारण ही हमारे संविधान में समाजवाद के सिद्धांतों को जगह दी गयी। यह पहले कभी नहीं था जैसा कि वर्तमान संविधान में है।

(झ) **अल्पसंख्यकों के लिए आरक्षण**—समायोजन के सिद्धांत से संबंधित प्रावधान के समानांतर ही संविधान सभा ने समाज के अल्पसंख्यक तबकों के लिए आरक्षण की व्यवस्था करने का प्रावधान किया था। संविधान सभा की दो महिला सदस्यों ने इस सिद्धांत को बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। इनमें अमृत कौर तथा बेगम एजाज रसूल प्रमुख थी जिन्होंने यह कहा कि सभी अल्पसंख्यक वर्ग भारत के आंतरिक भाग हैं उन्हें आरक्षण की जरूरत है ताकि उनके अधिकारों की रक्षा की जा सके।

(ञ) **वयस्क मताधिकार**—संविधान सभा ने वयस्क मताधिकार को एकदम सही माना था। राजेन्द्र प्रसाद और जवाहर लाल नेहरू दोनों महत्वपूर्ण सदस्य थे जिन्होंने वयस्क मताधिकार का समर्थन किया था तथा सभी नागरिकों को वोट का अधिकार देकर अपने प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया।

प्रश्न 6. भारतीय संविधान की प्रस्तावना की पृष्ठभूमि संव आधारतत्त्वों की विवेचना कीजिए।

उत्तर—

वस्तुनिष्ठ संकल्प

संविधान सभा में जो लक्ष्य एवं उद्देश्यों के उपर चर्चा की गयी उन्हें पहली बार जवाहर लाल नेहरू ने 'वस्तुनिष्ठ संकल्प' (Objectives Resolution) के रूप में तैयार किया था।

संविधान सभा में इसे जवाहरलाल नेहरू ने प्रस्तुत किया तथा पुरुषोत्तम दास टंडन ने उनका समर्थन किया। संविधान सभा में चर्चा के बाद अधिकतर वस्तुनिष्ठ संकल्पों को प्रस्तावना के रूप में स्वीकार कर लिया गया था। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि वस्तुनिष्ठ संकल्पों को संविधान सभा ने अपनी बहस में शुरू में ही स्वीकार कर लिया था, लेकिन इन्हें प्रस्तावना में अंत में रूपांतरित किया गया। इन वस्तुनिष्ठ संकल्पों का उद्देश्य था संविधान सभा को कुछ इशारा देना कि उसके सदस्य क्या करना चाहते हैं, वे क्या प्राप्त करना चाहते हैं, तथा वे कहाँ जा रहे हैं।

वस्तुनिष्ठ संकल्पों का प्रमुख लक्ष्य था एक ऐसे संविधान का निर्माण करना जिसे संविधान सभा ने अपनी बहस एवं चर्चा के बाद तैयार किया था। वस्तुनिष्ठ संकल्पों का एक मात्र उद्देश्य लोगों को यह शपथ दिलाना था कि वे अपने भविष्य के निर्माता स्वयं ही हैं। इन संकल्पों ने भारत के संविधान के भविष्य के लिए कुछ मौलिक सिद्धांतों की आधारशिला रखी थी। इनमें सबसे प्रमुख था, 'संप्रभु भारतीय गणराज्य'। वास्तव में यह पहली बार था जब संकल्पों के अंदर 'गणराज्य' की अवधारणा का प्रयोग किया गया। जब इन संकल्पों को संविधान सभा में लाया गया तब राज्यों के प्रतिनिधि इसमें उपस्थित नहीं थे तथा मुस्लिम लीग ने इसका बहिष्कार भी किया था। लेकिन नेहरू ने यह कहा कि उनकी अनुपस्थिति के बावजूद भी 'गणराज्य' में पूरे भारत को शामिल किया जायेगा।

वस्तुनिष्ठ संकल्पों का महत्व

जवाहर लाल नेहरू के शब्दों में वस्तुनिष्ठ संकल्प का उद्देश्य 'यह संदेश देना था कि हमने क्या करने का संकल्प किया है।' और संविधान में सभा में चर्चा के बाद हमें एक संविधान का निर्माण करना है, 'चाहे किन्हीं शब्दों में, इसे हम बाद में देख लेंगे' (संविधान सभा बहस, खण्ड 1, दिसम्बर 13, 1946)। और आखिर चर्चा के बाद करीब तीन वर्षों में संविधान सभा संविधान को बनाने में सफल रही, जैसा कि इकाई संख्या एक में दिया गया है। यह 26 जनवरी 1950 को लागू किया गया था। संविधान को बनाने के बाद संविधान ने इसके प्रस्तावना का मसौदा भी तैयार किया था। इस प्रस्तावना में वस्तुनिष्ठ संकल्पों की समानता देखने को मिलती है। संविधान सभा में 9 दिसंबर, 1946 के आरम्भ होने के पांच दिन बाद ही वस्तुनिष्ठ संकल्पों को 13 दिसंबर, 1946 संविधान सभा में प्रस्तुत किया गया था।

वस्तुनिष्ठ संकल्पों ने कुछ मौलिक सिद्धांतों की पहचान की थी जो संविधान के ढांचे के लिए दिशा निर्देश थे। ये सिद्धांत ही हमारे राजनीतिक व्यवस्था के चरित्र की आधारशिला रखेंगे तथा इनका मुख्य उद्देश्य संविधान में व्यवस्थित ढांचे की रचना करना था। इन सिद्धांतों ने ही हमारी राजनीतिक व्यवस्था का चरित्र, उसकी क्षेत्रीय सीमा, इकाईयों के बीच शक्तियों का बंटवारा, सभी शक्तियों का स्रोत आम जनता, सभी को सामाजिक न्याय प्रदान करना, तथा अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा करना जैसे सिद्धांतों की आधारशिला रखी थी।

इन आधारभूत सिद्धांतों को वस्तुनिष्ठ संकल्पों में दिया गया है। खंड 1, संविधान सभा की बहस ये इस प्रकार है:-

(1) संविधान सभा इस बात का संकल्प लेती है कि भारत एक स्वतंत्र संप्रभु गणराज्य होगा तथा इसके शासन के लिए एक संविधान होगा।

(2) जिसमें, जो क्षेत्र अब ब्रिटिश भारत का है वो भारत के राज्यों का होगा, तथा वे भाग जो ब्रिटिश भारत से अलग हैं वे भी इसके भाग होंगे और यह स्वतंत्र संप्रभु भारत गणराज्य होगा, तथा यह सभी का संघ होगा।

(3) जिसमें, जो भी क्षेत्र हैं, उनका निर्धारण संविधान सभा करेगी तथा बाद में उसका निर्णय संविधान के कानून के अनुरूप होगा, ये सभी स्वायत्त इकाइयाँ होंगी, तथा इन्हें अवशिष्ट शक्तियाँ भी प्राप्त होंगी, तथा प्रशासन के सभी कार्यों को करेगी, तथा जो कार्य संघ के अधीन आते हैं उनको छोड़कर सभी कार्य करेगी।

(4) जिसमें, सभी शक्तियाँ चाहे वो संप्रभु भारत गणराज्य हो या सरकार का कोई भी अंग हो सभी शक्तियाँ भारत के लोगों से प्राप्त होंगी। जनता सभी शक्तियों की मालिक होगी।

(5) जिसमें, सभी नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय की गारंटी होगी, पद की समानता होगी, सभी को समान अवसर प्रदान किये जायेंगे, तथा कानून समक्ष सभी समान होंगे, सभी को सोचने बोलने विश्वास करने, पूजा करने, संगठन बनाने की आजादी होगी लेकिन यह कानून एवं नैतिकता के तहत होगी।

(6) जिसमें, अल्पसंख्यकों को उचित सुरक्षा प्रदान की जायेगी, तथा पिछड़े आदिवासी इलाकों, एवं वंचित वर्गों की भी सुरक्षा की जायेगी।

(7) जिसमें, भारत गणराज्य की एकता एवं अखंडता कायम की जायेगी तथा इसकी जमीन, समुद्र, हवा की रक्षा की जायेगी जो कि कानून सम्मत होगी एवं सभ्य राष्ट्रों की तरह होगी।

(8) यह प्राचीन धरती विश्व में अपना उचित एवं सम्मानीय स्थान रखती है तथा यह विश्व में शांति एवं मनुष्यों के कल्याण में अपना योगदान देने का उत्सुक है।

वस्तुनिष्ठ संकल्पों ने लोकतांत्रिक शब्द का इस्तेमाल नहीं किया था। इसके बारे में जवाहरलाल नेहरू ने अपने संकल्पों में गणराज्य शब्द का जिक्र किया था जो कि 'लोकतंत्र' का ही दूसरा रूप है। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि आधार तत्वों में न केवल लोकतंत्र का समावेश है बल्कि इसके अंदर आर्थिक लोकतंत्र का समावेश भी है। नेहरू ने यह महसूस किया कि इन आधार-तत्वों में समाजवादी राज्य का भी जिक्र नहीं है। जिसके उपर भी विरोध हो सकता है। इस पर उन्होंने कहा कि भारत समाजवादी राज्य की तरफ बढ़ रहा है, और समाजवाद का रूप इस बात पर निर्भर करता है हमारी बहस एवं विचार-विमर्श की प्रवृत्ति क्या होगी।

इन आधार-तत्वों को संविधान के भाग में शामिल किया जाना था जिसे संविधान सभा को करना था। लेकिन यह संविधान सभा के सदस्यों पर बाध्य नहीं था। उन्हें संविधान की रचना करने की पूरी आजादी थी। इन संकल्पों में केवल सिद्धांत हो दिये गये थे।

प्रश्न 7. प्रस्तावना का मूल पाठ क्या है? इसके विकास का क्रम भी बताइये।

उत्तर-

प्रस्तावना : मूल पाठ

संविधान की प्रस्तावना का मूल पाठ यहाँ दिया गया है :-

प्रस्तावना

हम, भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को :

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपसना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए, तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए बृहत्संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवम्बर 1949 ई. (मिति मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी, संवत् दो हजार छह विक्रमी) को एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।

जिन महत्वपूर्ण सदस्यों ने प्रस्तावना की बहस में हिस्सा लिया वे इस प्रकार थे :- मौलाना हसरत मोहानी, के. एम. मुंशी, एच. बी. धामस, पूर्णिया बनज, रोहिणी कुमार चौधरी और प्रोफेसर सिब्वनलाल सक्सेना। संविधान सभा ने प्रस्तावना के विभिन्न पहलुओं की चर्चा की। संविधान सभा से खंड 10 में विभिन्न सदस्यों के तर्कों को दिया गया है। उनमें प्रमुख बिन्दुओं को संविधान की प्रस्तावना में भी जगह दी गयी है। उदाहरण के लिए, मौलाना हसरत मोहानी 'संपन्न लोकतांत्रिक गणराज्य धर्मनिरपेक्ष' की जगह प्रभुत्व संपन्न 'संघीय गणराज्य बनाना चाहते थे या प्रभुत्व संपन्न स्वतंत्र गणराज्य' या फिर भारत को 'भारतीय गणराज्य बनाना चाहते थे या प्रभुत्व संपन्न स्वतंत्र गणराज्य बनाने की बात करते थे। एच. बी. कामथ चाहते थे कि 'दृढ़ संकल्प' के स्थान पर 'ईश्वर के नाम पर' शब्द होना चाहिए, जबकि रोहिणी कुमार चौधरी चाहते थे कि इन शब्दों के स्थान पर 'देवी के नाम पर' होना चाहिए। इन संशोधनों एवं सुझावों को संविधान सभा ने अस्वीकार कर दिया था। संविधान में प्रस्तावना को विभिन्न पहलुओं पर चर्चा करने के बाद जोड़ा गया था। बहस के अंत में डा. राजेन्द्र प्रसाद ने यह प्रश्न कि प्रस्तावना संविधान का हिस्सा है पर वोट देने के लिए सभा में प्रस्तुत किया।

यह सवाल प्रायः उठाया जाता है कि प्रस्तावना संविधान का भाग है या नहीं। इस सवाल के जवाब में दो अंतर्विरोधी उत्तर दिये गये थे। पहला 1966 का बेरुबरी मामला जिसमें कहा गया कि प्रस्तावना संविधान का हिस्सा नहीं है। जबकि दूसरा केस 1973 का केशवानंद भारती केस, जिसमें यह कहा गया संविधान की प्रस्तावना संविधान का हिस्सा है। इसने बेरुबरी केस के निर्णय को पलट दिया था जिसमें संविधान की प्रस्तावना को इसका भाग मानने से इंकार कर दिया था। केशवानंद भारती केस के मामले में यह भी निर्णय दिया कि संसद संविधान के किसी भी भाग में संशोधन कर सकती है बशर्ते कि इसके मूल ढांचे का उल्लंघन न किया गया हो। इस प्रकार संविधान के अनुच्छेद 368 के अनुसार, संसद ने 42वें संविधान संशोधन अधिनियम के तहत संविधान की प्रस्तावना में धर्मनिरपेक्ष, समाजवादी तथा अखंडता शब्दों को शामिल किया गया था। सर्वोच्च न्यायालय ने बोम्मई केस में 1994 जिसमें राष्ट्रपति को राज्य सरकारों को बर्खास्त करने का अधिकार दिया गया है, इसमें भी धर्मनिरपेक्ष शब्द की चर्चा की गयी है। इस निर्णय में यह कहा गया कि, 'हम यह नहीं जानते कि संविधान में किस तरह से संशोधन किया जा सकता है ताकि इसके मूल ढांचे से धर्मनिरपेक्षता को हटाया जा सके। ना ही हम यह जानते हैं कि संविधान अपने आप को समाप्त करने का कोई तरीका प्रदान करता है। अखिल भारतीय रिपोर्टर 1994, खंड 243, (राज 2015) में उद्धरण आधार तत्वों पर बहस संविधान सभा बहस, खंड 1 में नेहरु ने अपने भाषण में कहा कि मूलतः संविधान की प्रस्तावना संविधान का हिस्सा नहीं होगी। जैसा पहले कहा गया है, संविधान सभा अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने प्रस्तावना के ड्राफ्ट को संविधान

सभा के पट पर के चुनाव के लिए प्रश्न रखा था कि प्रस्तावना संविधान का हिस्सा है। केशवानंद भारती केस ने इस सवाल को समाधान किया और तब से यह संविधान का हिस्सा है। 1995 में, जीवन बीमा केस में, फिर से सर्वोच्च न्यायालय ने यह पुष्टी की कि प्रस्तावना संविधान का ही भाग है।

समाजवादी, 'धर्मनिरपेक्षता' और 'और अखंडता संविधान की प्रस्तावना में
संविधान की मूल प्रस्तावना में 'समाजवाद', 'धर्मनिरपेक्षता' और 'और अखंडता' नहीं दिये गये थे। संविधान निर्माताओं ने इन शब्दों को संविधान में शामिल करने की जरूरत को महसूस नहीं किया क्योंकि संविधान के अंदर विभिन्न प्रावधान ऐसे हैं जो कि संविधान को धर्मनिरपेक्ष दस्तावेज की संज्ञा देते हैं तथा इनसे समाजवाद को प्राप्त किया जा सकता था। लेकिन इन अवधारणाओं को 1976 में संविधान के 42वें संशोधन के बाद संविधान की प्रस्तावना में शामिल कर लिया गया था।

प्रश्न 8. भारतीय संविधान के व्याख्या कीजिए।

उत्तर- भारतीय संविधान का स्वरूप

भारत राज्य के प्रमुख लक्षण निम्नलिखित हैं जो स्वयं इस की प्रकृति को उजागर करते हैं।

(i) उदारवादी लोकतांत्रिक राज्य: उदारवादी लोकतांत्रिक राज्य का माडल एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था की ओर इंगित करता है जिसमें लोकतंत्र अथवा लोगों का शासन अपने वास्तविक अर्थ में शासन को वैध बनाने हेतु कार्य करता है। सरकार रूपी मशीनरी को लोगों द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि चलाते तथा अपनी नीतियों और कार्यों के लिए लोगों के प्रति जवाबदेह होते हैं। उदारवादी लोकतांत्रिक राज्य इस धारणा पर आधारित है कि सरकार अपने आप में कोई अंतिम लक्ष्य नहीं है अपितु यह अधिकाधिक लोगों के अधिकाधिक लाभ को अनुभूत करने का एक माध्यम है। इसके अतिरिक्त सरकार के प्राधिकार निरपेक्ष नहीं हैं अपितु कानूनों द्वारा सीमित कर दिए गए हैं।

इन सब बातों से हमें ज्ञात होता है कि भारत एक उदारवादी लोकतांत्रिक राज्य को सभी शर्तों को पूरा करने के लिए प्रतिबद्ध है। यह ठीक ही कहा गया है कि भारतीय संविधान सार्वभौमिक व्यस्क मताधिकार, आवधिक चुनाव प्रतिनिधियात्मक और उत्तरदायी सरकार, स्वतंत्र न्यायापालिका, कानून का शासन और शक्तियों के विभाजन का प्रावधान करता है।

(ii) संघीय राज्य: महात्मा गांधी ने भारतीय सन्दर्भ में शक्तियों के विकेन्द्रीकरण की चर्चा की थी। आर्थिक विकास और सामाजिक परिवर्तन की सभी शक्तियां राज्य में निहित हैं। राज्य को कृषि तथा औद्योगिक क्षेत्र में विकास की बहुत शक्तियां प्राप्त हैं। रजनी कोठारी के शब्दों में 'शक्तिशाली और एकात्मक राज्य की विचारधारा और व्यक्तिपूजा ने देश को केंद्रीकृत बना दिया है।

(iii) कल्याणकारी राज्य: भारतीय संविधान के निर्माताओं ने भारत को कल्याणकारी राज्य बनाने के लिए अनेक प्रावधान किए हैं। एक कल्याणकारी राज्य के मूल उद्देश्यों को स्पष्टतया संविधान की प्रस्तावना में शामिल किया गया और वस्तुतः संविधान के भाग छ के सभी प्रावधानों, जिनमें राज्य के नीति निदेशक सिद्धान्त भी सम्मिलित हैं, में भी शामिल किया गया। अनुच्छेद 38 के अनुसार 'राज्य लोगों के कल्याण के लिए एक ऐसी सामाजिक

व्यवस्था को रक्षित एवं संरक्षित करेगा जिसमें राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाएं सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय सुनिश्चित करेगी।

(iv) जाति आधारित समाज प्राचीन सभ्यता के प्रारम्भ से ही हमारे पूर्वज वंशानुगत सामाजिक संगठन की व्यवस्था को विकसित कर के व्यवहार में लाते रहे हैं जो भारतीय सामाजिक संरचना का मूल आधार है। जाति की व्यवस्था जन्म के साथ ही किसी व्यक्ति का स्थान निर्धारित कर देती है, वह अपने पिता के व्यवसाय को विरासत में प्राप्त करता है और आगे अपने बच्चों को सौंप देता है। जाति व्यवस्था के बारे में महत्वपूर्ण बात यह है कि केवल हिन्दुओं में ही जाति पर बल नहीं दिया जाता है अपितु यह भारतीय मुसलमानों, इसाईयों, सिक्खों, जैनियों और यहूदियों में भी कुछ हद तक प्रचलित है।

• (v) बहुधर्मी समाज: यहां धर्म के आधार पर समरसता की कमी है। अंग्रेजों ने भारतीय जनसंख्या को हिन्दुओं, मुसलमानों, बौद्ध, पारसी और इसाईयों में बांटा। यह तथ्य है कि ऐसा एक भी समुदाय नहीं है जिसमें विविधता न हो। व्यक्तिगत कानून तक भी एक जैसे नहीं हैं।

सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और जातीय विविधताओं के बावजूद भारत मुख्यतः एक संगठित समाज रहा है। इस देश की धर्म, भाषा और प्रथाओं की विस्मयकारी विविधता के नीचे छिपी एकता उल्लेखनीय अचरज की बात है। भारत एक राजनीतिक इकाई है जिसका प्रत्येक भाग एक ही संविधान से शासित है।

प्रश्न 9. भारतीय संविधान की प्रस्तावना और उसके महत्व पर प्रकाश डालिये।

उत्तर- भारतीय संविधान की प्रस्तावना और इसका महत्व

किसी भी संविधान की प्रस्तावना में ऐसे मौलिक मूल्य और दर्शन समाहित करने की अपेक्षा की जाती है जिन पर संविधान आधारित होता है तथा वे उद्देश्य और लक्ष्य सम्मिलित होते हैं जिन्हें प्राप्त करने के लिए हमारे पूर्वजों ने संघर्ष किया। दूसरे शब्दों में प्रस्तावना एक लिखित अथवा मौखिक, प्राथमिक अथवा परिचयात्मक कथन होता है। ठीक ही कहा गया है कि प्रस्तावना किसी पुस्तक के आमुख की भांति होती है। इस दस्तावेज के प्रारम्भिक और अन्तिम शब्द हैं। 'हम भारत के लोग इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित - और आत्म समर्पित करते हैं' इससे यह सन्देश मिलता है कि संविधान स्वयं लोगों द्वारा लागू किया गया था और संविधान में दर्ज संप्रभुता लोगों में निहित है।

संविधान द्वारा प्रस्तावना भारत के लोगों के लिए निश्चित की गई सरकार संप्रभु, समाजवादी, पंथ निरपेक्ष, लोकतान्त्रिक गणराज्य थी।

क. संप्रभुता

संप्रभुता किसी स्वतंत्र राज्य का सबसे पहला तत्व है। इसका अर्थ निरपेक्ष स्वतंत्रता है अर्थात् ऐसी सरकार जिस पर किसी बाह्य अथवा आन्तरिक शक्ति का नियन्त्रण नहीं होता है। कोई भी देश संप्रभु हुए बिना अपना संविधान नहीं रख सकता। इसलिए भारत एक संप्रभु देश है। यह बाह्य नियन्त्रण से मुक्त है। यह अपनी नीतियां स्वयं बना सकता है और अपनी विदेश नीति बनाने में स्वतंत्र है।

ख. समाजवादी

'समाजवादी' शब्द मूल रूप से संविधान में नहीं था। इस शब्द को 1976 में विधान के 42वें संशोधन द्वारा जोड़ा गया है। समाजवादी शब्द का अर्थ विवादित है क्योंकि यह अलग

अलग लोगों के लिए अलग अलग अर्थ रखता है। हमारे संविधान में इसका प्रयोग आर्थिक नियोजन के सन्दर्भ में किया गया है। 'समाजवाद' शब्द का प्रयोग अर्थव्यवस्था में राज्य की मुख्य भूमिका को स्वीकृति प्रदान करता है। इसका अर्थ असमताओं को दूर करना सबकी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करना, समान कार्य के लिए समान वेतन, पैसों तथा उत्पादन के साधनों को कुछ हाथों में संकेन्द्रित होने से रोकना जैसे आदर्शों को प्राप्त करना भी है। राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक लोकतन्त्र के आदर्शों को समानता और भाईचारे के साथ मिलाकर 'प्रस्तावना' महात्मा गांधी द्वारा वर्णित 'मेरे सपनों का भारत' स्थापित करने का उद्देश्य रखती है, जिसमें सबसे गरीब आदमी यह अनुभव कर सके कि यह उनका अपना देश है जहाँ उसकी प्रभावशाली आवाज होगी। एक ऐसा भारत जहाँ सभी समुदाय पूर्ण समरसता के साथ आपस में मिल कर रहते हैं, जहाँ महिलाओं को भी पुरुषों के समान अधिकार प्राप्त हैं।

ग. पंथ निरपेक्ष

भारत में अलग अलग धर्म और आस्था रखने वाले लोगों के बीच एकता और भाईचारे की भावना बढ़ाने के लिए पंथ निरपेक्षता के आदर्श को डाला गया, जिसका अर्थ है कि राज्य सभी धर्मों की समान रूप से रक्षा करता है और किसी भी धर्म को राज्य का धर्म नहीं मानता। दूसरे शब्दों में भारत न तो धार्मिक देश है, न अधार्मिक और न ही धर्म विरोधी है। इस का स्पष्ट अर्थ है कि देश का अपना कोई धर्म नहीं होगा और राज्य किसी विशेष धर्म की सरकारी कोष से सहायता नहीं करेगा।

इससे स्पष्ट होता है कि भारत का अपना कोई धर्म नहीं होगा। सभी व्यक्तियों को विवेक की स्वतंत्रता अपनी पसन्द के किसी भी धर्म को अपनाने तथा प्रचार करने का समान अधिकार होगा। इसके दो अभिप्राय हैं- अ) प्रत्येक व्यक्ति को अपने धर्म में विश्वास करने तथा पूजा पद्धति अपनाने की स्वतंत्रता होगी ब) राज्य किसी व्यक्ति अथवा समूह के साथ धर्म के आधार पर कोई भेदभाव नहीं करेगा।

घ. लोकतान्त्रिक

'लोकतान्त्रिक' शब्द बड़ा व्यापक अर्थ रखता है। संकुचित राजनीतिक दृष्टि से तो यह केवल सरकार के रूप से सम्बन्धित है जो प्रतिनिधियात्मक और जिम्मेदार व्यवस्था होती है और जिसके अन्तर्गत राज्य के मामलों का प्रशासन सम्भालने वालों को मतदाता चुनते हैं और वे मतदाताओं के प्रति जवाबदेह होते हैं। लेकिन व्यापक अर्थ में यह राजनीतिक लोकतन्त्र के अतिरिक्त सामाजिक और आर्थिक लोकतन्त्र को भी साथ लेकर चलता है। प्रस्तावना की अन्तिम पंक्ति कहती है 'इस संविधान को अंगीकृत अधिनियमित और आत्मर्पित करते हैं' वास्तव में देश के राजनीतिक सिद्धान्त प्रस्तावना की अन्तिम पंक्ति से फूटते हैं। लोकतन्त्र को आमतौर पर लोगों का शासन, लोगों के द्वारा, लोगों के लिए जाना जाता है।

इ. गणराज्य

'गणराज्य' का अभिप्राय है 'राज्य का निर्वाचित मुखिया'। एक लोकतान्त्रिक देश में निर्वाचित अथवा वंशानुगत मुखिया हो सकता है। वंशानुगत ब्रिटिश राजा/रानी लोकतन्त्र में किसी प्रकार की बाधा नहीं है। वहां वंशानुगत राजा लोकतान्त्रिक शासन में बाधक नहीं है।

क्योंकि राज्य का वास्तविक शासन मतदाताओं के प्रतिनिधियों के हाथ में ही है। परन्तु गणतन्त्रात्मक राज्य में राज्य का मुखिया, किसी एक को या समूह को सदैव एक निश्चित अवधि के लिए निर्वाचित किया जाता है। उदाहरण के लिए अमेरिका में राज्याध्यक्ष और कार्यपालिका के मुखिया को चार वर्ष की अवधि के लिए चुना जाता है। इसी प्रकार स्विट्जरलैंड में सात सदस्यों के कोलेजियम को कार्यपालिका का गठन करने के लिए चार वर्षों हेतु चुना जाता है।

आगे चल कर प्रस्तावना भारतीय राजनीतिक व्यवस्था के उद्देश्यों को परिभाषित करती है। ये चार उद्देश्य हैं 'न्याय, स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृभाव। यह ठीक ही कहा गया है कि स्वतंत्रता आन्दोलन केवल ब्रिटिश शासन के विरुद्ध नहीं था अपितु यह तो पुरुष और महिलाओं की गरिमा को पुनर्स्थापित करने, गरीबी हटाने और सब प्रकार से शोषण को समाप्त करने की शुरुआत थी। ऐसी दृढ़ प्रेरणा और आदर्शों ने संविधान निर्माताओं को पहले उल्लिखित चार उद्देश्यों के प्रावधानों पर बल देने के लिए प्रोत्साहित किया।

क. न्याय

न्याय का अभिप्राय व्यक्ति के व्यक्तिगत आचरण का समान के सामान्य कल्याण के साथ समरस सहमति। न्याय का सार है सबकी भलाई को प्राप्त करना। प्रस्तावना में मानव गतिविधि के समस्त सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्र सम्मिलित हैं। दूसरे शब्दों में न्याय, लोगों को आधारभूत आवश्यकताओं को प्रदान करने भोजन, कपड़े और आवास का अधिकार, निर्णय करने में भागीदारी तथा मानव रूप में गरिमा के साथ रहने का अधिकार प्रदान करने का वायदा करती है। प्रस्तावना केवल न्याय के विभिन्न आयामों तक ही नहीं पहुंचती अपितु 'सार्वभौमिक व्यस्क मताधिकार' के रूप में राजनीतिक व्याप भी प्रदान करती है। अथवा प्रतिनिधियात्मक लोकतन्त्र प्रदान करती है।

ख. स्वतंत्रता

स्वतंत्रता: 'प्रस्तावना' में इस शब्द का प्रयोग नकारात्मक भाव से नहीं अपितु सकारात्मक भाव से किया गया है। यह केवल व्यक्ति की स्वतंत्र गतिविधियों पर किसी प्रकार के मनचाहे प्रतिरोध को अनुपस्थिति को ही नहीं दर्शाती अपितु व्यक्ति के व्यक्तित्व के सम्पूर्ण विकास के लिए आवश्यक अनिवार्य परिस्थितियों को भी निर्मित करती है। 'प्रस्तावना' विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर बल देती है जिसको संविधान द्वारा मौलिक अधिकारों के अन्तर्गत प्रदान किया गया है।

ग. समानता

समानता के बिना स्वतंत्रता मिथ्या है। वास्तव में स्वतंत्रता और समानता एक दूसरे के पूरक हैं। समानता का यह अर्थ नहीं है कि सभी लोग मानसिक और शारीरिक रूप से एक समान हैं। दूसरी ओर यह सामाजिक स्तर और अवसरों की समानता को दर्शाती है। स्थिति की समानता धर्म, जाति, वंश, रंग और निवास स्थान के आधार पर किसी प्रकार के भेदभाव पर अंकुश लगा कर प्रदान की जाती है। छुआछात पर प्रतिबन्ध लगाकर तथा सभी उपाधियों का उन्मूलन करके इस पर अतिरिक्त बल दिया गया है। इसके साथ ही कानून का शासन सुनिश्चित करके, सरकारी नौकरियों के मामले में भेदभाव को रोककर तथा कानून के सामने सबको बराबरी देकर अवसरों की समानता सुनिश्चित की जाती है।

प्रस्तावना भ्रातृभाव के उद्देश्य पर बल देती है ताकि व्यक्ति की गरिमा और देश की एकता दोनों सुनिश्चित रहें। भ्रातृभाव भावना हमारे जैसे देश के लिए अति आवश्यक है। क्योंकि यह विभिन्न जातियों और धर्मों का देश है। व्यक्ति की गरिमा के सन्दर्भ में के. एम. मुखर्जी कहते हैं कि यह लोकतान्त्रिक व्यवस्था को बनाए रखने का एक साधन ही नहीं है अपितु यह प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व को भी गरिमामय मानता है। इसी प्रकार एकता और अखण्डता जैसे शब्दों को क्षेत्रवाद, प्रान्तवाद, भाषावाद, सम्प्रदायवाद, अलगाववाद और अलग होने की गतिविधियों की प्रवृत्ति पर रोक लगाने के सन्दर्भ में प्रयुक्त किया गया है। ताकि पंथ निरपेक्षता के आधार पर राष्ट्रीय एकता के सपने को साकार किया जा सके।

सरल शब्दों में किसी देश का संविधान देश का शासन चलाने वाले कानूनी नियमों का संग्रह होता है। यह प्रमुख विश्वासों और हितों अथवा टकरावपूर्ण विश्वासों और हितों के बीच कुछ समझौतों को दर्शाता है जो संविधान बनाने और अपनाने के समय के समाज की विशेषताएं हैं। यह सत्य है कि कोई संविधान त्रुटिरहित नहीं और भारतीय संविधान भी इस सामान्य सत्य का अपवाद नहीं है। यह भारत के लिए सम्मान की बात है कि एक सांविधानिक सरकार के लिए संघर्ष इतना गहरा था कि इसने अपनी राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करने के 3 वर्ष के भीतर ही अपने लिए एक संविधान निर्मित कर लिया। स्वीकार किए गए संविधान का लक्ष्य न केवल सरकारी मशीनरी स्थापित करने का माध्यम बनना था अपितु इसको सामाजिक व्यवस्था के क्रमबद्ध परिवर्तन का प्रभावशाली औजार भी बनना था। किसी संविधान की ताकत और स्थायित्व अधिकांशतः एक स्वस्थ और शान्तिपूर्ण सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने की योग्यता और अवसर की मांग के अनुसार अपने आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था में शान्तिपूर्ण परिवर्तन को लाने में सहायक होने पर निर्भर करता है। इस दृष्टिकोण के अन्तर्गत संविधान में एक भी ऐसा आदर्श नहीं है। जिसको इसके सबसे बड़े आलोचक भी प्रतिक्रियावादी कह सके। इसका आधारभूत उद्देश्य अपने सभी नागरिकों के लिए न्याय, स्वतंत्रता, समानता और भाई चारा प्राप्त करने के लिए एक लोकतान्त्रिक, समाजवादी, पंथ निरपेक्ष गणतन्त्र स्थापित करना है।

प्रश्न 10. प्रस्तावना संविधान का अभिन्न अंग है या नहीं कह प्रासंगिक वाद (कस) देकर कथन का परीक्षण कीजिए।

उत्तर— प्रस्तावना : क्या यह संविधान का अंग है?

यह एक रुचिकर बात है कि संविधान का आरंभ प्रस्तावना से होता है, जबकि यह सबसे पहले अस्तित्व में नहीं आया। प्रस्तावना संबंधी प्रस्ताव 17 अक्टूबर 1949 को प्रस्तुत किया गया था। प्रारूप समिति के अध्यक्ष ने प्रस्ताव प्रस्तुत करते हुए कहा कि 'प्रस्तावना संविधान का महत्वपूर्ण अंग है।' यह प्रस्ताव 2 नवंबर, 1949 को स्वीकार कर लिया गया तथा संविधान का भाग बन गया।

यह विवादास्पद प्रश्न है कि क्या प्रस्तावना संविधान का अंग है अथवा नहीं संविधान के दो महत्वपूर्ण मुकदमों में वर्णित किया गया था (क) बेरुवारी तथा (ख) केशवानंद भारती मुकदमा वाद।

उपरोक्त वर्णित मुख्य प्रश्न, कि क्या प्रस्तावना संविधान का अंग है, इस प्रस्ताव पर निर्भर करेगा कि क्या प्रस्तावना को संशोधित किया जा सकता है?

प्रस्तावना संविधान का अंग नहीं

भारत के संविधान के अनुच्छेद 143 (1) के अंतर्गत बेरुबारी मुकदमे में भारत-पाकिस्तान समझौते के प्रसंग के अंतर्गत आठ न्यायाधीशों की पीठ की अध्यक्षता मुख्य न्यायाधीश बी.पी. सिन्हा ने की, जिसने इस विषय पर विचार किया। न्यायाधीश गजेन्द्र गडकर ने सर्व सम्मति को घोषणा कर दी। न्यायालय ने निर्णय में कहा कि संविधान की प्रस्तावना निःसंदेह संविधान निर्माताओं ने विभिन्न प्रावधानों से परिलक्षित कर दिया कि प्रस्तावना संविधान का अंग नहीं है। बेरुबारी मुकदमे को संक्षिप्त रूप देते हुए न्यायाधीश शील्ट तथा न्यायाधीश ग्रेवर ने केशवानंद मुकदमे के अंतर्गत (पैराग्राफ 534 को देखिए) निम्न प्रकार से की :

1. संविधान की प्रस्तावना, संविधान निर्माताओं के दिमाग को खोलने की कुँजी है, इससे संविधान में शामिल विभिन्न प्रावधानों को स्पष्ट किया जा सके।
2. प्रस्तावना संविधान का अंग नहीं है।
3. यह संविधान के प्रावधानों के द्वारा सरकार को दी गई शक्तियाँ का स्रोत नहीं हैं।
4. इस प्रकार की शक्तियाँ, संविधान में समाविष्ट एवं अंतर्निहित प्रदान कर की गई हैं।

5. शक्तियों के संबंध में जो सत्य है, वही निषेध, सीमांकन व नियंत्रण के विषय में भी सत्य होता है।

6. संविधान की प्रस्तावना का पहला भाग सम्प्रभुता की अवधारणा को सीमित करता है जब वह सम्प्रभु शक्ति का प्रयोग कर किसी अन्तराष्ट्रीय संधि के द्वारा भारत के किसी भूभाग को सन्तर्कित करने पर रोक लगाता है।

बेरुबारी मामला, गोलकनाथ मुकदमे पर आधारित रहा। न्यायाधीश वॉनचू के अनुसार : हम कई समान तर्कों के आधार पर यह विचार रखते हैं कि प्रस्तावना अनुच्छेद 368 के अंतर्गत संविधान संशोधन को किसी भी प्रकार से निषिद्ध या नियंत्रित नहीं करता है।

न्यायमूर्ति वज्रवत का विचार था कि 'प्रस्तावना संविधान के अनुच्छेदों की अस्पष्ट भाषा को नियंत्रित नहीं कर सकती।

प्रस्तावना संविधान का अंग है-

यह दुख के साथ-साथ रिकार्ड रखने का विषय है कि बेरुबारी बाद में जाने माने न्यायाधीशों ने संवैधानिक इतिहास को नजरअंदाज किया। संविधान सभा द्वारा अपनाए गए प्रस्ताव में अनेक शब्दों में कहा गया कि प्रस्तावना संविधान का ही अंग है। यह गलत केशवानंद बाद में सुधारी गई जिसमें स्पष्ट किया गया कि प्रस्तावना संविधान के अन्य प्रावधानों की तरह ही संविधान का हिस्सा है। इस प्रकार केशवानंद भारती वाद ने इतिहास रचा।

केशवानंद भारती वाद में तेरह न्यायाधीशों की बैंच में से कुछ न्यायाधीशों के व्यक्त विचार थे यह जानना बड़ा रुचिकर है कि पहली बार 13 न्यायाधीशों की पीठ प्रारंभिक क्षेत्राधिकार के अंतर्गत एक रिट याचिका की सुनवाई के लिए बैठी। 13 न्यायाधीशों में से। ने अलग राय व्यक्त की। केशवानंद भारती वाद में न्यायालय की राय का अनुपात का पता

लगाना आसान कार्य नहीं है। लेकिन प्रस्तावना के उद्देश्य से आसानी से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि केशवानंद भारती वाद पर निर्णय इस पक्ष में था कि (क) संविधान की प्रस्तावना संविधान का अंग है, (ख) प्रस्तावना न तो शक्ति का स्रोत है न सीमित या निषिद्ध का स्रोत है (ग) संविधान के ऐसे प्रावधानों की व्याख्या करने में प्रस्तावना का अत्यधिक महत्व है, जिनमें प्रावधान की वृहद और गहरी पहुंच को समझना हो या किसी प्रावधान में अस्पष्टता हो। ऐसे प्रावधानों में अर्थ के प्रस्तावना पर निर्भर रहा जा सकता है। जिन प्रावधानों का अर्थ व भाषा स्पष्ट है उनकी व्याख्या के लिए प्रस्तावना पर निर्भर नहीं रहा जा सकता।

केशवानंद भारती वाद न्यायमूर्ति वाई.वी. चंद्रचूड़ द्वारा एक रुचिकर तर्क दिया गया, उनका कहना था कि प्रस्तावना संविधान का अंग है, लेकिन यह संविधान का प्रावधान नहीं है, इसलिए प्रस्तावना को बदलने के लिए आप संविधान में संशोधन नहीं कर सकते। न्यायमूर्ति चंद्रचूड़ ने माना कि यह विचार स्वीकार नहीं किया जा सकता कि प्रस्तावना संविधान का भाग नहीं है। यह संविधान का हिस्सा है तथा यह अनुच्छेद 368 के अंतर्गत संविधान संशोधन की परिधि से बाहर नहीं है। संविधान सभा के अभिलेख इस तरह के विवाद के लिए कोई जगह नहीं छोड़ते। यह संविधान सभा की कार्यवाही से सर्वविदित है कि प्रस्तावना को मतदान के पश्चात् संविधान के अंग के रूप में स्वीकार किया गया था।

प्रस्तावना प्रकाश पुंज की भांति इतिहास का एक उदीप्त विचार व अवधारणा है, इसलिए तर्क दिया जाता है कि वर्तमान और भविष्य में कितना भी शक्तिशाली शासक क्यों न हो, वह ऐतिहासिक तथ्यों में संशोधन नहीं कर सकता। यद्यपि इतिहास के तथ्यों में संशोधन नहीं किया जा सकता, परंतु प्रस्तावना में संशोधन किया जा सकता है।

केशवानंद भारती वाद भारत के संवैधानिक इतिहास में एक मील का पत्थर होने के साथ-साथ एक महत्वपूर्ण मोड़ भी था। महत्वपूर्ण संवैधानिक विषय पर न्यायिक निर्णय में इस बाद से आया बदलाव संवैधानिक कानून के छात्रों के लिए आश्चर्यजनक व अत्यधिक रुचिकर है। प्रत्येक न्यायाधीश द्वारा अपनी राय उत्कृष्ट व मनपसंद शब्दों में व्यक्त की गई, जिनमें हमारे संविधान निर्माताओं की 'हम भारत के लोग' की भावना व्यक्त होती है।

न्यायमूर्ति डी.जी. पालेकर ने कहा कि प्रस्तावना संविधान का अंग है, इसलिए यह अनुच्छेद 368 के अंतर्गत संशोधन योग्य है। उन्होंने कहा कि मौलिक अधिकारों को प्रस्तावना का विस्तार मानना अतिशयोक्ति व आधा सत्य है। न्यायमूर्ति एच. आर. खन्ना की राय में प्रस्तावना संविधान का अंग है। उन्होंने प्राकृतिक अधिकारों की अवधारणा का विकास कर इसे प्रस्तावना में प्रतिस्थापित स्वतंत्रता, समानता और लोकतंत्र के मूल्य से संबद्ध किया। उन्होंने कहा कि ये अधिकार अहस्तांतरणीय हैं। इसीलिए इनमें संशोधन नहीं किया जा सकता क्योंकि इन अधिकारों व मूल्यों को मनुष्य ने युगों के संघर्ष से संजोए रखा है।

न्यायमूर्ति खन्ना ने इस तर्क को अस्वीकार कर दिया, जो कहता था कि प्रस्तावना संविधान का अंग नहीं है। उनके अनुसार, 'प्रस्तावना संविधान से पहले चलती है।' उनकी राय में प्रस्तावना भी अन्य प्रावधानों की तरह ही संविधान का अभिन्न हिस्सा है, इसलिए आधारभूत ढांचे को छोड़कर इसमें संविधान के अन्य प्रावधानों की तरह प्रस्तावना में भी संशोधन किया जा सकता है। आधारभूत या मूलभूत ढांचे को संशोधन की शक्ति पर प्रतिबंध के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए।

न्यायमूर्ति एस. एन. ट्रिवेदी ने भी न्यायमूर्ति ए.एन. रे के निर्वर्ण व निर्णय के समान ही अपने विचार रखे, जिसने कहा था कि प्रस्तावना संविधान का हिस्सा है। न्यायमूर्ति ट्रिवेदी ने प्रस्तावना को संविधान का अंग बनाने के साथ-साथ इसे संविधान का प्रावधान भी घोषित किया।

निर्वर्ण से न्यायमूर्ति वेग ने कहा कि अनुच्छेद 368 के अंतर्गत संविधान संशोधन की शक्ति पर कोई नियंत्रण नहीं है।

लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. भारत सरकार अधिनियम, 1935 पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

उत्तर—यह अधिनियम संयुक्त चयन समिति की रिपोर्ट का उपज था जो कि ब्रिटिश संसद में चर्चा की गयी थी जिस पर महारानी ने 2 अगस्त, 1935 को अपनी सहमति प्रदान की थी। इस अधिनियम की प्रमुख विशेषताओं को कुछ संशोधनों के साथ बाद में भारतीय संविधान में सम्मिलित किया गया था। इनमें सबसे प्रमुख हैं संघीय ढाँचा। केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकार (केन्द्र और राज्य) तथा इनके बीच सीमाओं का विभाजन केन्द्र सूची राज्य सूची एवं सम्मिली सूची। द्विसदनात्मक विधायिका, उच्च सदन एवं निम्न सदन (लोक सभा एवं राज्य सभा) तथा राज्य विधान मण्डल (विधान सभा और विधान परिषद) एवं संघीय न्यायालय (सर्वोच्च न्यायालय)।

प्रश्न 2. संविधान निर्माण में संविधान सभा की भूमिका (1948-1949) पर टिप्पणी लिखिए।

उत्तर—संविधान सभा के गठन का उद्घाटन सत्र 9 दिसंबर, 1946 को आयोजित किया गया। कीजिए इसमें सभी 296 सदस्यों को भाग लेना था लेकिन इनमें से मात्र 207 सदस्यों ने ही हिस्सा लिया क्योंकि मुस्लिम लीग के सदस्यों ने इसका बहिष्कार किया था। जैसा पहले भी बताया जा चुका है उन्होंने संविधान सभा का बहिष्कार किया था। इस सभा में आचार्य कृपलानी ने डा. सच्चिदानंद सिन्हा से निवेदन किया कि वे इसके अस्थायी अध्यक्ष बन जाएं। बाद में सभी सदस्यों ने एक प्रस्ताव पास किया 10 दिसंबर 1946 को स्थायी अध्यक्ष के चुनाव के लिए। उसके अगले दिन यानि 11 दिसंबर 1946 को डा. राजेन्द्र प्रसाद को संविधान सभा का स्थायी अध्यक्ष चुन लिया गया। 13 दिसंबर 1946 को जवाहर लाल नेहरू ने एक प्रस्ताव पेश किया जिसमें इसके लक्ष्य एवं उद्देश्य शामिल थे।

सुचारु रूप से कार्य करने के लिये संविधान सभा ने इसके कार्यों को विभिन्न समितियों में विभाजित किया। उनमें से कुछ महत्वपूर्ण समितियाँ इस प्रकार थीं। (1) केन्द्रीय सत्ता समिति। इसके अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरू थे तथा इसमें नौ अन्य सदस्य थे। (2) मौलिक अधिकार और अल्पसंख्यक समिति। इसमें 54 सदस्य थे और सरदार वल्लभ भाई पटेल इसके अध्यक्ष थे। (3) संचालन समिति, इसके तीन सदस्य थे के. एम. मुन्शी, गोपाल स्वामी अयंगर और भगवान दास, इसके अध्यक्ष डा. के. एम. मुंशी थे। (4) प्रांतीय संविधान समिति, इसमें 25 सदस्य थे और सरदार पटेल इसके अध्यक्ष थे। (5) संघीय संविधान समिति इसमें 15 सदस्य थे और इसके अध्यक्ष जवाहर लाल नेहरू थे।

इन समितियों की रिपोर्ट पर चर्चा करने के पश्चात् संविधान सभा ने 29 अगस्त 1947 का एक प्रासंग्य समिति का गठन किया। इस समिति का अध्यक्ष डा. अंबेडकर को बनाया

गया। ड्राफ्ट (प्रासंग्य) को सर बी. एन. राव ने तैयार किया जो संविधान सभा के सलाहकार थे। प्रासंग्य को समझने के लिए एवं उसका परीक्षण करने के लिये 7 सदस्यीय समिति का गठन किया गया। डा. अंबेडकर जो उस समय कानून मंत्री भी थे और इस समिति के अध्यक्ष भी थे उन्होंने इस प्रासंग्य को संविधान सभा में पेश किया। डा. अंबेडकर ने भारतीय संविधान के प्रासंग्य को प्रस्तुत किया। संविधान के प्रासंग्य का कन्वेंसी 1948 में प्रकाशन हुआ। संविधान सभा ने इस प्रासंग्य को कई सत्रों में चर्चा की और यह अक्टूबर 17, 1949 को पुरा हुआ। इस चर्चा को हम द्वितीय पाठन भी कहते हैं। संविधान सभा फिर से 14 नवंबर 1949 को मिली और प्रासंग्य पर चर्चा की। इसे तृतीय पाठन कहते हैं। 26 नवंबर 1949 को इसको अंतिम रूप प्रदान किया गया तथा संविधान सभा के अध्यक्ष के पास हस्ताक्षर के लिए भोज दिया गया। इस प्रकार 26 नवंबर 1949 को संविधान को अमल में लाया गया तथा ठीक दो नही पश्चात् 26 जनवरी 1950 को इसे लागू किया गया।

प्रश्न 3. भारत की संविधान सभा और शैक्षिक विचार-विमर्श पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिए।

उत्तर—संविधान सभा के सदस्यों का चुनाव सार्वभौम वयस्क मताधिकार से नहीं हुआ था। उनका चुनाव प्रतिबंधित वयस्क मताधिकार प्रणाली से हुआ था जिसका प्रमुख आधार शैक्षिक योग्यता एवं संपत्ति थी। कुछ आलोचक यह कहते हैं कि यह सभा ब्रिटिश लोगों की संस्था थी जिसमें आम लोगों का प्रतिनिधित्व नहीं था। जय प्रकाश नारायण ने इसे प्रतिबंधित और नियंत्रित संविधान सभा कहा था जो कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद की उपज थी और यह देश को स्वतंत्रता दिलाने में भी असमर्थ थी। चर्चिल ने कहा कि यह सभा केवल एक समुदाय को प्रतिनिधित्व करती थी तथा विन्सेट साइमन के लिये यह हिन्दुओं की संस्था थी। संविधान सभा की कार्य-प्रक्रिया, संगठन तथा इसके चरित्र को भी आलोचना की गयी है क्योंकि इसमें कॉंग्रेस पार्टी का वर्चस्व अधिक था क्योंकि विभाजन के बाद कॉंग्रेस का इसमें बहुमत था। प्रोफेसर सिबन लाल सक्सेना का मानना था कि कॉंग्रेस पार्टी की मीटिंग ही वास्तव में संविधान सभा की मीटिंग में तबदील हो गयी थी तथा यह वास्तविक सभा एक दिखावाटी सभा बनकर रह गयी थी क्योंकि जो भी चर्चा कॉंग्रेस पार्टी में होती थी वो ही इसमें दर्ज होती थी।

यद्यपि संविधान सभा को भारत के बहुसंख्यक लोगों का विश्वास हासिल था फिर भी कुछ आलोचक यह मानते थे कि इसमें केवल राजनीतिज्ञ और अधिवक्ताओं का ही वर्चस्व था। इसका परिणाम यह हुआ कि इसके कारण देश को बहुत बड़ा दस्तावेज मिला। इस प्रकार संविधान की प्रायः आलोचना भी की जाती है क्योंकि इसे अधिवक्ताओं का स्वर्ग कहा जाता है। इसी आलोचना में एस. के. चौबे ने इस बात पर जोर दिया कि संविधान सभा एक अद्वितीय सभा थी जो कि डोमिनियन भारत की प्रथम सार्वभौम संस्था थी जो स्थिरता एवं अनुकूलन क्षमता के बीच संतुलन बना रही थी। ऑस्टिन ने टिप्पणी की कि लिखित संविधान का महत्व समाज के नियमों के लिये आवश्यक होता है, जो कि भारत के संविधान में यह साबित किया है अपने अनुभवों से कश्यप ने यह तर्क दिया कि भारत का संविधान केवल राजनीतिक एवं कानूनी दस्तावेज नहीं है बल्कि यह नागरिकता के मूल्यों का चार्टर है। संविधान सभा के मुख्य बिन्दुओं पर प्रकाश डालते हुए जो कि जवाहरलाल नेहरू ने 13

दिसंबर, 1946 को संविधान सभा में पेश किये थे, सुभाष कश्यप ने टिप्पणी की कि 'ये प्रमुख विन्दु संविधान की दिशा एवं मुख्य मूल्यों का चित्रण करते हैं तथा प्रस्तावित उद्देश्य संविधान के मौलिक तत्व भी हैं। ये प्रस्ताव से कहीं ज्यादा थे। यह एक घोषणा थी। सुदृढ़ संकल्प, सूझबूझ और समर्पण था। इस प्रस्ताव में संविधान सभा को दिशा-निर्देश भी दिया तथा संविधान निर्माण में दार्शनिक कार्य भी किया।

प्रश्न 4. संविधान की प्रस्तावना से क्या तात्पर्य है?

उत्तर-प्रस्तावना किसी भी संविधान की खिड़की की तरह होती है जिससे हम यह पता लगा सकते हैं कि इसके अंदर क्या है। भारत के संविधान में भी एक प्रस्तावना है। यह संविधान के प्रारम्भ में ही दी गयी है। मुख्य भाग यानी, भाग एक के पहले दी गयी है। यदि आप इस प्रस्तावना को पढ़ेंगे तो यह संविधान के लक्ष्य एवं दर्शन के बारे में एक झलक प्रस्तुत करती है। यह एक प्रकार का संकल्प है जिसे लोगों ने स्वयं के लिये पारित किया है उनके विकास के लिये। यह किसी अन्य स्रोतों से नहीं किया है बल्कि लोगों ने स्वयं इसे दिया है। यह भारत के लोगों की तरफ से संविधान सभा के सदस्यों ने लिखी थी। जैसा कि आपने इसका संख्या एक में पढ़ा होगा, भारत के संविधान को संविधान सभा ने लिखा था, जिसके अंगीकृत प्रतिनिधि शामिल थे।

आप यह जानकर अचंभित होंगे कि संविधान की प्रस्तावना को संविधान सभा के अंतिम सत्र में यानी अक्टूबर 1949 में लिखी गयी थी। संविधान सभा की प्रथम बैठक दिसंबर 1946 को शुरू हुई थी तथा 26 नवंबर 1949 को समाप्त हुई थी। इसमें संविधान को अंगीकृत किया गया तथा 26 जनवरी 1950 को संविधान लागू भी हुआ।

प्रश्न 5. संविधान के उद्देश्य क्या हैं?

उत्तर-अनेक राजनीतिक विचारकों का मत है कि स्वतंत्र भारत के संविधान के लगभग 200 वर्षों के औपनिवेशिक शासन, जन आधारित स्वतंत्रता संघर्ष, राष्ट्रीय आन्दोलन, देश का विभाजन और साम्प्रदायिक हिंसा की पृष्ठभूमि में तैयार किया गया संविधान के निर्माता लोगों की आकांक्षाओं, देश की एकता और अखण्डता तथा एक लोकतान्त्रिक समाज की स्थापना के प्रति चिन्तित थे। संविधान सभा के अलग-अलग सदस्यों की अलग-अलग विचाराधारा थी। उनमें से कुछ का समाजवादी सिद्धान्तों के प्रति झुकाव था और कुछ अन्य गांधीवादी विचारों पर जोर देते थे। उनमें से अधिकांश सदस्य लोगों को उनके प्रिय आदर्शों को पूरा करने वाला संविधान देने पर सहमत थे।

परिणाम स्वरूप विवादों और असहमति को टालने के लिए विभिन्न मुद्दों और सिद्धान्तों पर सर्वसम्मति बनाने के सजग प्रयास किए गए। यह सहमति 17 दिसम्बर 1946 को जवाहर लाल नेहरू द्वारा प्रस्तावित 'उद्देश्य प्रस्ताव' के रूप में प्रकट हुई जिसे लगभग सप्ताहों के बाद 22 जनवरी 1949 को स्वीकार किया गया। इन उद्देश्यों / लक्ष्यों के प्रकाश में संविधान सभा ने अपना कार्य 26 नवम्बर 1949 को पूरा किया। संविधान को 26 जनवरी 1950 को लागू किया गया। इस शुभ दिन से भारत एक गणतन्त्र बन गया। ठीक 20 वर्ष पूर्व 26 जनवरी 1930 को लाहौर कांग्रेस अधिवेशन के निर्णयानुसार पहला स्वतंत्रता दिवस मनाया गया था इसलिए भारत के संविधान को लागू करने के लिए 26 जनवरी का दिन चुना गया। पहले दिन 'उद्देश्य प्रस्ताव' पर बोलते हुए पं. जवाहर लाल नेहरू ने कहा था 'उद्देश्य प्रस्ताव'।

प्रस्ताव से कुछ अधिक है। यह हम सब के लिए निष्ठा और समर्पण की एक घोषणा, दृढ़ निश्चय, एक शपथ और प्रतिज्ञा है।

प्रश्न 6. भारतीय संविधान के प्रमुख स्रोत लिखिए।

उत्तर-भारतीय संविधान के प्रमुख स्रोत निम्नलिखित हैं:-

भारत शासन अधिनियम (Government of India Act - 1935)-भारतीय संविधान का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत भारत शासन अधिनियम-1935 है, जिसका भारतीय संविधान के आकार, विषय सूची तथा भाषा पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा है।

ब्रिटिश संविधान (British Constitution)-एकल नागरिकता (Single citizenship), संसदीय शासन प्रणाली (Parliamentary governance system), विधि का शासन और विधि के समक्ष समानता, विधि निर्माण प्रक्रिया।

संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान (Constitution of the United States of America)-मौलिक अधिकार (Fundamental Rights), संविधान की सर्वोच्चता, स्वतंत्र न्यायपालिका, न्यायिक पुनरावलोकन की प्रक्रिया, राष्ट्रपति पर महाभियोग चलाने की प्रक्रिया, उपराष्ट्रपति पद की व्यवस्था।

फ्रांस का संविधान (Constitution of France)-गणतंत्र की स्थापना।

आयरलैंड का संविधान (Constitution of Ireland)-राज्य के नीति निर्देशक तत्व (Directive Principles of State Policy), राष्ट्रपति के निर्वाचन में निर्वाचक मंडल की व्यवस्था, राज्यसभा में विज्ञान, कला, साहित्य आदि क्षेत्रों से सम्बंधित व्यक्तियों के मनोनयन ('दसहूँ ससी') की प्रक्रिया।

ऑस्ट्रेलिया का संविधान (Constitution of Australia)-संविधान की उद्देशिका (प्रस्तावना) की भाषा, समवर्ती सूची, अनुच्छेद 301 व्यापार, वाणिज्य समागम।

कनाडा का संविधान (Constitution of Canada)-संघात्मक व्यवस्था, अवशिष्ट शक्तियां, मजबूत केंद्र।

जर्मनी का वाइमर संविधान (Germany's Weimar Constitution)-आपातकाल में राष्ट्रपति की मौलिक अधिकार सम्बन्धित शक्ति।

दक्षिण अफ्रीका का संविधान (Constitution of South Africa)-संविधान संशोधन प्रक्रिया (Constitution amendment process)

जापान का संविधान (Constitution of Japan)-विधि/कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया।

UNIT-II

- Fundamental Rights and Duties Status and A importance, Directive Principles of State Policy.

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. मौलिक अधिकारों के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य पर विस्तृत नोट लिखिए।
उत्तर-

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य
अधिकारों की अवधारणा जिसे हम मौलिक अधिकार कहते हैं, इनका उद्भव 19वीं शताब्दी में हुआ था। ऑस्टिन के अनुसार मौलिक अधिकारों की अवधारणा 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के समय से ही आ गयी थी। जिसमें भारतीय नागरिक भी ब्रिटिश नागरिकों के समान अधिकार एवं प्रलाब्ध चाहते थे। इनमें से कुछ अधिकारों को दस्तावेजों जैसे कि भारतीय संविधान विधेयक 1895 के अंतर्गत शामिल वि दे गये। यह विधेयक भारतीय नागरिकों को कुछ अधिकार प्रदान करता है जैसे भाषण की स्वतंत्रता अधिकृत अधिकारी द्वारा ही जेल भेजना तथा राज्य द्वारा मुक्त शिक्षा व्यवस्था करना। आगे के वर्षों में भारतीयों को और अधिकार देने की मांग का प्रयास किया गया। इन मांगों को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने अपने प्रस्तावों में भी शामिल किया विशेषकर 1917 एवं 1919 के विभिन्न विधेयक एवं समिति रिपोर्टों में यह शामिल किया गया। 1925 में ऐनी बेसेंट द्वारा भारत के लिए राष्ट्रमंडल विधेयक का मसौदा तैयार किया गया था, 1928 में नेहरू रिपोर्ट 1945 में संपूर्ण रिपोर्ट तथा मौलिक अधिकारों से संबंधित संविधान सभा की उप-समितियाँ भी बनायी गयी थी।

1925 का भारतीय राष्ट्रमंडल विधेयक

राष्ट्रमंडल विधेयक ने भारतीयों के लिये सात मौलिक अधिकारों की मांग की। इन अधिकारों में शामिल हैं व्यक्तिगत स्वतंत्रता विवेक की आजादी बात करने की आजादी, एकत्रित होने की स्वतंत्रता तथा कानून के समक्ष समानता इस विधेयक में प्राथमिक शिक्षा को मुक्त रखने का भी प्रावधान था, मार्ग का समान रूप से प्रयोग करना न्याय का प्रावधान एवं व्यवसाय करने के स्थान के लिए समान व्यवस्था करने का भी प्रावधान था।

1928 की नेहरू रिपोर्ट

राष्ट्रमंडल विधेयक के प्रिंट होने के तत्पश्चात् 1927 में साइमन कमीशन ने भारत का दौरा किया जिसका मूल मकसद था भारत में संविधानिक सुधार की संभावनाओं का परीक्षण करना। साइमन कमीशन के जवाब में कांग्रेस ने एक प्रस्ताव पारित किया, जिसमें एक समिति के गठन का प्रावधान था। यह समिति मद्रास में आयोजित वार्षिक सत्र में गठित की गई गयी थी जिसका उद्देश्य था 'भारत के लिए स्वराज संविधान' का मसौदा तैयार करना

इस मसौदे का मूल उद्देश्य था अधिकारों की घोषणा करना। संविधान का मसौदा तैयार करने की जिम्मेदारी समिति को दी गयी इस समिति का नाम था नेहरू समिति, जिसके अध्यक्ष थे मोतीलाल नेहरू नेहरू रिपोर्ट ने मौलिक अधिकारों को प्राप्त करने की जरूरत को रेखांकित किया जो कि औपनिवेशिक शासन ने उन्हें देने से मना कर दिया था। वास्तव में नेहरू रिपोर्ट में जो मौलिक अधिकारों से संबंधित प्रावधान थे वे राष्ट्रमंडल विधेयक में शामिल अधिकारों की ही पुनरावृत्ति थी। इस रिपोर्ट ने अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा करने की जरूरत को भी रेखांकित किया था। कांग्रेस पार्टी ने अपने 1931 में हुए कराची सत्र में जनता के शोषण को समाप्त करना तथा राजनीतिक स्वतंत्रता के साथ-साथ आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करने की जरूरत को महसूस किया। इसने यह मजदूर वर्ग के हितों की रक्षा के लिए उपर्युक्त कानून भी बनाया जाये। सुझाव दिया कि

1945 की संपूर्ण रिपोर्ट

संपूर्ण समिति का कार्य था भारत के भविष्य के लिए संविधान निर्माण के कार्य को गति प्रदान करना। इस समिति में 30 सदस्य थे। इसका नाम संपूर्ण समिति रखा गया था क्योंकि इसके अध्यक्ष तेज बहादुर संपूर्ण थे जो कि एक जाने माने वकील थे। यह रिपोर्ट 1945 में प्रकाशित हुई थी। संपूर्ण समिति ने अधिकारों से संबंधित दो सुझावों की वकालत की थी। पहला सुझाव था, न्यायोचित एवं गैर-न्यायोचित अधिकारों के बीच अंतर बताना तथा दूसरा सुझाव था अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा होनी चाहिए।

मौलिक अधिकारों पर उप-समिति

आपने इकाई संख्या एक में पढ़ा होगा, संविधान सभा ने संविधान में सुझाव शामिल करने के लिए विभिन्न समितियों का गठन किया था। इनमें से एक समिति वह थी जिसे मौलिक अधिकारों, अल्पसंख्यकों के अधिकारों एवं जनजातिय अधिकारों के ऊपर अपने सुझाव प्रस्तुत करने थे। इस समिति अध्यक्ष सरदार वल्लभ भाई पटेल थे। इस समिति को विभिन्न उप-समितियों में विभाजित किया गया था। इनमें से एक उप-समिति मौलिक अधिकारों पर भी थी। इस समिति के अध्यक्ष जे. बी. कृपलानी थे। इस समिति समाज के विभिन्न वर्गों से लोगों का प्रतिनिधित्व था जिनमें महिलाएं अमृत कौर एवं हंसा मेहता भी शामिल थी इस समिति का सबसे प्रभुत्व निर्णय था मौलिक अधिकारों को न्यायोचित मानना एवं न्यायाधिकृत अधिकार स्वीकार करना। इस समिति के सुझावों को संविधान के भाग 3 में शामिल किया गया था जब संविधान सभा में इनके ऊपर चर्चा कर ली गयी थी।

प्रश्न 2. छः मौलिक अधिकार कौन-कौन से हैं?

उत्तर-

छः प्रमुख मौलिक अधिकार

मूल संविधान (1950) में सात मौलिक अधिकार थे। लेकिन 44वें संशोधन के बाद 1978 में इन्हें छ कर दिया गया। इस संशोधन ने सातवें मौलिक अधिकार सम्पत्ति के अधिकार को समाप्त कर दिया था। यह अधिकार अनुच्छेद 31 के अंतर्गत था। आप नीचे इन अधिकारों के बारे में उप-इकाई में अध्ययन करेंगे।

1. समानता का अधिकार

अनुच्छेद 14 से 18 तक समानता के अधिकार से संबंधित हैं। अनुच्छेद 14 में कहा गया है कि राज्य किसी भी व्यक्ति को कानून के समक्ष समानता से वंचित नहीं करेगा तथा

भारत के किसी भी क्षेत्र में उन्हें समान रूप से कानून के द्वारा सुरक्षा प्राप्त होगी। इस प्रकार यह अधिकार सभी व्यक्तियों को कानून के समक्ष समानता का अधिकार प्रदान करता है। किसी भी व्यक्ति, धर्म, नस्ल, जाति, लिंग या जन्म के स्थान पर उनके साथ भेदभाव नहीं किया जायेगा। अनुच्छेद 15, 16, 17, और 18 सामाजिक एवं आर्थिक समानता से संबंधित हैं। अनुच्छेद 15 राज्य को किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध धर्म, भाषा, जाति के आधार पर भेदभाव करने को निषेध मानता है। हालांकि राज्य कुछ विशेष सकारात्मक नीतियां बना सकता है। महिलाओं, बच्चों, सामाजिक एवं शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों एवं अनुसूचित जाति एवं जन जाति वर्गों के लिए। यह अधिकार किसी भी व्यक्ति को सार्वजनिक स्थानों, रेस्टोरेंट, होटल, दुकान या मनोरंजन के स्थानों, कुंओं का प्रयोग करने, इत्यादि का प्रयोग करने में किसी भी प्रकार के भेदभाव को निषेध मानता है।

अनुच्छेद 16 सभी नागरिकों को समान अवसर प्रदान करने की गारंटी देता है। यह अनुच्छेद सभी नागरिकों को रोजगार के अवसर प्रदान करना तथा किसी भी प्रकार के भेदभाव को निषेध मानता है। राज्य किसी भी नागरिक को धर्म, जाति, लिंग, नस्ल या जन्म स्थान के आधार पर रोजगार के मामलों में भेदभाव नहीं कर सकता है। अनुच्छेद 17 के अंतर्गत अस्पृश्यता या छुआछूत का पूर्ण रूप से प्रतिबंध किया गया है। किसी भी प्रकार की छुआछूत का कानूनी रूप से दंडनीय अपराध माना गया है। अनुच्छेद 18 के अंतर्गत राज्य किसी भी प्रकार को उपाधि नहीं देगी सिवाय सेना या शैक्षिक प्रतिष्ठा के अलावा। कोई भी भारतीय नागरिक विदेशी राज्य से किसी भी प्रकार की उपाधि स्वीकार नहीं करेगा। कोई भी व्यक्ति जो पद पर आसीन हो वह किसी भी प्रकार का गिफ्ट, उपहार स्वीकार नहीं करेगा तथा कोई भी विदेशी उपहार भी स्वीकार नहीं करेगा।

2. स्वतंत्रता का अधिकार

स्वतंत्रता का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 19 से 22 तक दिया गया है। स्वतंत्रता का अधिकार अपने आप में पूर्ण नहीं है। यह कानूनी रूप से नियंत्रित अधिकार है। अनुच्छेद 19 में निम्नलिखित अधिकार दिये गये हैं -

(i) भाषण एवं अभिव्यक्ति की आजादी-इसका मुख्य उद्देश्य भारत की एकता एवं संप्रभुता की रक्षा करना, राज्य की सुरक्षा, विदेशी राज्यों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध, कानून और व्यवस्था, नैतिकता स्थापित करना, तथा सार्वजनिक संपत्ति को गंदा ना करना या किसी गलत कार्य को उकसाना इत्यादि।

(ii) बिना हथियारों के शांतिपूर्ण तरीके से एकत्रित होना, यह भारत की सुरक्षा एवं एकता एवं अखंडता को सुनिश्चित करता है, तथा शांति व्यवस्था कायम रखता है।

(iii) संध एवं संगठनों को गठित करना, यह भारत की संप्रभुता एवं एकता को संयोजित रखता है तथा लोक नैतिकता को भी बनाये रखता है। यह 'सहयोगिक समाज' जो कि 2012 में 97वें संशोधन के द्वारा जोड़ा गया था, को भी शामिल करता है।

(iv) भारत के किसी भी भूभाग में निवास करना या स्थायी आवास बनाना। तथा

(v) किसी व्यवसाय को शुरू करना, किसी भी कारोबार, व्यापार या व्यवसाय को करना, यह शिक्षित व्यवसाय पर आधारित होता है। इसके लिए योग्यताएं होना आवश्यक है।

(vi) भारत के किसी भी क्षेत्र में मुक्त भ्रमण करना, इससे आम नागरिक एवं अनुसूचित जनजातियों के हितों को सुरक्षित रखा जाता है।

अनुच्छेद 20, 21 एवं 22 व्यक्तियों की व्यक्तिगत स्वतंत्रता को सुनिश्चित करता है। सभी मौलिक अधिकारों में यह केन्द्रीय अधिकार है अर्थात् जीवन का अधिकार और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार। 2002 में न्यायपालिका ने इस अधिकार की सही तरीके से व्याख्या की थी। इसके अतिरिक्त, 2002 में 86 वें संविधान संशोधन के द्वारा, अनुच्छेद 21 ए भी जोड़ा गया था जिसमें राज्य छः वर्ष से चौदह वर्ष के बीच के बच्चों के लिए अनिवार्य एवं मुफ्त शिक्षा की गारंटी प्रदान करता है। पहले यह नीति-निर्देशक तत्वों के अनुच्छेद 45 में शामिल था। अनुच्छेद 20 राज्य द्वारा गैर कानूनी तरीके से पीड़ित व्यक्ति को मुफ्त सुनवायी की व्यवस्था का प्रावधान करता है। किसी भी व्यक्ति को सजा नहीं मिल सकती सिवाय किसी कानून के उल्लंघन करने के अतिरिक्त। अनुच्छेद 22 के अंतर्गत विभिन्न प्रकार के खंड बनाये गये हैं जिसमें किन्हीं मामलों में गिरफ्तारी एवं सजा से संरक्षण प्रदान किया गया है।

3. शोषण के विरुद्ध अधिकार

भारत के संविधान में अनुच्छेद 23 एवं 24 शोषण के विरुद्ध अधिकार से संबंधित हैं। अनुच्छेद 23 बाल शोषण, बेगार तथा बंधुआ मजदूरी पर रोक लगाता है। अनुच्छेद 24 के अनुसार, 14 वर्ष से कम की आयु के बच्चों को किसी भी फैक्ट्री कारखाने, या हानिकारक व्यवसाय में रोजगार नहीं दे सकते या उन्हें काम पर नहीं रख सकते हैं।

4. धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार

अनुच्छेद 25 धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान करता है। सभी व्यक्तियों को किसी भी धर्म की पूजा उपासना करने का अधिकार प्राप्त है। लेकिन यह स्वतंत्रता नैतिकता सार्वजनिक व्यवस्था एवं स्वास्थ्य पर निर्भर है। इसके अलावा संविधान के भाग तीन दिये गये प्रावधानों के अनुरूप होनी चाहिये। इस अनुच्छेद के मुताबिक कोई भी निर्धारित कानून इसको प्रभावित नहीं करेगा तथा राज्य को भी कानून बनाने से कोई भी रोक नहीं सकता।

(i) किसी भी आर्थिक, वित्तीय राजनीतिक या अन्य धर्मनिरपेक्ष कार्य को नियमित करना जो कि धार्मिक कार्यों से संबंधित हो।

(ii) सामाजिक कल्याण और सुधार प्रदान करना या हिंदू धार्मिक संस्थाओं को सभी वर्गों के लिए खोलना।

विवेक की स्वतंत्रता को दो अनुच्छेदों द्वारा मजबूत बनाया गया है। ये अनुच्छेद हैं 27 एवं 28। अनुच्छेद 27 में कहा गया है कि किसी भी व्यक्ति को किसी विशिष्ट धर्म की अभिवृद्धि या रखरखाव में व्यय के लिये कोई कर अदा करने के लिये बाध्य नहीं किया जायेगा। अर्थात् यदि करों का इस्तेमाल सभी धर्मों की अभिवृद्धि के लिये किया जाता है तो कोई आपत्ति नहीं हो सकती। अनुच्छेद 28 पूर्णतया राज्य निधि से संचालित शैक्षिक संस्थाओं में कोई धार्मिक शिक्षा देने का पूर्णतः प्रतिषेध करता है। राज्य से मान्यता तथा सहायता प्राप्त संस्थाओं के मामलों में प्रत्येक व्यक्ति को धार्मिक शिक्षा या उपासना में उपस्थित न होने की स्वतंत्रता होगी।

5. सांस्कृतिक एवं शैक्षिक अधिकार

अनुच्छेद 29 एवं 30 संस्कृति और शिक्षा के अधिकार से संबंधित हैं। अनुच्छेद 29 भारत में कहीं भी निवास करने वाले नागरिकों के प्रत्येक वर्ग को जिसकी अपनी विशेष भाषा, लिपि, या संस्कृति है, उसे बनाये रखने के अधिकार की गारंटी देता है। किसी भी नागरिक का राज्य द्वारा संचालित या उससे सहायता प्राप्त किसी भी शिक्षा संस्था में केवल धर्म मूलवश जाति या भाषा के कारण प्रवेश देने से इंकार नहीं किया जा सकता। अनुच्छेद 30 के अनुसार धर्म या भाषा पर आधारित सभी अल्पसंख्यक वर्गों को अपनी रुचि की शिक्षा संस्थाओं की स्थापना और उनके प्रबंध का अधिकार होगा।

6 संवैधानिक उपचारों का अधिकार

अनुच्छेद 32 के अनुसार भारतीय संविधान मौलिक अधिकारों को लागू कराने के लिये समुचित कार्यवाही द्वारा देश के सर्वोच्च न्यायालय का द्वार खटखटाने के अधिकार की गारंटी देता है। उच्चतम न्यायालय जिन उपायों से मूल अधिकारों की रक्षा करता है उन्हें याचिका या न्यायिक प्रक्रिया कहा जाता है। ये रिट या न्यायिक प्रक्रिया इस प्रकार हैं :- बंदी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, प्रतिषेध, अधिकार पृच्छा और उल्लेख रिट सर्वोच्च न्यायालय मूल अधिकारों को लागू कराने के लिये इन याचिकाओं का आदेश दे सकता है। इन रिटों का अर्थ इस प्रकार है :-

(i) बंदी प्रत्यक्षीकरण-यह रिट जीवन के अधिकार की रक्षा करती है तथा व्यक्तिगत स्वतंत्रता को सुरक्षित रखती है। यह रिट न्यायालय द्वारा जारी की जाती है, यदि किसी व्यक्ति को बिना किसी सुनवाई के हिरासत में ले लिया गया हो तो उसे न्यायालय में प्रस्तुत किया जाता है। यह कार्यपालिका को चुनौती देती कार्यपालिका ने किसी व्यक्ति को कानून के विपरीत हिरासत में लिया हो। यह रिट यदि कानून को भी चुनौती देती है यदि यह कानून गैर संविधानिक है। न्यायालय ऐसे व्यक्ति को बरी कर सकता है यदि उसे गैर-कानूनी तरीके से हिरासत में लिया गया हो। यदि इस रिट का उल्लंघन किया तो यह कोर्ट की अवमानना मानी जायेगी तथा उसे सजा भी मिल सकती है।

(ii) परमादेश-परमादेश का अर्थ है आदेश। यह किसी भी अधिकारी द्वारा जारी किया जा सकता है। इसके द्वारा किसी भी व्यक्ति को अपनी ड्यूटी पूरी करने के लिये कहा जाता है जो कि उसने करने से मना कर दिया हो। यह आदेश राष्ट्रपति, राज्यों के राज्यपाल, तथा सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के विरुद्ध जारी नहीं किया जा सकता। यह किसी व्यक्तिगत या निजी संस्था के विरुद्ध भी नहीं जारी किया जा सकता।

(iii) प्रतिषेध-यह रिट उच्च न्यायालय द्वारा जारी की जाती है। सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय निम्न कोर्ट का यह रिट जारी करता है। यह निम्न कोर्ट को अपने अधिकार क्षेत्र में सुनवाई के लिए किसी केस को निषेध मानती है।

(iv) अधिकार पृच्छा-इस रिट के द्वारा सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय किसी निम्न कोर्ट द्वारा अपने अधिकार क्षेत्र में रखे गये रिकार्ड को मंगा सकती है।

(v) उल्लेख-इस रिट के माध्यम से कोर्ट किसी व्यक्ति उसके बारे में पूछ सकता है कि किस अधिकार क्षेत्र से वह किसी कार्यालय अथवा सत्ता में आसीन है।

प्रश्न 3. नीति निर्देशक सिद्धांतों एवं मूल कर्तव्यों का क्रियान्वयन एवं उनकी सीमाओं पर चर्चा कीजिए।

उत्तर-

नीति निर्देशक सिद्धांतों एवं मूल

कर्तव्यों का क्रियान्वयन

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद विभिन्न सरकारों ने नीति-निर्देशक सिद्धांतों के अनुसार कई योजनाएँ कार्यक्रम एवं कानून बनाने एवं विभिन्न प्रकार के आयोगों का गठन किया। योजना आयोग जिसका समाप्त करके नीति आयोग बनाया गया उसने पंचवर्षीय योजनाओं को शुरू किया जिनका प्रमुख लक्ष्य था सामाजिक एवं आर्थिक समानता एवं न्याय प्राप्त करना। भूमि सुधार कार्यक्रमों के माध्यम से राज्यों में जमींदारी प्रथा को समाप्त किया गया, काश्तकारी व्यवस्था में सुधार किया गया, जिससे ग्रामीण समाज में असमानताओं को दूर किया गया। सरकार ने कमजोर वर्गों की सहायता के लिए कई कदम उठाये। इनमें गरीबों के हितों की सुरक्षा के कानून शामिल हैं। मजदूरों को न्यूनतम मजदूरी सुनिश्चित करना ठेके पर मजदूरों की रक्षा करना, गरीबों को मुफ्त कानूनी सहायता प्रदान करना, बाल मजदूरी समाप्त करना बधुआ मजदूरी समाप्त करना तथा औद्योगिक विवादों का निपटारा करना इत्यादि। महिलाओं की सहायता के लिए भी कई कदम उठाये गये, जैसे- मातृत्व लाभ के कानून बनाना और समान वेतन लागू करना ताकि महिलाओं के हितों की रक्षा की जा सके। सरकार ने वन्य जीव संरक्षण के लिए भी कई कानून पारित किये, तथा पर्यावरण की रक्षा के लिए केन्द्र एवं राज्य पर्यावरण संरक्षण बोर्ड की भी स्थापना की। सरकार ने सूती उद्योग को बढ़ावा देने के लिये खादी एवं ग्रामीण उद्योग बोर्ड, हथकरघा एवं हस्तशिल्प बोर्ड की भी स्थापना की। सरकार ने ऐतिहासिक महत्व के स्थानों स्मारकों के संरक्षण के लिए भी कानून पारित किये। अनुसूचित जाति जनजाति एवं पिछड़े वर्गों के हितों की रक्षा के लिए आरक्षण की व्यवस्था की। वर्गों के ऊपर हो रहे सामाजिक शोषण के खिलाफ भी कई कानून पारित किये। ग्राम पंचायतों की स्थापना एवं इनमें कमजोर वर्गों को आरक्षण देने से इन वर्गों का सशक्तिकरण हुआ है। कई प्रकार के कार्यक्रमों जैसे सामुदायिक विकास कार्यक्रम, रोजगार गारंटी कार्यक्रमों ने लोगों को सशक्त बनाया है तथा इनकी भागीदारी भी बढ़ी है।

भावशाली तरीके से इन नीति-निर्देशक सिद्धांतों को लागू करने के लिए सरकार ने कई प्रकार के कानून पारित किये हैं। वर्मा समिति ने मूल कर्तव्यों को प्रभावशाली बनाने के लिए कई प्रकार की सिफारिशें की हैं। इस समिति की अध्यक्षता न्यायाधीश जे. एस. वर्मा ने की थी, जिसे हम नागरिकों के मूल कर्तव्य (1999) समिति के नाम से जानते हैं। यह समिति सर्वोच्च न्यायालय के नोटिस के जवाब में बनाई गयी थी, जिसमें यह कहा गया था कि सरकार नागरिकों को मूल कर्तव्य सिखाने के लिए क्या योजना बना रही है। वर्मा समिति ने निम्न सिफारिशें की थी-

(क) मूल कर्तव्य सार्वजनिक जीवन में नागरिकों के मानकों में वृद्धि करेंगे, इसलिए सभी व्यक्तियों को इन कर्तव्यों का पालन करना चाहिए तथा इन्हें आगे बढ़ाना चाहिए।

(ख) लोक पदों पर आसीन व्यक्तियों को भाई-भतीजावाद एवं अपने मतलब से दूर रहना चाहिए, उनकी प्राथमिकता लोक हित होना चाहिए न कि व्यक्तिगत हित।

(ग) सार्वजनिक कार्यालयों में कार्य करने के लिए ईमानदारी एवं निष्ठा सबसे प्रमुख सिद्धांत होगा।

(घ) सार्वजनिक जगह पर कार्य करने वाले सभी व्यक्ति जनता के प्रति उत्तरदायी होने चाहिये।

(ङ.) उन्हें जितना संभव हो सके सभी निर्णय तथा कार्य पूरी तरह से सार्वजनिक करने चाहिये।

(च) लोक सेवकों को हमेशा ईमानदारी कायम रखनी चाहिये।

(छ) नेतृत्व सबसे प्रमुख एवं महत्वपूर्ण होता है इसलिए नेतृत्व की क्षमता एवं कुशलता को बढ़ावा दिया जाना चाहिये।

मूल कर्तव्यों को मजबूत बनाने के लिये, वर्मा समिति ने कुछ प्रचलित कानूनों की पहचान की थी ताकि इन कर्तव्यों को सही ढंग से लागू किये जा सकें। ये इस प्रकार हैं :-

- (1) जनप्रतिनिधि कानून (1951)
- (2) गैर-कानूनी गतिविधि रोधक कानून (1967)
- (3) नागरिक अधिकार संरक्षण कानून (1955)
- (4) वन्य जीव संरक्षण कानून (1972)
- (5) राष्ट्रीय सम्मान की अवमानना पर रोक संबंधी अधिनियम (1977)
- (6) वन संरक्षण अधिनियम (1980)

इन कर्तव्यों को प्रभावशाली तरीके से लागू करने के लिए सर्वोच्च न्यायालय ने सरकारों को निर्देश भी जारी किये हैं। न्यायालय ने केन्द्र सरकार को 2003 में यह निर्देश दिया कि वो वर्मा समिति एवं संविधान समीक्षा आयोग (2000) की सिफारिशों को लागू करे।

नीति निर्देशक सिद्धांतों एवं मूल कर्तव्यों की सीमाएं

नीति निर्देशक तत्वों की प्रमुख सीमा यह है कि राज्य इन्हें कानूनी रूप से लागू करने को बाध्य नहीं है। इसके बावजूद कि राज्य का यह नैतिक दायित्व है कि इन्हें लागू करे और इन्हें संविधान में भी जगह दी गयी है। निर्देशक सिद्धांत न्यायोचित नहीं हैं इसलिए समाज के ताकतवर वर्ग के लोग राजनीतिक एवं आर्थिक दबाव बनाते हैं। संविधान सभा के कुछ सदस्यों में इनकी इसी कमी को उजागर भी किया था। के. टी. साह ने यह टिप्पणी की कि निर्देशक सिद्धांतों की सीमाएं इनको कमजोर करेगी। जबकि टी. टी कृष्णामाचारी ने इन्हें जनभावनाओं के खिलाफ बताया था। वहीं के. सन्थानम ने कहा कि इनको निर्देश देना केन्द्र एवं राज्यों के बीच विवाद को बढ़ावा दे सकता है। इसके साथ-साथ राष्ट्रपति एवं प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री एवं राज्यपाल के बीच टकराव या विवाद बढ़ सकता है विशेषकर इन्हें लागू करने, कानून बनाने, दिशा-निर्देशक इत्यादि में। इसी प्रकार मूल कर्तव्य भी गैर-न्यायोचित एवं गैर-कानूनी भी हैं इसी कारण इन्हें भी कुछ सीमाओं में बाँधा गया है क्योंकि इनका उल्लंघन करने पर किसी भी नागरिक को कोर्ट सजा नहीं दे सकता। इस प्रकार निर्देशक सिद्धांत एवं मूल कर्तव्यों की प्रकृति समान है। भारत में मूल कर्तव्यों का स्वरूप अन्य देशों से भिन्न है। क्योंकि सोवियत संघ यूगोस्लाविया, चीन, पोलैण्ड, नीदरलैंड, जापान वियतनाम एवं अलबेनिया में मूल कर्तव्य कानूनी रूप से लाजमी हैं एवं इन्हें लागू करवाना राज्य का दायित्व है। मूल कर्तव्यों का नैतिक सामाजिक एवं आर्थिक महत्व भी है। क्योंकि इनको पूरा करने पर ही आप अपने अधिकारों पर दावा कर सकते हैं। मूल कर्तव्यों को महसूस करना एवं इनकी चेतना कुछ देशों में भारत में बढ़ी भी है क्योंकि न्यायालय नागरिक समाज संगठनों,

राजनीतिक दलों, एवं सरकार ने भी इन कर्तव्यों के महत्व को रेखांकित किया है क्योंकि मूल कर्तव्य भी समाज के संपूर्ण विकास के लिए महत्वपूर्ण हैं।

प्रश्न 4. संविधान में मौलिक कर्तव्यों को किस प्रकार शामिल किया गया। समझाइये।

उत्तर-

संविधान में मौलिक कर्तव्यों का प्रवेश

प्रारंभ में, संविधान में मौलिक कर्तव्यों का प्रावधान नहीं था। लेकिन, अपवाद स्वरूप, अनुच्छेद 33 में कुछ मौलिक कर्तव्यों का प्रावधान था। इस अनुच्छेद के अनुसार सैनिक बलों एवं पुलिस को अनुशासन का पालन करना जरूरी था तथा उन्हें अपने कर्तव्यों का ठीक से पालन करना भी आवश्यक था, हालांकि संविधान में मौलिक कर्तव्य इसका हिस्सा नहीं था।

हालांकि संविधान के 42वें एवं 86वें संविधान संशोधन के अंतर्गत संविधान में इन मौलिक कर्तव्यों को शामिल करने का प्रावधान किया गया। 42वें संविधान संशोधन जो कि 1976 में लाया गया था, संविधान में एक अलग से भाग जोड़ा गया जिसमें मौलिक कर्तव्यों से संबंधित अनुच्छेद शामिल किये गये थे। 42वां संविधान संशोधन अधिनियम आपातकाल के दौरान 1975-1977 पारित किया गया था। इस संशोधन के अनुसार सभी व्यक्तियों को कुछ मौलिक कर्तव्यों का पालन करना आवश्यक था। चाहे वे सैनिक हों या पुलिस सबको कुछ न कुछ मौलिक कार्य करना, आवश्यक था। 2002 में 86वें संविधान संशोधन ने सभी बच्चों जिनकी उम्र 6 से 14 वर्ष के बीच में थी, उनके अभिभावकों को उन्हें शिक्षा प्रदान कराने का मौलिक कर्तव्य है। इस संशोधन ने ही बच्चों की शिक्षा को मौलिक अधिकार का दर्जा प्रदान किया। इन संशोधनों के कारण ही हमारे संविधान के भाग चार ए में अनुच्छेद 51ए में वर्णित मौलिक कर्तव्य अनुच्छेद 29 1 में सार्वभौम मानव अधिकारों के समतुल्य पाया गया है। इसके अनुसार सभी नागरिकों का यह दायित्व है कि उन्हें कुछ कर्तव्यों का पालन करना चाहिये तभी जाकर उनका व्यक्तिगत विकास संभव है। 42वें एवं 86वें संविधान संशोधन के पारित होने के पश्चात् भारत के नागरिकों को 11 मौलिक कर्तव्य दिये गये हैं। ये मौलिक कर्तव्य इस प्रकार हैं-

- (1) संविधान का सम्मान करें तथा इसके आदर्श एवं सस्थानों का सम्मान करें, राष्ट्रीय ध्वज एवं राष्ट्रगान का आदर करें।
- (2) राष्ट्रीय स्वतंत्रता संघर्ष के आदर्श विचारों का अनुसरण करें।
- (3) भारत की संप्रभुता, एकता एवं अखंडता की रक्षा करें।
- (4) देश की रक्षा करें तथा जब जरूरत हो तब देश की सेवा करने के लिए हमेशा तत्पर रहें।
- (5) भारत की जनता के बीच भाईचारा बनाये रखें तथा सभी धर्मों का सम्मान करें। आपसी सद्भाव बनाये रखें, तथा सभी धर्म, भाषा, क्षेत्र एवं समुदाय के नाम पर भेदभाव न करें। हमेशा महिलाओं का आदर एवं सम्मान करें।
- (6) हमारी बहुमूल्य संस्कृति एवं विरासत को संजोये रखें तथा इसकी कीमत को पहचानें।
- (7) हमारे प्राकृतिक वातावरण पर्यावरण की रक्षा करें, जैसे जंगल, झील, नदियां तथा वन्य जीवन की रक्षा करें एवं सभी प्रकार के जंगली जीवों की रक्षा करें।
- (8) वैज्ञानिक सोच, मानवीयता, तथा अपने अंदर चेतना का विकास करें।

(9) हमेशा सार्वजनिक सम्पत्ति की रक्षा करें तथा हिसा न करें।

(10) हमेशा उच्च विचार रखें जिससे कि हमारा राष्ट्र सदैव ऊंचे स्तर तक पहुँचे और राष्ट्र उन्नति को प्राप्त कर सके।

(11) जो भी अभिभावक एवं संरक्षक हो, वो अपने बच्चे के लिए शिक्षा की व्यवस्था करे एवं शिक्षा के अवसर प्रदान करे विशेषकर 6 से लेकर 14 वर्ष के बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था करे।

मौलिक कर्तव्यों की प्रमुख विशेषताएँ भी हैं वो इस प्रकार हैं :-

(क) मौलिक कर्तव्य सामाजिक एवं नैतिक दोनों ही प्रकृति के हैं।

(ख) ये भारतीय जीवन शैली पर अधिक बल देते हैं विशेषकर भारतीय संस्कृति की रक्षा एवं उसके सम्मान की बात करते हैं।

(ग) ये प्रावधान विदेशी लोगों पर लागू नहीं होते हैं केवल भारत के नागरिकों को ही इन संविधानिक कर्तव्यों का पालन करेगा।

(घ) मौलिक अधिकार एवं मौलिक कर्तव्यों में साफ अंतर है।

(ङ) ये गैर-न्यायोचित एवं गैर प्रवर्तनीय हैं।

42वाँ संशोधन स्वर्ण सिंह समिति रिपोर्ट की सिफारिशों के आधार पर बनाया गया था। स्वर्ण सिंह समिति का गठन इंदिरा गांधी सरकार ने 1976 में किया था। सरदार स्वर्ण सिंह इस समिति के अध्यक्ष थे। इस समिति ने संविधान में एक अलग भाग जोड़ने की सिफारिश की थी जिसका संबंध मौलिक कर्तव्यों से था। इस समिति की सिफारिशों के आधार पर ही सरकार ने संविधान में कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन किये जिसे हम 42वें संविधान संशोधन के रूप में जानते हैं। यह संशोधन 3 जनवरी 1979 से लागू किया गया। स्वर्ण सिंह समिति ने भारत के नागरिकों के लिए आठ प्रकार के कर्तव्यों का सुझाव दिया जिसे संविधान में शामिल किया गया। ये आठ प्रकार के कर्तव्य इस प्रकार हैं।

(1) संविधान एवं कानून की रक्षा एवं उनकी पालना करना

(2) राष्ट्र की संप्रभुता को बनाये रखना तथा ऐसे कार्य करना जिसे कि देश की एकता एवं अखंडता मजबूत हो सके।

(3) संविधान में उल्लेखित जनतांत्रिक संस्थाओं का सम्मान करना तथा ऐसे कार्य नहीं करना जिससे कि इनके सम्मान और सत्ता को ठेस पहुँचे।

(4) देश की रक्षा करना तथा जरूरत पड़ने पर राष्ट्रीय सेवा के लिए तत्पर रहना यहाँ तक कि सैनिक सेवा के लिए भी तैयार रहना।

(5) साम्प्रदायिकता को किसी भी रूप में सहन नहीं करना।

(6) राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धांतों को लागू करने में राज्य की सहायता एवं सहयोग करना तथा लोगों के लिए भलाई के कार्य करना ताकि सामाजिक एवं आर्थिक न्याय मिल सके।

(7) हिंसा की निंदा करना, सार्वजनिक सम्पत्ति की रक्षा करना तथा ऐसे कार्य न करना जिससे कि सार्वजनिक सम्पत्ति को नुकसान हो।

(8) कानून के अनुसार कर अदा करना।

लेकिन कांग्रेस सरकार जिसकी अगुवाई प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी कर रही थी, उसने स्वर्ण सिंह समिति की सभी सिफारिशों एवं सुझावों को स्वीकार नहीं किया।

प्रश्न 5. मौलिक कर्तव्य प्रकृति से गैर-न्यायसंगत है? समीक्षा कीजिए।

उत्तर- मौलिक कर्तव्यों का गैर-न्यायसंगत होना

मौलिक कर्तव्य गैर-न्यायसंगत एवं गैर लागू करने योग्य होते हैं। संविधान में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जिससे कि इन्हें प्रत्यक्ष रूप से लागू किया जा सके। इसका अर्थ यह कि यदि कोई नागरिक इन मौलिक कर्तव्यों का उल्लंघन करता है तो उन्हें न्यायालय द्वारा दंड नहीं दिया जायेगा। इस प्रकार मौलिक कर्तव्य राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धांतों की तरह हैं। मौलिक कर्तव्यों को भाग तीन के अंत में नहीं रखा गया है जो कि न्यायोचित है जबकि इन्हें भाग चार (ए) में रखा गया है जो कि गैर-न्यायसंगत है। मौलिक कर्तव्यों को लागू करने के बारे में भारत अन्य देशों के मुकाबले में अलग है। कई अन्य देश जैसे कि सोवियत संघ, यूगोस्लाविया, तथा अल्बेनिया के संविधानों में इन मौलिक कर्तव्यों को कानूनी रूप से लागू करने का प्रावधान है जबकि भारत में ऐसा नहीं है। जैसा कि हम पिछले भाग में पढ़ चुके हैं मौलिक कर्तव्यों को हमारे संविधान में स्वर्ण सिंह समिति की सिफारिशों के पश्चात् शामिल किया गया था। वी. के. आर. वी. राव ने स्वर्ण सिंह समिति रिपोर्ट की सिफारिशों की आलोचना की थी। उन्होंने इनकी इस आधार पर आलोचना की थी कि यदि इन मौलिक कर्तव्यों के उल्लंघन पर कोई कानूनी सजा नहीं है तो इन्हें लागू नहीं करवाया जा सकता है।

उनका मानना था कि लोगों में साहस एवं इच्छा शक्ति की कमी है इसलिए इनका आदर नहीं करते। इसलिए कर्तव्यों को ठीक प्रकार से आदर नहीं कर सकते जब तब कि इन्हें कानूनी तौर पर बाध्यकारी नहीं बनाया जाता। अधिकारों का कोई नैतिक आधार नहीं है, इन्हें ठीक प्रकार से लागू किया जा सकता है मौलिक कर्तव्यों के साथ में। 1998 में सर्वोच्च न्यायालय ने भारत की सरकार को एक नोटिस जारी किया जिसमें मौलिक कर्तव्यों के आदर करने की जरूरत को महसूस किया गया, इसमें सर्वोच्च न्यायालय ने भारत की सरकार से यह कहा कि सरकार के पास ऐसी कौन सी योजना है ताकि देश में नागरिकों को इन कर्तव्यों के बारे में पढ़ाया जा सके। इस नोटिस के जवाब में, भारत सरकार ने एक समिति का गठन किया जिसके अध्यक्ष न्यायाधीश जे. एस. वर्मा थे। इस समिति को हम वर्मा समिति के नाम से भी जानते हैं। इस समिति का गठन 1999 में किया गया जिसका मूल उद्देश्य था मौलिक कर्तव्यों के लागू होने का परीक्षण करना तथा कुछ सिफारिशें करना जिससे कि लोगों को इनके बारे में शिक्षित किया जा सके ताकि वे इनका आदर कर सकें। वर्मा समिति ने निम्नलिखित सिफारिशें की थी-

(1) मौलिक कर्तव्य नागरिकों के सार्वजनिक जीवन में बदलाव लाएँगे। इसलिए सभी व्यक्ति इन कर्तव्यों का पालन करें एवं उनका आदर करें।

(2) सार्वजनिक पदों पर आसीन सभी व्यक्ति व्यक्तिवादी या भाई-भतीजावाद से दूर रहें। उनकी प्राथमिकता व्यक्तिगत हितों की बजाय सार्वजनिक हित होना चाहिए।

(3) सार्वजनिक पदों पर कार्य करने के लिए ईमानदारी सबसे बड़ा सिद्धांत होता है।

(4) सार्वजनिक पदों पर बैठे लोग जनता के प्रति अपने कार्यों एवं निर्णयों के लिए उत्तरदायी होने चाहिए।

(5) उन्हें अपने निर्णयों एवं कार्यों के लिए हमेशा खुला रहना चाहिए।

(6) सार्वजनिक पदों पर आसीन लोगों को ऑफिस के अंदर हमेशा ईमानदारी कायम रखनी चाहिए।

(7) सभी पदाधिकारियों को एक अच्छे लीडर की भूमिका निभायी चाहिए। उन्हें नेतृत्व के सारे सिद्धांतों को अपनाकर एक मिसाल कायम करनी चाहिये।

मौलिक कर्तव्य राष्ट्र एवं समाज की नींव को मजबूत बना सकते हैं। लेकिन केवल अध्यादेश इसे पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं है। कानूनों को प्रभावकारी तरीके से लागू किया जाना ही मौलिक कर्तव्यों के प्रभावकारी रूप से पूरा करने के लिए आवश्यक है। यह तभी संभव है जब सभी नागरिक इन कर्तव्यों के प्रति पूरी तरह से प्रतिबद्ध एवं उनका पूरी तरह से आदर करें। लोगों में इन कर्तव्यों के प्रति जागरूकता लाने के लिए वर्मा समिति ने कुछ प्रचलित कानूनों की पहचान की है ताकि इनका सही प्रकार से इन्हें विवरण इस प्रकार है-

(1) 1951 का जन प्रतिनिधि कानून- इस कानून के अनुसार यदि कोई संसद सदस्य या विधानसभा सदस्य किसी भी भ्रष्टाचार जैसी कार्य में अपने आपको लिप्त पाया गया तो उसे अपनी सदस्यता से निरस्त किया जा सकता है।

(2) 1967 का गैर-कानूनी कार्यप्रणाली संरक्षण अधिनियम-राष्ट्र की सीमा के अंदर कोई भी साम्प्रदायिक संगठन किसी भी प्रतिबंधित कार्य को न करे जिससे कि समाज में अशांति एवं असुरक्षा पैदा हो।

(3) 1955 का नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम-इस अधिनियम के अनुसार किसी भी व्यक्ति को सजा मिल सकती है यदि वह अस्पृश्यता या छुआछूत को बढ़ावा दे।

(4) 1972 का वन्यजीवन संरक्षण अधिनियम-यह अधिनियम जंगली जानवरों के संरक्षण एवं उनकी रक्षा की बात करता है। इसमें जंगली जानवरों के अलावा पक्षी एवं पेड़-पौधों की सुरक्षा की भी बात शामिल है। इस कारण से यह अधिनियम गैर कानूनी तरीके से जानवरों की खरीद फरोख्त पर प्रतिबंध लगाता है।

(5) 1971 का राष्ट्रीय सम्मान के अपमान निरोधक कानून-इस अधिनियम से कोई भी व्यक्ति राष्ट्रीय ध्वज, राष्ट्रगान तथा संविधान का अपमान नहीं कर सकता है। यह अधिनियम किसी भी प्रकार के अपमान एवं अनादर पर पूर्ण रोक लगाता है।

(6) 1980 का वन संरक्षण अधिनियम-यह अधिनियम प्रकृति के नुकसान के खिलाफ है। यह पूर्ण रूप से वनों की कटाई या उन पर हो रही बर्बादी पर रोक लगाता है। यहाँ तक कि इस अधिनियम के द्वारा वनों का प्रयोग किसी भी मानवीय कार्य प्रणाली के लिए नहीं किया जा सकता।

भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने सरकार को स्पष्ट दिशा-निर्देश जारी किये हैं ताकि इन कर्तव्यों के प्रभावकारी क्रियान्वन के लिये एक अनुकूल वातावरण पैदा किया जा सके। इस संबंध में उच्च न्यायालय ने केन्द्र सरकार को अगस्त 2003 में यह निर्देश दिया कि वह राष्ट्रीय आयोग, संविधान की समीक्षा आयोग तथा वर्मा समिति की सिफारिशों को लागू करे। अनुपमा राव ने अपने एक लेख में वर्मा समिति की सिफारिशों की आलोचना की थी। उन्होंने कहा कि वर्मा समिति राज्य एवं राष्ट्र से संबंधित नागरिकों के लिए अपर्याप्त रूप से कर्तव्यों पर बल देती है। यह पूरी तरह से नागरिकों को असमान मानती है तथा नागरिकता के लिए कर्तव्य पूर्व शर्त की तरह व्यवहार करती है।

प्रश्न 6. राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धान्तों का अर्थ स्पष्ट करते हुए वर्गीकरण प्रस्तुत कीजिए।

उत्तर- राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धान्तों का अर्थ

राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धान्त केन्द्रीय एवं राज्य स्तर की सरकारों को दिए गए निर्देश हैं। यद्यपि ये सिद्धान्त न्याययोग्य नहीं हैं, ये देश के प्रशासन में मूल भूमिका निभाते हैं। राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धान्त का विचार आयरलैंड के संविधान से लिया गया है। आर्थिक न्याय की स्थापना एवं कुछ लोगों के हाथों में धन के संचय को रोकने के लिए इन्हें संविधान में शामिल किया गया है। इसलिए कोई सरकार इसकी अवहेलना नहीं कर सकती। दरअसल ये निर्देश भावी सरकारों को इस बात को ध्यान में रख कर दिए गए हैं कि विभिन्न निर्णयों एवं नीति-निर्धारण में इनका समावेश हो।

नीति निर्देशक सिद्धान्तों का वर्गीकरण

नीति-निर्देशक सिद्धान्तों को चार श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है। वे हैं-

- (1) आर्थिक और सामाजिक सिद्धान्त;
- (2) गाँधीवादी सिद्धान्त;
- (3) अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा से संबंधित सिद्धान्त और
- (4) विविध सिद्धान्त

आर्थिक और सामाजिक सिद्धान्त

लोगों के सामाजिक और आर्थिक कल्याण के लिए राज्य निम्नलिखित प्रयास करेगा:

- (1) स्त्री और पुरुष दोनों के लिए आजीविका का पर्याप्त साधन जुटाना।
- (2) कुछ हाथों में संपत्ति का संकेन्द्रण रोकने के लिए आर्थिक व्यवस्था का पुनर्निर्माण।
- (3) समान कार्य के लिए स्त्री और पुरुष दोनों को समान पारिश्रमिक मिले।
- (4) स्त्री पुरुष और बच्चों के लिए योग्य रोजगार एवं कार्य का स्वच्छ वातावरण तैयार

करता।

- (5) बच्चों को शोषण और नैतिक अधोगति से बचाना।

(6) रोजगार एवं शिक्षा का अधिकार तथा बेराजगारी, बुढ़ापे बीमारी एवं असमर्थता को स्थिति में सरकारी सहायता के कारगर उपाय करना।

(7) कार्य का न्यायोचित एवं मानवीय वातावरण तैयार करना एवं प्रसूति सेवा की व्यवस्था करना। (8) सार्वजनिक उपक्रमों के प्रबंधन में मजदूरों की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाना।

(9) कामगारों विशेषकर अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के लिए शिक्षा प्रबंध एवं उनके आर्थिक हिता को बढ़ावा देना।

(10) सभी कामगारों के लिए उचित अवकाश एवं सांस्कृतिक मनोरंजन के अवसर उपलब्ध कराना।

(11) जीवन स्तर को ऊँचा करने एवं सार्वजनिक स्वास्थ्य की सुविधा प्रदान करना।

(12) छः साल तक के सभी बच्चों को बाल्यकाल की सुविधाएँ एवं शिक्षा की व्यवस्था करना।

गांधीवादी सिद्धान्त

कुछ सिद्धान्त ऐसे हैं जो महात्मा गांधी के आदर्शों के आधार पर बनाए गए हैं। ये निम्नलिखित हैं-

- (1) गांव में पंचायतो का गठन करना।
- (2) गांव में कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देना।
- (3) नशीले पदार्थों और शराब, आदि पर प्रतिबंध लगाना जो कि स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं।
- (4) गाय, भैंस आदि दुधारु पशुओं की नस्लों को सुधारना तथा उनके वध पर प्रतिबंध लगाना।

विविध नीति-निर्देशक सिद्धांत

विश्व शांति एवं सुरक्षा की दिशा में सहयोग का वातावरण तैयार करने के लिए भारत निम्नलिखित उपाए करेगा:

- (1) अन्तर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा को बढ़ावा।
- (2) राष्ट्रों के बीच न्यायोचित एवं सम्मानजनक संबंध स्थापित करना।
- (3) अन्तर्राष्ट्रीय कानून एवं संधि से उत्पन्न दायित्वों का सम्मान करना।
- (4) अन्तर्राष्ट्रीय विवादों का पारस्परिक समझौते के द्वारा हल ढूँढना।

विविध नीति-निर्देशक सिद्धांत

इस वर्ग के सिद्धांत राज्य को निर्देश देते हैं कि :-

- (1) सभी भारतीयों के लिए समान आचार संहिता (सिविल) बनाई जाए।
- (2) ऐतिहासिक इमारतों का संरक्षण किया जाए।
- (3) पर्यावरण को प्रदूषण रहित बनाना एवं वन्य जीवन का संरक्षण किया जाए।
- (4) उपयुक्त विधायन के द्वारा निःशुल्क कानूनी सहायता की व्यवस्था की जाए।

प्रश्न 7. शिक्षा की सार्वभौमिकता, बाल मजदूरी और महिलाओं के स्तर में राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धान्तों की भूमिका का वर्णन कीजिए।

उत्तर- नीति-निर्देशक सिद्धांत: शिक्षा की सार्वभौमिकता,

बाल मजदूर और महिलाओं का स्तर

सामाजिक आर्थिक न्याय एवं कल्याणकारी राज्य के उद्देश्यों की प्राप्ति में अशिक्षा सबसे बड़ी बाधा है।

1 शिक्षा की सार्वभौमिकता

पहले आपने पढ़ा है कि नीति-निर्देशक सिद्धांत राज्य को यह निर्देश देते हैं कि संविधान के लागू होने से 10 वर्ष के अंदर 14 वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिए निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा के लिए दवाव डालें।

भारत की स्वतंत्रता के समय भारत की केवल 14 प्रतिशत आबादी शिक्षित थी हमारी सरकार ने शिक्षा के महत्त्व को समझा और लोगों तक शिक्षा पहुंचाने पर जोर दिया। परंतु अभी भी हमारी जनसंख्या का बहुत बड़ा हिस्सा अशिक्षित है। हमारा सर्वप्रथम प्रयत्न प्राथमिक शिक्षा को व्यापक बनाए जाने पर है। प्राथमिक स्तर पर स्कूल छोड़ने वालों की संख्या बढ़ते रहने के कारण 15 से 35 वर्ष के आयु वर्ग में अनपढ़ों की संख्या बढ़ती जा रही है।

1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार सरकार ने राष्ट्रीय साक्षरता योजना एवं ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड जैसे अभियान शुरू किए ताकि साधारण लोगों तक प्राथमिक शिक्षा

पहुंवाई जा सके। व जो बचपन में शिक्षा से वंचित रह गए, उन्हें शिक्षित करने के लिए सरकार तथा कई स्वयं सेवी संस्थाओं के विशेष प्रयत्नों से रात्रि पाठशाला और वयस्क शिक्षा केन्द्र खोले जा रहे हैं।

शिक्षा है। व्यापकता का उद्देश्य हासिल करने के लिए राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान तथा कई मुक्त विश्वविद्यालय स्थापित किए गए हैं। चौदह साल तक के बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने के लिए 2002 में छयासियों संविधान संशोधन के द्वारा इसे धारा 214 के अन्तर्गत नीति-निर्देशक सिद्धांत के स्थान पर मौलिक अधिकार का दर्जा दे दिया गया है।

बाल मजदूर

आपने पढ़ा है कि नीति-निर्देशक सिद्धांतों के अनुसार बच्चों को स्वस्थ रूप से विकसित होने के लिए अवसर और सुविधाएं प्रदान की जाएं। बच्चों के शोषण के विरुद्ध मौलिक अधिकारों के बारे में पढ़ा 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों को किसी भी प्रकार के रोजगार में नियुक्त करने पर प्रतिबंध लगा दिया है।

इन प्रावधानों के बावजूद वांछित परिणाम नहीं मिल पाया है। अधिकांश मामलों में बाल मजदूरी को समाप्त करने की दिशा में मां-बाप का दृष्टिकोण ठीक नहीं है। ये अपने बच्चों को कोई भी काम करके पैसे कमाने तथा परिवार की आय में योगदान करने के लिए विवश करते हैं। इच्छा शक्ति की कमी के अतिरिक्त निर्धनता एवं सामाजिक कलंक इस समस्या के निराकरण में बाधक है। जब तक इस सामाजिक चुनौती को समाप्त करने के लिए जागरूकता और इच्छा शक्ति अन्दर से पैदा नहीं होती, सरकार द्वारा विभिन्न स्तरों पर किए गए प्रयास निरर्थक साबित होंगे। डॉ. अब्दुल कलाम के भारत 2020 का स्वप्न तभी सार्थक हो सकता है जब देश के भविष्य, बच्चे, सुरक्षित एवं शोषण मुक्त हो। बच्चों को अपने बचपन के आनंद एवं शिक्षा के अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता है।

महिलाओं की स्थिति

भारतीय समाज पुरुष प्रधान समाज है जिसमें पिता परिवार का मुखिया होता है और मां की स्थिति उससे गौण है। ऐसी स्थिति में महिला की स्थिति स्वाभाविक रूप से कमजोर हो जाती है। कठोर सामाजिक प्रथाएँ एवं धार्मिक रीतियों जैसे पर्दा एवं दहेज के कारण भी महिलाओं को काफी हद तक भुगतना पड़ता है। 2001 के जनगणना के अनुसार कुल महिलाओं की संख्या 49 करोड़ 57 लाख है जो कुल जनसंख्या का 48.3 प्रतिशत है। हमारे संविधान में महिलाओं की स्थिति में उत्थान एवं शिक्षा के लिए मौलिक अधिकार तथा राज्य के नीति-निर्देशक तत्वों द्वारा बल दिया गया है। उन्हें आजीविका के साधन एवं पुरुषों की तरह समान कार्य के लिए समान वेतन का अवसर प्राप्त है। महिला कामगारों को स्वास्थ्य सुविधा एवं प्रसूति के दौरान अवकाश की सुविधा भी प्राप्त है।

मौलिक कर्तव्य भी भारत के हर नागरिक को महिलाओं के सम्मान के खिलाफ कुछ भी करने से रोकता है। विभिन्न अधिनियमों एवं न्यायिक निर्णयों ने महिलाओं की प्रतिष्ठा स्थापित की है। उनके अधिकारों की रक्षा के लिए पारिवारिक संपत्ति में उनको हिस्सा देने के उपाए किए गए हैं। दहेज के लिए दुल्हनों को जलाए जाने, पत्नियों का प्रतारण, सती जैसी निष्ठुर प्रथाओं के उन्मूलन के लिए कानून बनाए गए हैं। कन्यावध, भ्रूण हत्या, लड़कियों के

प्रति भेद-भाव एवं बाल विवाह पर प्रतिबंध कुछ ऐसे उपाय हैं जिससे महिलाओं की स्थिति सुधर सकती है।

महिला सशक्तीकरण के लिए 1992 में संविधान के 73वें एवं 74वें संशोधनों द्वारा पंचायतों और नगरपालिकाओं में महिलाओं के लिए एक तिहाई सीटें आरक्षित की गयी हैं। संसद एवं राज्य विधायिकाओं में इसी तरह के आरक्षण का प्रस्ताव किया गया है। यद्यपि बहुत कुछ हासिल किया जा चुका है, फिर भी लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना का उद्देश्य प्राप्त करने के लिए बहुत करना बाकी है।

प्रश्न 8. नीति-निर्देशक सिद्धांतों की आलोचनात्मक व्याख्या उत्तर- नीति-निर्देशक सिद्धांतों की आलोचनात्मक व्याख्या

कई आलोचकों ने राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धांतों को 'नव वर्ष की शुभकामनाओं' से बेहतर नहीं माना है। दरअसल इन उच्च आदर्शों को संविधान में शामिल करने के औचित्य पर भी सवाल उठाया गया है। माना जाता है कि ये निर्देश मात्र शुभकामनाएँ हैं जिनके पीछे कोई कानूनी मान्यता नहीं है। सरकार इन्हें लागू करने के लिए बाध्य नहीं है। आलोचकों का मानना है कि इन सिद्धांतों को व्यावहारिक धरातल पर नहीं उतारा जा सकता है।

इन सबके बावजूद ये नहीं कहा जा सकता है कि ये सिद्धांत पूर्णरूपेण अर्थहीन हैं। इनकी अपनी उपयोगिता और महत्व है। नीति-निर्देशक सिद्धांत ध्रुवतारा की तरह हैं जो हमें दिशा दिखाते हैं। इनका मुख्य उद्देश्य सीमित संसाधनों के बावजूद जीवन के हर पहलू में यथाशीघ्र सरकार द्वारा सामाजिक आर्थिक न्याय की स्थापना करना है। कुछ सिद्धांतों को तो सफलतापूर्वक लागू भी किया गया है। वास्तव में कोई भी सरकार इन निर्देशों की अवहेलना नहीं कर सकती है क्योंकि वे जनमत का दर्पण हैं, साथ ही ये संविधान की प्रस्तावना की भी आत्मा हैं। इन्हें लागू करने की दिशा में उठाए गए कुछ कदम इस प्रकार हैं-

- (1) भूमि सुधार लागू किये गये हैं तथा जागीरदारी एवं जमींदारी प्रथा का उन्मूलन किया गया है।
- (2) बड़े पैमाने पर औद्योगीकरण हुआ है एवं हरित क्रांति द्वारा कृषि उत्पाद में काफी बढ़ोतरी हुई है।
- (3) महिलाओं के कल्याण के लिए राष्ट्रीय आयोग की स्थापना की गयी है।
- (4) व्यक्ति की भूसंपत्ति की सीमा तय करने के लिए भू-हदबन्दी लागू की गयी है।
- (5) रजवाड़ों को दिए जाने वाले प्रिवी पर्स का उन्मूलन किया गया है।
- (6) जीवन बीमा, साधारण बीमा एवं अधिकांश बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया है।
- (7) आर्थिक विषमता कम करने के लिए संपत्ति के अधिकार को मौलिक अधिकारों की सूची से निकाल दिया गया है।
- (8) निर्धनों की सहायता के लिए सरकार द्वारा जन वितरण प्रणाली के माध्यम से सहायता दी जाती है।
- (9) स्त्री और पुरुष दोनों को समान कार्य के लिए समान वेतन के लिए नियम बनाए गये हैं।
- (10) छूआछूत का उन्मूलन किया गया है। अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन-जाति तथा अन्य पिछड़े वर्गों के उत्थान के लिए कारगर प्रयास किए गये हैं।

(11) 73वें और 74वें संविधान संशोधन (1992) के द्वारा पंचायती राज को संवैधानिक दर्जा देते हुए और अधिक सशक्त बनाया गया है।

(12) ग्रामीण क्षेत्र में समृद्धि लाने के लिए लघु उद्योग एवं ग्रामीण उद्योग तथा खादी ग्रामोद्योग को मुख्य तत्व प्रोत्साहित किया गया है।

(13) भारत अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए सक्रिय रूप से संयुक्त राष्ट्र के साथ सहयोग करता रहा है।

केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा लिए गए उपरोक्त कदम यह दर्शाते हैं कि भारत में एक पंक्षनिरपेक्ष समाजवादी एवं लोककल्याणकारी राज्य की नींव डालने के लिए कई नीति-निर्देशक सिद्धांतों को लागू किया गया है। यह सच है कि सभी नीति-निर्देशक सिद्धांतों को पूर्णतया लागू करने के लिए बहुत कुछ करना बाकी है।

नीति-निर्देशक सिद्धांतों को लागू किए जाने के रास्ते में कई बाधाएँ हैं। इनमें से मुख्य हैं- (क) राज्यों में राजनीतिक इच्छा शक्ति का अभाव, (ख) लोगों में जागरूकता एवं संगठन का अभाव, और (ग) सीमित संसाधन।

लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. मौलिक अधिकारों की प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।

उत्तर- मौलिक अधिकारों की प्रमुख विशेषताएँ

मौलिक अधिकारों की महत्वपूर्ण विशेषताएँ इस प्रकार हैं:-

- (i) सभी व्यक्ति कानून के समक्ष समान हैं। अर्थात् सभी नागरिक कानून के अंतर्गत समान हैं। उन्हें धार्मिक स्वतंत्रता है, संगठन बनाने का अधिकार है तथा आंदोलन करने का समान अधिकार है। किसी भी व्यक्ति को उनके जीवन, स्वतंत्रता या संपत्ति से वंचित नहीं किया जा सकता यदि ये कानून के मुताबिक हो।
- (ii) अल्पसंख्यकों को उनकी भाषा, संस्कृति एवं लिपि को संरक्षित एवं सुरक्षित रखने की अनुमति है। मौलिक अधिकार वास्तव में व्यक्तियों को सुरक्षित रखते हैं तथा अल्पसंख्यक समुदाय को भेदभाव, राज्य कार्यवाही एवं पक्षपात से सुरक्षित रखा जाता है। संविधान में तीन अनुच्छेद व्यक्तियों को संरक्षण प्रदान करने के लिए बनाये गये हैं। संविधान के अनुच्छेद 17 के अंतर्गत असभ्यता यानी छूआछूत को समाप्त कर दिया गया है, अनुच्छेद 15 (2) के अंतर्गत किसी भी नागरिक को उनकी जाति, धर्म, नस्ल, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर सार्वजनिक स्थानों, दुकानों, रेस्टोरेंट, कुँए, सड़क इत्यादि के प्रयोग करने पर प्रतिबंध नहीं होना चाहिए, तथा अनुच्छेद 23 के अंतर्गत, बाल शोषण और बंधुआ मजदूरी पर रोक है। यह मुख्य रूप से मालिक और मजदूर या किसान के बीच का मामला अधिक है।
- (iii) कई प्रकार के साधन प्रदान किये गये हैं ताकि कोई भी नागरिक मौलिक अधिकारों को लागू करवाने के लिए सर्वोच्च न्यायालय या अन्य न्यायालय का दरवाजा खटखटा सकते हैं। दो प्रकार के उपाय किये गये हैं जिनके द्वारा मौलिक अधिकारों को लागू करवाया जा सकता है। पहला न्यायिक समीक्षा (न्यायिक पुनरावलोकन) तथा दूसरा याचिकाओं द्वारा। यदि किसी व्यक्ति के अधिकारों का उल्लंघन होता है तो याचिकाएँ दाखिल की जा सकती हैं। ये दोनों उपचार अनुच्छेद 32 के अंतर्गत दिये गये हैं।

(iv) मौलिक अधिकार प्राकृतिक एवं कानूनी दोनों ही हैं।

प्रश्न 2. मूलभूत आधार सिद्धांत क्या है?

उत्तर-मूलभूत आधार सिद्धांत के अनुसार संसद किसी भी संशोधन के द्वारा संविधान के मूलभूत ढाँचे को नहीं बदल सकती। इसमें मूल अधिकार, न्यायिक समीक्षा, धर्मनिरपेक्षता तथा संसदीय लोकतंत्र शामिल हैं। यह सिद्धांत 1973 में सर्वोच्च न्यायालय के एक निर्णय के बाद अस्तित्व में आया था। इसे हम केशवानंद भारती विरुद्ध केरल राज्य के केस के रूप में जानते हैं। इस केस में मठाधीश केशवानंद भारती ने सर्वोच्च न्यायालय में केरल सरकार के एक निर्णय को चुनौती दी थी। इसके अंदर केरल सरकार ने भूमि सुधार के तहत निजी जमीन को अधिग्रहण कर लिया था। इस निर्णय के विरुद्ध में सर्वोच्च न्यायालय ने यह फैसला सुनाया कि संविधान के मूल सिद्धांत अर्थात् मूल अधिकारों को परिवर्तित नहीं किया जा सकता है। हालांकि सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी माना कि निजी संपत्ति का अधिकार संविधान का मूल ढाँचा नहीं है। इसके बाद 1978 में 44वें संविधान संशोधन के द्वारा संपत्ति के अधिकार को मूल अधिकारों से हटा दिया गया। जैसा कि मूल अधिकारों को लागू करना कोर्ट की जिम्मेदारी है इसलिए कोर्ट ही इन्हें विशेष रूप से संरक्षित रखती है। जैसा कि हम ऊपर पढ़ चुके हैं कोर्ट मूल अधिकारों की रक्षा के लिये रिट जारी करता है। केशवानंद भारती केस से पूर्व भी कोर्ट ने गोलकनाथ विरुद्ध पंजाब राज्य मामले में 1967 में भी मूल अधिकारों की रक्षा की थी। इस केस में कोर्ट ने संसद के अधिकारों में कटौती की थी ताकि वह मूल अधिकारों में कटौती न कर सके। 1975 में इंदिरा गाँधी विरुद्ध राज नारायण केस में सर्वोच्च न्यायालय ने मूल आधार सिद्धांत को प्रयोग किया था उसके बाद 39वें संविधान संशोधन को भी हटा दिया गया जिसमें यह कहा गया कि राष्ट्रपति, उप-राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री तथा लोक सभा अध्यक्ष के चुनाव को न्यायिक समीक्षा की परिधि से दूर रखा जाय।

प्रश्न 3. मौलिक अधिकारों पर उचित प्रतिबंध क्यों आवश्यक है?

उत्तर-भारतीय संविधान ने सभी नागरिकों को सुरक्षा के पुरखा प्रबंध करने का प्रावधान किया है। इसमें सभी नागरिकों को विभिन्न अनुच्छेदों विशेषकर मौलिक अधिकारों के संबंध में उन्हें सुरक्षा प्रदान की है। हालांकि मौलिक अधिकार भी परिपूर्ण नहीं हैं। उनके ऊपर भी कुछ उचित प्रतिबंध लगाने का प्रावधान किया गया है। राज्य देश की सुरक्षा, एकता एवं संप्रभुता बनाये रखने के लिए स्वतंत्रता के अधिकार पर प्रतिबंध लगा सकता है। शांति व्यवस्था कायम करने के लिए कर्फ्यू लगाया जा सकता है तथा विदेशों के साथ अच्छे संबंध बनाये रखने के लिए प्रतिबंध लगाया जा सकता है। राज्य समानता के अधिकार पर भी कुछ उचित प्रतिबंध लगा सकता है जिसमें, समाज के वंचित, वर्गों खासकर महिलाओं, बच्चों सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े हुए वर्गों तथा अनुसूचित जाति एवं जन जाति वर्गों के लिए कुछ कल्याणकारी नीतियों को लागू कर सकती है।

अनुच्छेद 33 के अंतर्गत संसद को यह अधिकार दिया गया है कि वह सुरक्षा बलों सेना एवं पुलिस के मौलिक अधिकारों पर भी प्रतिबंध लगा सकती है। इस अनुच्छेद के मतलब हैं सुरक्षा बलों के अंदर अनुशासन की भावना कायम करना ताकि वे कानून एवं व्यवस्था बनाये रखने में अपना योगदान दे सकें। अनुच्छेद 33 के अंतर्गत जाति को

मौलिक अधिकार हैं कि वह अपने मौलिक अधिकार को लागू करने के लिए संविधान उपचार के अंतर्गत सर्वोच्च न्यायालय के पास जा सके। उच्च न्यायालय संवैधानिक उपचारों की याचिका की सुनवायी से मना कर सकता है।

प्रश्न 4. नीति निर्देशक सिद्धान्तों की उत्पत्ति का वर्णन कीजिए।

उत्तर-मूल अधिकारों को संविधान में संविधान सभा की अधिकारों की उप-समिति के सुझावों के अनुसार शामिल किया गया था। वास्तव में संविधान सभा में इसके ऊपर बहस भी हुई थी कि अधिकारों को दो भागों में बाँटा जाना चाहिए। न्यायोचित एवं गैर न्यायोचित या मूल अधिकार एवं निर्देशक सिद्धांत राज्यों को दिशा निर्देश देते हैं ताकि सभी वर्गों के लिए कल्याणकारी नीतियाँ बनाई जा सके ग्रेनविल ऑस्टिन ने कहा कि चार सदस्यों ने निर्देशक सिद्धांतों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। बी. एन राव. ए. के अय्यर, डा. बी. आर. अम्बेडकर तथा के. टी. साह। इन सबमें बी. एन. राय सबसे प्रभावशाली थे। नीति-निर्देशक सिद्धांतों की उत्पत्ति कराची प्रस्ताव के बाद हुई थी। जिसमें सामाजिक एवं राष्ट्रवादी विचारों को शामिल किया गया था। जैसा कि आपने इकाई संख्या 5 में पढ़ा होगा सप्रू समिति ने यह सुझाव दिया कि अधिकारों को दो भागों में विभाजित किया जाना चाहिए। न्यायोचित एवं गैर न्यायोचित। यहाँ तब कि उपसमिति ने भी इन सुझावों को सही माना था। निर्देशक सिद्धांतों के ऊपर चर्चा के समय राज्य की भूमिका पर भी गहन विचार विमर्श किया गया। ग्रेनविल ऑस्टिन के अनुसार इन पर संविधान सभा के ज्यादातर सदस्य सहमत थे। इन प्रावधानों में हिन्दु दृष्टिकोण एवं गोंधावादी विचारों को भी शामिल किया गया था। संविधान सभा में गंभीर विचार विमर्श के पश्चात् संविधान के भाग 4 में इन सिद्धांतों को शामिल किया गया। नीति-निर्देशक सिद्धांतों की सूची इस प्रकार है :-

अनुच्छेद सं.	विषय
36	राज्य की परिभाषा
37	इस भाग में दिये गये सिद्धांतों को लागू करना
38	राज्य लोगों के कल्याण के लिए कार्य करना
39	राज्य को नीतियों का पालन करना
39ए	समान न्याय एवं मुफ्त कानूनी सहायता
40	ग्राम पंचायतों का गठन करना
41	कुछ मामलों में लोक सहायता, काम का अधिकार एवं शिक्षा का अधिकार
42	काम के लिए मानवीय स्थिति का प्रावधान एवं मातृत्व राहत
43	कामगारों या मजदूरों के लिए न्यूनतम मजदूरी की व्यवस्था करना
43 ए	उद्योगों में प्रबंधन में मजदूरों की भागीदारी
43 बी	सामूहिक सहयोगात्मक सोसाइटी को बढ़ावा देना
44	नागरिकों के लिए समान आचार संहिता लागू करना

45	छ: वर्ष से कम के बच्चों के लिए शिक्षा एवं संरक्षण की व्यवस्था करना।
46	समाज के कमजोर वर्गों - अनु. जाति जनजाति के लिए शैक्षिक एवं आर्थिक हित को बढ़ावा देना।
47	राज्य का यह दायित्व है कि वह नागरिक के स्वास्थ्य में सुधार करें तथा कृषि एवं पशुपालन को संगठित करना
48	पर्यावरण की रक्षा करना एवं वन जंगली जीवन का संरक्षण करना
48 ए	राष्ट्रीय महत्व के स्थानों एवं स्मारकों का संरक्षण करना
49	कार्यपालिका को न्यायपालिका से अलग रखना
50	अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा को बढ़ावा देना।
51	

दुर्गा दास बसु ने नीति निर्देशक सिद्धांतों को तीन समूहों में वर्गीकृत किया है। प्रथम, ऐसे कुछ आदर्श जिसे संविधान सभा ने राज्य द्वारा प्राप्त करने को अपेक्षित थे विशेषतौर पर आर्थिक द्वितीय, विधायिका एवं कार्यपालिका को कुछ निर्देश देना ताकि वे अपनी शक्तियों का सही इस्तेमाल कर सकें। तीसरा, कुछ अधिकार जिसे न्यायालय भी जबरदस्ती से लागू नहीं कर सकता है जैसे कि मूल अधिकार, लेकिन राज्य द्वारा नीतियाँ बनाकर इन्हें लागू किया जा सकता है।

भाग चार में दिये गये अनुच्छेदों के अलावा कुछ अन्य अनु. भी हैं जिसमें राज्य को लोगों के लिए नीतियों बनाने का अधिकार दिया गया है। ये अनु. 335, 350ए तथा 351 हैं। अनु 335 के अधीन लोक सेवाओं के लिये नियुक्तियाँ करते समय अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के दावों को ध्यान में रखा जायेगा, पर साथ ही प्रशासन की दक्षता को भी बनाये रखा जायेगा। अनुच्छेद 350ए यह आदेश है कि हर राज्य का स्थानीय प्राधिकारी भाषायी अल्पसंख्यक वर्गों के बच्चों की शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की पर्याप्त सुविधाओं की व्यवस्था करने का प्रयास करे। अनु 351 के अधीन संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिन्दी भाषा के प्रसार करे, उसका विकास करे ताकि यह भारत की मिली-जुली संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके।

प्रश्न 5. मूल कर्तव्यों की उत्पत्ति पर संक्षिप्त रिप्पणी कीजिए।

उत्तर-जब संविधान अपनाया गया उस समय संविधान में मूल कर्तव्यों का प्रावधान नहीं था। इन्हें 1970 में संविधान में जोड़ा गया। यद्यपि संविधान के अनु 33 में केवल सैन्य बलों के यह कर्तव्य दिया गया तथा पुलिस बलों को कि वे हमेशा अपना कर्तव्य ठीक से निभायें, तथा अनुशासन बनाये रखें। बाद में 1976 में 42 वें संशोधन के माध्यम से संविधान में मूल कर्तव्यों को शामिल किया गया था। इस संशोधन के अनुसार नागरिकों को कुछ कर्तव्यों का पालन करने को कहा गया है। 42 वें संशोधन स्वर्ण सिंह समिति की रिपोर्ट की सिफारिशों के बाद किया गया। इस समिति ने संविधान में एक नया भाग शामिल करने की सिफारिश की थी जिसमें नागरिकों के मूल कर्तव्य हों। इस सिफारिश को आधार मानकर संविधान में परिवर्तन किया गया जो जनवरी 1977 से लागू हुए। 2002 में 86 वें संविधान संशोधन के माध्यम से पन: विस्तृत किया गया। मूल कर्तव्यों के अनुच्छेद 51ए में निम्नलिखित

प्रावधान से मेल खाते हैं इसमें कहा गया है कि प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य है कि वह अपना विकास स्वयं कर सके। कुल 11 मूल कर्तव्य हैं नागरिकों के जिनका विवरण इस प्रकार है।

प्रश्न 6. भारतीय नागरिकों के मूल कर्तव्य कौन-कौन से हैं?

उत्तर-संविधान के अनुच्छेद 51ए में भारतीय नागरिकों के मूल कर्तव्यों की सूची दी गयी है जो इस प्रकार है-

(क) संविधान का पालन करे और उसके आदश, संस्थाओं, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान का आदर करे।

(ख) स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों का पालन करे।

(ग) भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण रखे।

(घ) देश की रक्षा करे और आह्वान किये जाने पर राष्ट्र की सेवा करे।

(ङ.) भारत के सभी लोगों को समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और वर्ग या क्षेत्र पर आधारित हो और सभी भेदभाव से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियों के समान के विरुद्ध हों।

(च) हमारी समसामयिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्व समझे और उसका परिपक्व करे।

(छ) प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अंतर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव हैं, रक्षा करे। और उसका संवर्द्धन करे तथा प्राणी मात्र के प्रति दया भाव रखे।

(ज) वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करे।

(झ) सार्वजनिक संपत्ति को सुरक्षित रखे और हिंसा से दूर रहे।

(ण) व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का प्रयास करे जिससे राष्ट्र निरंतर बढ़ते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊँचाइयों को छु ले।

(ट) माता-पिता अथवा अधिभावक अपने 6 से 14 वर्ष के बच्चों को शिक्षा के अवसर प्रदान करें।

प्रश्न 7. नीति निर्देशक सिद्धांतों एवं मूल कर्तव्यों में संशोधन किस प्रकार किया जा सकता है?

उत्तर-नीति-निर्देशक सिद्धांतों में कुछ नये खंड जोड़े गये संशोधन के माध्यम से। इन संशोधन के माध्यम से नीति निर्देशक सिद्धांतों को और अधिक समावेशी एवं समाज कल्याणी बनाये गये हैं। 42वें संशोधन ने चार नये विषयों को शामिल किया गया है। जिसमें अनुच्छेद 39 39ए, 43ए एवं 48ए जोड़ा गया है। 39 के अंतर्गत सभी बच्चों के स्वास्थ्य एवं विकास की बात कही गयी है। 39ए में गरीबों के लिये समान न्याय एवं मुफ्त कानूनी सहायता का प्रावधान है, अनु. 43ए के अंतर्गत मजदूरों को औद्योगिक प्रबंधन में भागीदारी का प्रावधान है जबकि अनु. 48ए में पर्यावरण जंगल एवं जंगली जीवन के संरक्षण का प्रावधान है। 44वें संशोधन के माध्यम से अनुच्छेद 38 को जोड़ा गया जिसमें राज्य को आय एवं संपत्ति एवं अवसरों में समानता को प्राप्त करने का निर्देश दिया गया है।

सिद्धान्तों में अनुच्छेद 45 को परिवर्तित करके यह प्रावधान किया गया कि राज्य सभी बच्चों जिन्की आयु 6 वर्ष की हो उनकी शिक्षा को भी व्यवस्था को तब तक अनिवार्य 21ए के अंतर्गत शिक्षा को मूल अधिकार का भी दर्ज दिया गया है। मूल कर्तव्यों के अंतर्गत सभी माता-पिता एवं अभिभावक को यह निर्देश दिया गया है वे अपने बच्चों जिन्की आयु 6-14 वर्ष के बीच हैं उन्हें शिक्षा प्रदान करें। 2011 में 97वें संशोधन के द्वारा एक अनुच्छेद 43बी जोड़ा गया। इसमें राज्य के स्वायत्त संस्थाओं, को-ऑपरेटिव सोसाइटी के प्रधान तथा उनके ऊपर नियंत्रण का प्रावधान किया गया है।

प्रश्न 8. मौलिक अधिकारों की आवश्यकता पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

उत्तर-मौलिक अधिकारों के इतिहास पर दृष्टि डालने से हमें ज्ञात होता है कि संयुक्त राज्य अमेरिका, अपने संविधान में मौलिक अधिकारों को दर्ज करने वाला पहला देश था। जर्मनी ने 1919 में व्हायर संविधान के द्वारा इनको अपनाया तथा इसी प्रकार आयरलैंड और रूस ने क्रमशः 1922 और 1936 में इन्हें स्वीकार किया। हमारे स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान हमारे राष्ट्रीय नेताओं ने लोगों के लिए इन अधिकारों के महत्व को महसूस किया। इसलिए 1928 में नेहरू कमेटी की मांग पर अधिकारों का प्रस्तावित बिल आया। जब भारत स्वतंत्र हुआ तो संविधान सभा ने कुछ आधारभूत अधिकारों को संविधान में शामिल किया जिनको विशेष रूप से रक्षा सुनिश्चित की गई और उन्हें मौलिक अधिकार का नाम दिया गया। मौलिक शब्द निम्न बिन्दुओं पर बल देता है:

- भारत के संविधान में उन्हें अलग से दर्ज किया गया है।
- संविधान ने उनकी सुरक्षा के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं।
- इन अधिकारों को अदालतों द्वारा लागू किया जा सकता है।
- यह अधिकार संविधान द्वारा प्रदत्त हैं और इन्हें संविधानिक दर्जा प्राप्त है।

अइये हम समझने का प्रयास करें कि मौलिक अधिकार किस प्रकार विधायिका द्वारा निर्मित साधारण अधिकारों से अलग हैं।

(a) साधारण अधिकार मौलिक अधिकारों की भांति देश के संविधान से रक्षित नहीं हैं।

(b) मौलिक अधिकारों में परिवर्तन केवल संविधान संशोधन द्वारा ही किया जा सकता है जबकि साधारण कानून, कानून निर्माण की साधारण प्रक्रिया मात्र से बदले जा सकते हैं।

(c) मौलिक अधिकारों का सरकार के किसी भी अंग द्वारा उल्लंघन निषिद्ध है। यद्यपि स्थापित प्रक्रिया द्वारा इनमें संशोधन किया जा सकता है।

(d) मौलिक अधिकारों के उल्लंघन के मामले में न्यायपालिका का यह दायित्व और क्षेत्राधिकार है कि वह उनकी रक्षा करे। साधारण कानूनों के मामले में ऐसी कोई गारंटी नहीं है।

प्रश्न 9. मौलिक अधिकारों के लक्षण लिखिए।

उत्तर-मौलिक अधिकारों के लक्षण निम्न हैं-

- संविधान द्वारा प्रत्याभूत मौलिक अधिकार साधारण कानूनों से ऊपर हैं
- सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों को रिट (लेख), आज्ञा और निर्देश के माध्यम से मौलिक अधिकार लागू करवाने की शक्ति है।

- नागरिकों के लिए कुछ अधिकारों के अतिरिक्त, गैर नागरिकों के लिए भी अधिकार हैं।
- मौलिक अधिकारों के उपयोग पर कई प्रकार के नियंत्रण लगाये गये हैं। इसका अर्थ है कि ये अधिकार असीमित नहीं हैं।
- अदालतों को यह जांचने का अधिकार है कि मौलिक अधिकारों पर लगाये गये नियंत्रण तर्क संगत हैं अथवा नहीं
- आपातकाल की स्थिति में मौलिक अधिकारों को सीमित अथवा स्थगित किया जा सकता है।

प्रश्न 10. मौलिक अधिकारों एवं मौलिक कर्तव्यों में क्या अन्तर है?

उत्तर-मौलिक अधिकारों एवं मौलिक कर्तव्यों के बीच अंतर

आधार	मौलिक अधिकार	मौलिक कर्तव्य
परिभाषा	मूल मानव अधिकार, प्रत्येक नागरिक के लिए उपलब्ध हैं, चाहे वह किसी भी जाति, जन्म स्थान, धर्म, जाति, पंथ या लिंग का हो।	यह देश की संप्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा के लिए देश के प्रति नागरिकों का नैतिक दायित्व।
संविधान का हिस्सा	यह संविधान के भाग छह में मौजूद है।	संविधान के भाग IV ए में मौजूद है।
से उधार	मौलिक अधिकारों की अवधारणा संयुक्त राज्य अमेरिका से उधार ली गई है।	यह अवधारणा यू.एस.एस. आर. से उधार ली गई है।
उपलब्धता	यह केवल नागरिकों के लिए ही उपलब्ध है। लेकिन इनमें से कुछ विदेशियों के लिए भी उपलब्ध हैं।	केवल नागरिकों के लिए उपलब्ध और बाध्यकारी हैं।
प्रकृति	यह प्रकृति में राजनीतिक और सामाजिक है।	प्रकृति में राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक।
न्यायसंगतता	यह अदालत के समक्ष लागू करने योग्य हैं।	अदालत के समक्ष लागू करने योग्य नहीं हैं।
सामग्री	अनुच्छेद 12 से 35 मौलिक अधिकारों से संबंधित हैं।	अनुच्छेद 51A मौलिक कर्तव्यों से संबंधित हैं।
प्रवर्तनीयता	वे सीधे लागू करने योग्य हैं।	न्यायालयों द्वारा प्रत्यक्ष रूप से लागू करने का कोई प्रावधान नहीं है। संसद उपयुक्त कानून के माध्यम से उन्हें लागू कर सकती है।

प्रश्न 11. मौलिक कर्तव्यों का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

उत्तर-मौलिक कर्तव्य एक ऐसी धारणा है जो किसी व्यक्ति के अंदर कुछ करने के लिए प्रतिबद्ध एवं उत्तेजित करती है। वह उस व्यक्ति के अंदर नैतिक दायित्व की भावना पैदा करती है। व्यक्ति को अपने निजी जीवन में या प्रतिदिन कुछ कार्य अवश्य करने चाहिए उन्हें विभिन्न प्रकार के कर्तव्यों को पूरा करना चाहिए। ये कार्य चाहे परिवार से संबंधित हो या अपने कार्यक्षेत्र से या फिर आधुनिक राज्य से ही संबंधित हो।

प्राचीन रोमन दार्शनिक सिसरो ने भी कर्तव्य के बारे अपनी अर्थात् कर्तव्य पर चर्चा की है। इसने उन्होंने बताया कि कर्तव्य चार विभिन्न स्रोतों से आ पुरस्कृत 'दे ओपिफिसिस' साख्य है। जैसे (1) बुद्धि या विवेक से, (2) न्याय से, (3) साहस से तथा (4) संयम से। आप इसकाई 4 के अंदर मौलिक अधिकारों के बारे पढ़ा होगा। ये ठीक प्रकार से महसूस किये जा सकते हैं यदि नागरिक अपने कर्तव्यों का ठीक प्रकार से निर्वहन करे। इस प्रकार मौलिक अधिकार एवं मौलिक कर्तव्य दोनों एक दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं। यदि कोई व्यक्ति अपना दायित्व ठीक से निभाये तभी दूसरे के अधिकार सुरक्षित रह सकते हैं। वास्तव में, कोई व्यक्ति अपने दायित्वों को ठीक से निभाये बिना अपने अधिकारों का लाभ नहीं उठा सकते। अन्य शब्दों में, यदि व्यक्ति अपना दायित्व या कर्तव्य पूरा करे, तभी वह अपने अधिकारों का प्राप्त कर सकता है। यदि राज्य व्यक्तियों के मौलिक अधिकारों की रक्षा करता है तो व्यक्तियों से भी यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपने कर्तव्यों का ठीक से पालन करें। कई देशों ने अपने संविधान में मौलिक कर्तव्यों को शामिल किया है। उदाहरण के तौर पर, पूर्व सोवियत संघ, चीनी गणराज्य, भारत, पोलैंड, अल्बेनिया,

चेकोस्लोवाकिया, नीदरलैंड, युगोस्लाविया, लोकतांत्रिक वियतनामी गणराज्य जापान तथा इटालियन गणराज्य शामिल हैं। पूर्व सोवियत संघ प्रथम देश था जिसने अपने संविधान मौलिक कर्तव्यों को शामिल किया था।

प्रश्न 12. मौलिक कर्तव्य किस प्रकार से नैतिक मूल्यों के साथ जुड़े हुए हैं?

उत्तर-मौलिक कर्तव्यों का नैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक महत्व है। यदि कोई नागरिक अपना कर्तव्य ठीक से निभाये तभी वह अपने अधिकारों का सही तरह से इस्तेमाल कर सकता है। अपने कर्तव्यों को पूरा करने के बाद ही आप पर्यावरण एवं आर्थिक विकास को प्राप्त कर सकते हैं। इसके साथ ही आप मानवीय विकास को भी प्राप्त कर सकते हैं। भारत में मौलिक कर्तव्यों को पूरा करने के लिये लोगों में चेतना जागृत हुई है। न्यायालय नागरिक समाज संगठन, राजनीतिक दल एवं सरकार ने भी मौलिक कर्तव्यों के महत्व को रेखांकित किया है क्योंकि ये कर्तव्य समाज के संपूर्ण विकास के लिए अनिवार्य हैं। जैसे कि आपने इस इकाई के अंदर पढ़ा होगा मौलिक कर्तव्यों को संविधान में 42वें संशोधन के बाद शामिल किया था जो कि इंदिरा गांधी सरकार ने आपातकाल के दौरान पारित किया था। मोरारजी देसाई की सरकार ने भी मौलिक कर्तव्यों के प्रावधानों में परिवर्तन किया। इससे यह साबित हुआ कि मौलिक कर्तव्यों का कितना महत्व है। इन्हीं महत्व के ध्यान में रखते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि ये कर्तव्य व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन लाने तथा नागरिकों में अच्छे गुण पैदा करने के लिए पर्याप्त हैं। उदाहरण के लिए कु स्वार्थी तत्व पर्यावरण को एवं जैव-विविधता को नुकसान पहुंचा रहे हैं, विशेषकर मसूरी-देहरादून क्षेत्र में। वे अपने मौलिक कर्तव्यों का उल्लंघन कर रहे हैं जिसमें

पर्यावरण की रक्षा एवं जैव-विविधता की रक्षा करने को कहा गया है। इस संबंध में सर्वोच्च न्यायालय ने गैर-कानूनी खनन पर रोक लगाई थी मसूरी देहरादून बेल्ट में तथा पर्यावरण एवं जैव-विविधता की रक्षा के लिए अन्य सुझाव भी दिये थे। इस प्रकार न्यायालय ने मौलिक कर्तव्यों की महत्ता को रेखांकित किया तथा उसके संरक्षण के लिए निर्देश भी दिये। संविधान समीक्षा आयोग जिसके अध्यक्ष एम. एन. वैकटकरलैया थे, उन्होंने भी मौलिक कर्तव्यों के सफल क्रियान्वयन के लिये कुछ सुझाव दिये थे। उनकी कुछ सिफारिशें इस प्रकार थी -

- (क) केन्द्र एवं राज्य सरकारें लोगों के बीच चेतना जाग्रत करे ताकि लोग मौलिक कर्तव्यों के बारे में जानकारी हासिल कर सकें।
- (ख) स्वतंत्रता के अधिकार विशेषकर धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकार की रक्षा करनी चाहिये तथा अल्पसंख्यकों के अधिकारों का सम्मान होना चाहिये।
- (ग) लोगों को चुनाव में अपना वोट देने के लिए संवेदनशील बनाया जाना चाहिए क्योंकि कार चर्ट वोट डालना उनका कर्तव्य है। इसके साथ ही उन्हें कर देने और सरकार के कार्यक्रमों में भागीदार करने के लिए भी संवेदनशील बनाया जाना चाहिये।
- (घ) वर्मा समिति की सिफारिशों को तत्काल लागू किया जाना चाहिए जिसमें उन्होंने मौलिक कर्तव्यों के क्रियान्वयन पर अधिक बल दिया था।
- (ङ) औद्योगिक संगठनों को अपने कर्मचारियों के बच्चों के लिए शिक्षा का प्रावधान करना चाहिये।

प्रश्न 13. मौलिक अधिकारों एवं नीति-निर्देशक सिद्धांतों में क्या अन्तर है?

उत्तर-अब आप मौलिक अधिकार एवं नीति-निर्देशक सिद्धांतों के बारे में जानते हैं जो कि एक कल्याणकारी राज्य की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसलिए आपके लिए इनमें अन्तर जानना आवश्यक है।

मौलिक अधिकार नागरिकों की वे मांगें हैं जिनको राज्य ने मान्यता दी है। इनका स्वरूप यह है कि ये सरकार की कुछ शक्तियों पर रोक लगाती हैं। अतः ये अधिकार नकारात्मक प्रकृति के हैं। दूसरी ओर नीति-निर्देशक सिद्धांत सकारात्मक हैं। सरकार को इनको हर स्तर पर लागू करना पड़ता है ताकि देश में सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना की जाए।

एक और अंतर इनमें यह है जो पहले भी बताया गया है कि मौलिक अधिकार न्याययोग्य हैं और इनको लागू कराने के लिए न्यायालय की शरण ली जा सकती है। नीति-निर्देशक सिद्धांत न्याययोग्य नहीं होते हैं। दूसरे शब्दों में, उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों को इन अधिकारों को लागू करने के लिए आदेश जारी करने का अधिकार है। दूसरी ओर, नीति-निर्देशक तत्व न तो हमें कोई कानूनी अधिकार देते हैं, और न ही कानूनी उपचार। इसका यह अर्थ नहीं है कि नीति-निर्देशक सिद्धांत मौलिक अधिकारों की में कम महत्व के हैं।

● Organs of the Government Executive, Judiciary and Legislature.

विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. संघीय विधायिका की विभिन्न अंगों की विवेचना कीजिए।
उत्तर-

संघीय विधायिका

संविधान के अनुच्छेद 79 के अंतर्गत भारतीय संसद का गठन किया गया है। भारतीय संसद की के अंतर्गत राष्ट्रपति और संसद के दो सदन सम्मिलित हैं। पहला सदन लोक सभा है जिसे निम्न सदन भी कहा जाता है जबकि दूसरा सदन राज्य सभा है जिसे उच्च सदन कहा जाता है। लोक सभा अस्थायी सदन है, जिसे कभी भी भंग किया जा सकता है जबकि राज्य सभा एक स्थायी सदन है जिसे कभी भंग नहीं किया जा सकता है। राष्ट्रपति का पद भी कभी रिक्त नहीं रहता है।

1. राष्ट्रपति

अमेरिका के राष्ट्रपति विधायिका (कॉंग्रेस) का हिस्सा नहीं है जबकि भारत के राष्ट्रपति भारतीय संसद के अभिन्न अंग हैं। यद्यपि वे संसद के किसी भी सदन में बैठ नहीं सकते एवं सदन की कार्यवाही में भी हिस्सा नहीं ले सकते। भारत के राष्ट्रपति संसद से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। राष्ट्रपति सदन को चलाने का निर्देश दे सकते हैं। एवं उन्हें लोक सभा को भंग करने की शक्ति भी प्राप्त है। राष्ट्रपति की अनुमति के बिना कोई भी विधेयक कानून नहीं बन सकता चाहे वह विधेयक सदन के दोनों सदनों द्वारा ही पारित क्यों न हो गया हो। यदि दोनों सदन की बैठक नहीं हो तब भी राष्ट्रपति अपनी शक्तियों का उपयोग कर सकते हैं। हालांकि ये अध्यादेश अस्थायी होते हैं फिर भी वे अध्यादेश संसद द्वारा पारित अध्यादेशों के समान ही शक्तिशाली होते हैं। हम आगे इस आठ में भारत के राष्ट्रपति की शक्तियों का विस्तृत विवेचन करेंगे।

2. लोक सभा

लोक सभा संसद का निम्न सदन है। यह जनता का सदन भी कहा जाता है। जनप्रत्यक्ष रूप से लोक सभा के सदस्यों का चुनाव करती है। लोक सभा के सदस्यों की अधिकतम संख्या अभी 545 है। इसमें 530 सदस्य राज्यों से चुनकर आते हैं जबकि 15 सदस्य केन्द्र शासित प्रदेशों से चुनकर आते हैं। 2 सदस्य राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत किये जाते हैं। सदस्य आंग्ल भारतीय समुदाय से आते हैं। इन्हें राष्ट्रपति द्वारा इसलिये मनोनीत किया जाता है। ताकि इनका प्रतिनिधित्व भी लोक सभा में हो सके।

सीटों का बंटवारा क्षेत्रीय प्रतिनिधित्व के सिद्धांत पर आधारित होता है। अर्थात् सभी राज्यों को उनकी जनसंख्या के आधार पर सीटें निर्धारित की जाती हैं। चुनाव के हिसाब से

सभी राज्यों को निर्वाचन क्षेत्र में बांटा जाता है जिसकी जनसंख्या ज्यादातर समान होती है। लोक सभा के सदस्य वयस्क मतधिकार के आधार पर चुने जाते हैं अर्थात् जो भी वयस्क जिसकी आयु 18 वर्ष है वह वोट देने के लिए योग्य है। जो भी प्रत्याशी सबसे अधिक वोट प्राप्त करता है वह निर्वाचित होता है। साधारणतया लोक सभा का कार्यकाल पांच वर्ष का होता है लेकिन यह समय पूर्व भी राष्ट्रपति के द्वारा भंग की जा सकती है।

लोक सभा का सदस्य होने के लिये किसी भी व्यक्ति को भारत का नागरिक होना चाहिये तथा उसकी उम्र 25 वर्ष हो। वह व्यक्ति कानून द्वारा निर्धारित अन्य योग्यताओं भी पूरी करता हो। कोई भी प्रत्याशी भारत के किसी भी राज्य के निर्वाचन क्षेत्र से चुनाव लड़ सकता है। संविधान में संसद के सदस्य होने के लिए कुछ अनिवार्य शर्तें निर्धारित हैं तथा सदस्य को अयोग्य घोषित करने की भी शर्तें हैं कोई भी व्यक्ति संसद के दोनों सदनों का एक साथ सदस्य नहीं हो सकता है। कोई भी व्यक्ति एक से अधिक सीटों पर चुनाव लड़ सकता है। लेकिन वह किसी एक सीट का ही अपने पास रख सकता है यदि वह एक से अधिक सीटों पर चुनाव जीत कर आता है। वह सीट अपनी इच्छानुसार रख सकता है।

यदि कोई व्यक्ति राज्य विधानसभा और संसद दोनों का सदस्य चुना जाता है और वह निर्धारित समय पर राज्य विधान सभा से इस्तीफा नहीं देता है ऐसी स्थिति में वह अपनी संसद की सदस्यता गंवा बैठेगा। कोई भी व्यक्ति लाभ के पद पर ना हो तथा उसे किसी न्यायालय द्वारा पागल या अस्वस्थ घोषित नहीं किया गया हो। कोई भी सदस्य यदि संसद के सत्र से 60 दिन से अधिक अनुपस्थित रहता है तो उसे अयोग्य घोषित किया जा सकता है। यदि कोई सदस्य किसी अन्य दूसरे देश की नागरिकता ग्रहण कर लेता है तब भी वह अयोग्य माना जायेगा।

3. राज्य सभा

संविधान के अनुसार राज्य सभा एक उच्च सदन है। यह राज्यों का प्रतिनिधित्व करती है। राज्य सभा के कुल सदस्यों की संख्या 250 है जिसमें 12 सदस्यों को राष्ट्रपति मनोनीत करता है। ये 12 सदस्य साहित्य कला, विज्ञान एवं समाज सेवा में अनुभव प्राप्त व्यक्ति होते हैं। बाकि के सदस्य राज्यों की विधानसभा द्वारा चुनकर भेजे जाते हैं। इनका चुनाव राज्य की जनसंख्या के आधार पर किया जाता है। लोक सभा के विपरीत राज्य सभा के सदस्यों का चुनाव अप्रत्यक्ष तरीके से होता है। राज्य सभा में प्रतिनिधित्व एक समान नहीं है। यह पूरी तरह से राज्य की जनसंख्या पर निर्भर है। अर्थात् जिस राज्य की जनसंख्या अधिक है उस राज्य का प्रतिनिधित्व अन्य छोटे राज्यों की तुलना में अधिक होता है। राज्य सभा के सदस्यों की संख्या एक से लेकर अधिकतम 34 है। यह राज्यवार जनसंख्या पर निर्भर है। नागालैण्ड से जहाँ सिर्फ एक ही सदस्य है वहीं उत्तर प्रदेश से 34 सदस्य हैं। क्योंकि दोनों राज्यों की जनसंख्या में काफी अंतर है। राज्य सभा का चरित्र एक प्रकार से संघवाद का प्रतीक है।

राज्य सभा एक स्थायी सदन है। इसे कभी भंग नहीं किया जा सकता है। इसके एक तिहाई सदस्य दो वर्ष के बाद अवकाश ग्रहण करते हैं। खाली पदों पर तुरंत चुनाव करवाये जाते हैं। राज्य सभा के सदस्य का कार्यकाल 6 वर्ष का होता है। लेकिन वह समय पूर्व भी

अपने पद से इस्तीफा दे सकता है या उसे किसी कारणवश अयोग्य भी घोषित किया जा सकता है।

4. राज्य सभा की विशेष शक्तियाँ

लोक सभा के अधिकार क्षेत्र में आने वाले सभी मामलों की सूचना प्राप्त करने का राज्य सभा को अधिकार है। लेकिन राज्य सभा को मंत्रीपरिषद के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव पर वोट देने का अधिकार नहीं है। धन विधेयक जैसे मामलों में भी राज्य सभा को अधिक शक्ति नहीं है। फिर भी संविधान ने राज्य सभा को कुछ विशेष शक्तियाँ प्रदान की हैं। राज्यों का प्रमुख प्रतिनिधित्व होने के कारण, राज्य सभा को दो प्रमुख शक्तियाँ प्राप्त हैं। अनुच्छेद 249 के अंतर्गत राज्य सभा कोई भी प्रस्ताव पारित कर सकती है। संसद किसी भी महत्वपूर्ण मुद्दे पर कानून बना सकती है राज्य सभा राज्य सूची के विषयों पर कानून बनाने का अधिकार रखती है। राज्य सभा की दूसरी शक्ति है अखिल भारतीय सेवाओं की स्थापना करना। इस प्रकार राज्य सभा भारतीय विधायिका का महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह उसी तरह से है जिस तरह इंग्लैंड में लॉर्ड सभा है। यह एक महत्वपूर्ण सदन है जिसके सभी सदस्य सम्माननीय होते हैं।

प्रश्न 2. विधायिका की विधायी प्रक्रिया पर लेख लिखिए।

उत्तर—

विधायी प्रक्रिया

विधायिका का प्रमुख कार्य कानून बनाना है। संविधान के अनुसार विधायी प्रक्रिया के स्तर निम्न हैं।

पहला स्तर किसी विधेयक को प्रस्तुत करना है। यह प्रमुख कानून को इंगित करता है जिसे सदन में प्रस्तुत किया जाता है। किसी भी बिल को प्रस्तुत करने का आशय है उस बिल को पढ़ा जाना। दो प्रकार के विधेयक होते हैं। एक साधारण विधेयक दूसरा धन विधेयक। 6 न विधेयक या वित्त विधेयक के अतिरिक्त कोई दूसरा विधेयक संसद के किसी भी सदन में प्रस्तुत किया जा सकता है। इसे दोनों द्वारा पारित किया जाना जरूरी है तभी जाकर यह राष्ट्रपति के पास मंजूरी के लिये भेजा जा सकता है। कोई भी विधेयक या तो किसी मंत्री द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है या फिर अन्य सदस्य द्वारा। सदन में विधेयकों को गजट राजपत्र में प्रकाशित किया जाना आवश्यक है। साधारणतया, किसी भी विधेयक को प्रस्तुत करते वक्त कोई बहस नहीं होती। जो सदस्य विधेयक को प्रस्तुत करता प्रस्तुत सभी हैं वह संक्षेप में इस विधेयक के बारे में जानकारी देता है। यदि विधेयक का इस स्तर पर विरोध होता है तो विरोध करने वाले सदस्य को विरोध के कारण बताने की अनुमति दी जाती है। इसके पश्चात् इसके ऊपर मतदान होता है। यदि सदन इसके पक्ष में मत देता है तब जाकर इसे सदन में प्रस्तुत किया जाता है तत्पश्चात् यह विधेयक अगले स्तर पर जाता है।

दूसरे स्तर पर इसके चार विकल्प होते हैं। प्रथम, इसके प्रस्तुत होने के बाद इसे मान लिया जाता है। दूसरा इसे सदन की चयन समिति के पास भेजा जा सकता है। तीसरा इसे दोनों सदनों की संयुक्त समिति को भेजा जा सकता है। और चौथा, इसे जनता की राय के लिये जनता के बीच बाँटा जा सकता है। इनमें से प्रथम तीन विकल्पों को सामान्यता अपना लिया जाता है। अंतिम विकल्प तभी माना जाता है जब इस विधेयक के खिलाफ जन आंदोलन हो या भारी विवाद हो।

प्रथम दिन विधेयक के प्रावधानों पर चर्चा की जाती है। यदि विधेयक को अपनाया है तब उसमें संशोधनों पर विचार किया जाता है और फिर उसके प्रावधानों को अपना लिया जाता है। यदि विधेयक को सदन की चयन समिति के पास भेजा जाता है तब उस पर चर्चा होने के पश्चात् इसकी रिपोर्ट सदन को प्रस्तुत की जाती है।

इसके बाद उस विधेयक में संशोधन स्वीकार किये जाते हैं। इसमें काफी समय खर्च होता है। इस प्रकार विधेयक पूरी तरह से तैयार हो जाता है और उसकी सभी प्रक्रिया पूरी हो जाती है। तीसरे स्तर पर विधेयक के प्रभावी विधेयक को पारित करने के लिये आगे बढ़ाता है इस स्तर पर विधेयक पर संक्षिप्त चर्चा की जाती है तथा इसमें कुछ औपचारिक संशोधन स्वीकार किये जाते हैं। जब सारे संशोधन बंद हो जाते हैं, तब विधेयक उस सदन में पारित होता है जिसमें इसे प्रस्तुत किया जाता है। उसके बाद इस विधेयक को दूसरे सदन में भेजा जाता है।

जब यह विधेयक दूसरे सदन के पास जाता है तो इसे फिर से वही प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है जो यह पहले सदन में अपनाई गई थी। इस सदन के पास तीन विकल्प होते हैं। पहला, इस विधेयक को ज्यों की त्यों पारित कर दिया जाय। दूसरा, इस विधेयक को पूरी तरह से खारिज कर देना या फिर इसमें संशोधन करने वापस मूल सदन के पास भेज देना। और तीसरा, इस विधेयक के ऊपर कोई भी कार्यवाही न करना। यदि छ महीने के अंदर इस पर कोई निर्णय नहीं लिया गया तो विधेयक निरस्त माना जायेगा।

मूल सदन जिसमें यह विधेयक लाया गया था वह इस विधेयक को कुछ संशोधनों के साथ-स्वीकार कर लेता है। यदि यह सदन संशोधनों को स्वीकार करता है तो वह दूसरे सदन को इसकी जानकारी देता है यदि यह सदन संशोधनों को स्वीकार नहीं करता है तो भी इसकी सूचना दूसरे सदन को दी जाती है और इस विधेयक को वापस भेज दिया जाता है। यदि दोनों सदन किसी सहमति पर नहीं पहुँचते हैं तो राष्ट्रपति दोनों सदनों की संयुक्त बैठक बुलाता है। फिर इस संयुक्त बैठक में सभी विवादित प्रावधानों को साधारण बहुमत द्वारा पारित किया जाता है या खारिज किया जाता है। यह प्रक्रिया सदन में मौजूद सदस्यों के मत द्वारा पूरी की जाती है।

अंत में जब विधेयक दोनों सदनों द्वारा पारित कर दिया जाता है तो इसे लोकसभा अध्यक्ष के हस्ताक्षर के साथ राष्ट्रपति की अनुमति के लिये प्रस्तुत किया जाता है। यह सामान्यता इस विधेयक का आखिरी स्तर होता है।

यदि राष्ट्रपति विधेयक को मंजूरी दे दे तो फिर यह विधेयक एक कानून बन जाता है और इसे एक दस्तावेज में रख दिया जाता है। यदि राष्ट्रपति विधेयक को मंजूरी देने से मना कर दे फिर यह विधेयक समाप्त हो जाता है। राष्ट्रपति इस विधेयक को सदन के पास पुनर्विचार के लिये भेज सकता है। यदि दोनों सदन फिर से इस विधेयक को संशोधन या बिना संशोधन के पारित कर दे और वापस राष्ट्रपति के पास मंजूरी के लिये भेज दे तो राष्ट्रपति को इसे मंजूर करना पड़ेगा। राष्ट्रपति के पास इसे नामंजूर करने की शक्ति नहीं है।

इस प्रकार कानून निर्माण एक लंबी एवं जटिल प्रक्रिया है। इसमें काफी समय भी लगता है। कम समय में किसी विधेयक को पारित करना कठिन कार्य है। यदि विधेयक को सही प्रकार से तैयार किया गया हो और विपक्ष का पूरा समर्थन हो तभी कार्य आसानी से किया जा सकता है।

धन विधेयक

वित्त विधेयक वह है जिसका संबंध राजस्व एवं व्यय से है। लेकिन धन विधेयक वित्त विधेयक नहीं है। संविधान के अनुच्छेद 110 में यह कहा गया है कि कोई भी विधेयक तब तक धन विधेयक नहीं माना जा सकता जब तक कि इसे लोक सभा अध्यक्ष प्रमाणित न कर दे। धन विधेयक राज्य सभा में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। एक बार धन विधेयक लोक सभा द्वारा पारित कर दिया जाय तो फिर इसे राज्य सभा के पास भेजा जाता है। राज्य सभा धन विधेयक को खारिज नहीं कर सकती। राज्य सभा को चौदह दिनों के अंदर ही धन विधेयक को वापस लोक सभा को भेजना पड़ता है। लोक सभा राज्य सभा द्वारा दिये गये संशोधनों एवं सिफारिशों को मानने को बाध्य नहीं है। यदि लोक सभा एक किसी भी सिफारिश को स्वीकार करती है तो इसका आशय धन विधेयक दोनों सदनों द्वारा पारित माना जायेगा। यदि लोक सभा किसी भी संशोधनों या सिफारिश को ना माने तब भी यह विधेयक दोनों सदनों द्वारा बिना किसी संशोधन के पारित माना जायेगा। यदि धन विधेयक लोक सभा द्वारा पारित होकर राज्य सभा के पास भेजा जाता है और राज्य सभा इसे 14 दिनों के अंदर वापस न भेजे तो यह विधेयक दोनों सदनों द्वारा पारित मान लिया जाता है।

प्रश्न 3. राज्य विधायिका के विभिन्न अंगों को समझाइये।

उत्तर-

राज्य विधायिका

राज्य विधायिका राज्यपाल और विधान सभा से मिलकर बनी है। कई राज्यों में राज्यपाल की विधायिका भारतीय संसद के अनुरूप है। हालांकि सभी राज्यों में दोनों सदनों की शक्तें हैं।

विधान सभा और विधान परिषद। जिन राज्यों में दोनों सदनों होते हैं उन्हें द्विसदनात्मक कहते हैं। जिन राज्यों में केवल एक सदन, विधान सभा है उन्हें एक सदनात्मक कहते हैं। राज्यों की अपनी इच्छा है कि वो कौनसा सदन चाहते हैं। यह राज्यों के आकलन पर निर्भर है कि वो दोनों सदन चाहते हैं या एक सदन (विधान सभा) दो सदन ना होने के पीछे प्रमुख कारण वित्त है। कुछ राज्य धन की कमी के कारण दो सदनों का खर्चा उठाने में दिक्कत महसूस करते हैं। ये राज्य एक सदन वाली विधान सभा को ही प्राथमिकता देते हैं। कुछ राज्यों ने ही दो सदन अपनाया है इनमें 29 राज्यों में ही दो सदन हैं। विधान सभा और विधान परिषद। 2019 तक आंध्र प्रदेश, बिहार कर्नाटक, महाराष्ट्र तेलंगाना, उत्तर प्रदेश राज्यों के अंदर ही दूसरा सदन विधान परिषद मौजूद है। 2019 में जम्मू और कश्मीर को दो केन्द्र शासित प्रदेश में विभाजित किया गया है जम्मू और कश्मीर और लद्दाख। जम्मू और कश्मीर में राज्यसभा है और लद्दाख में नहीं।

राज्य विधान सभा के सदस्यों का चुनाव भी प्रत्यक्ष रूप से वयस्क मतदाताओं के आधार पर होता है। विधान सभा का आधार 60 से लेकर 500 सदस्य तक होता है। जनसंख्या के आधार पर होता है। विधान सभा का कार्यकाल भी पांच वर्ष का होता है।

विधान परिषद के सदस्यों की संख्या कम से कम 40 होनी चाहिये लेकिन यह विधान सभा सदस्यों से एक तिहाई से अधिक नहीं होनी चाहिये। विधान परिषद के सदस्य चुने जाते हैं जबकि कुछ मनोनीत किये जाते हैं। इनमें से कुल सदस्यों का छठा भाग राज्यपाल द्वारा मनोनीत किये जाते हैं, जबकि बाकी सदस्य विधान सभा द्वारा एक नियम के अंतर्गत अप्रत्यक्ष रूप से चुने जाते हैं। विधान परिषद की स्थिति विधान सभा की तुलना में कमजोर है। इसकी स्थिति के कमजोर होने के कुछ कारण हैं जैसे (1) इसके सदस्यों की स्थिति कमजोर होती है क्योंकि इसके सदस्य या तो चुने हुए होते हैं या फिर मनोनीत होते हैं। (2) इसकी जीवन्तता विधान सभा की इच्छा पर निर्भर है। क्योंकि विधान सभा को यह अधिकार दिया गया है वह किसी भी वक्त एक प्रस्ताव लाकर इस सदन को निरस्त कर सकती है। (3) मंत्रिपरिषद विधान सभा के प्रति उत्तरदायी होती है ना कि विधान परिषद के, (4) जहाँ तक विधेयकों का सवाल है, विधान परिषद की स्थिति विधेयकों को पास करने में बहुत कमजोर है। यह केवल किसी विधेयक को एक निश्चित समय तक रोके रख सकती है। इस प्रकार विधान परिषद की स्थिति विधान सभा के मुकाबले काफी कमजोर है।

जहाँ तक विधायी प्रक्रिया का सवाल है यह प्रक्रिया राज्य विधान सभा एवं संसद दोनों के समान होती है। राज्यपाल किसी भी विधेयक को जो राज्य विधान सभा में पारित हो चुका हो उसे अपने पास रख सकता है। राज्यपाल की अनुमति के बिना कोई भी विधेयक कानून नहीं बन सकता, भले ही उसे दोनों सदनों पारित कर दें। यदि राज्यपाल किसी विधेयक को संदेश के साथ विधानमंडल को लौटा देता है तो उस पर तदनुसार विचार किया जायेगा। और उसे पुनः संशोधनों सहित पारित करने की अनुमति दे दी जायेगी। लेकिन राष्ट्रपति अपनी अनुमति देने को बाध्य नहीं है। इस प्रकार कोई भी विधेयक राज्यपाल राष्ट्रपति के लिए आरक्षित रखता है और राष्ट्रपति ही इसे अध्यादेश के रूप में ला सकता है। राज्यपाल की इसमें और कोई भूमिका नहीं होती। संविधान में इसके लिए कोई समय सीमा तय नहीं की है इसलिए राष्ट्रपति किसी भी अध्यादेश को लंबे समय तक अपने पास रख सकता है। या फिर उस पर अपनी अनुमति प्रदान कर सकता है। राष्ट्रपति बिना कारण बताये किसी भी विधेयक को अपने पास रख सकता है या ठंडे बस्ते में रख सकता है।

प्रश्न 4. भारत के राष्ट्रपति की योग्यताएँ, चुनाव प्रक्रिया एवं पद से हटाने की प्रक्रिया का वर्णन कीजिए।

उत्तर-

भारत का राष्ट्रपति

संविधान के अंतर्गत यह प्रावधान किया गया है कि राष्ट्रपति केवल राज्य का अध्यक्ष होगा लेकिन उन्हें वास्तविक शक्तियाँ प्रदान नहीं की गयी हैं। राष्ट्रपति का चुनाव अप्रत्यक्ष रूप से पाँच वर्षों के लिए किया जाता है और उन्हें केवल महाभियोग से संसद द्वारा ही पद से हटाया जा सकता है। संविधान में उपराष्ट्रपति के पद का भी प्रावधान किया गया है। उप-राष्ट्रपति का चुनाव भी अप्रत्यक्ष रूप से होता है और वे राष्ट्रपति के अनुपस्थिति में राष्ट्रपति के कार्यों का निर्वहन करता है। यदि राष्ट्रपति त्यागपत्र दे उन्हें महाभियोग द्वारा अपने पद से हटाया गया हो या उनकी मृत्यु हो गयी तब उप-राष्ट्रपति उनके कार्य करता है।

योग्यताएँ

संविधान के अनुच्छेद 58 और 59 में राष्ट्रपति के पद से संबंधित योग्यताएँ दी गयी हैं। राष्ट्रपति के पद के लिए किसी भी व्यक्ति को भारत का नागरिक होना चाहिये वे 35 वर्ष की आयु पूरी कर चुके हों तथा उनके पास वे सभी योग्यताएँ होनी चाहिए जो कि लोक-सभा सदस्य की होती हैं। उन्हें किसी भी लाभ के पद पर आसीन नहीं होना चाहिए। वे संसद के किसी भी सदन तथा राज्य विधान सभा का सदस्य भी नहीं होना चाहिये। इसके अलावा संसद द्वारा तय की गयी समय-समय पर अन्य योग्यताएँ भी उनके पास होना आवश्यक है।

चुनाव की विधि

संविधान में राष्ट्रपति के चुनाव से संबंधित प्रावधान किये गये हैं। राष्ट्रपति का चुनाव अप्रत्यक्ष तरीके से संसद के दोनों सदनों के चुने हुए सदस्य एवं राज्य विधान सभाओं के चुने हुए सदस्यों द्वारा किया जाता है। यह चुनाव आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली एवं सिंगल ट्रांसफेरेबल मत द्वारा किया जाता है। यह प्रणाली सार्वभौमिक एकरूपता के सिद्धांत पर आधारित होती है जिसमें राज्य एवं केन्द्र के बीच एकरूपता पायी जाती है। चुनाव प्रक्रिया इस प्रकार पूरी की जाती है ताकि पूर्ण रूप से राष्ट्रीय प्रत्याशी ही राष्ट्रपति के लिए चुना जा सके।

राज्यों में एकरूपता लाने के लिए प्रत्येक सदस्य का वोट गिना जाता है। इस वोट का मूल्य वहां की जनसंख्या के आधार पर तय किया जाता है। वोट का मूल्य राज्य की जनसंख्या को वहां की विधान सभा की कुल सदस्य संख्या से विभाजित किया जाता है तब निर्धारित होता है। राज्य विधान सभा के हर सदस्य के वोट का मूल्य प्रत्येक राज्य में अलग-अलग होगा। संसद के प्रत्येक सदस्य के वोट का मूल्य निकालने के लिये सारी विधान सभाओं के निर्वाचित सदस्यों के कुल मतों के मूल्य को संसद के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्यों की कुल संख्या से विभाजित किया जाता है।

राष्ट्रपति के निर्वाचन के लिये सिंगल ट्रांसफेरेबल मत द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति को अपनाया जाता है। सभी मतदाता प्रथम और द्वितीय वरीयता के आधार पर मत देता है जो प्रत्याशी पूर्ण बहुमत प्राप्त कर लेता है वही विजयी घोषित किया जाता है। यदि किसी भी प्रत्याशी को प्रथम मतगणना में बहुमत नहीं प्राप्त होता है तब द्वितीय वरीयता के मतों की गणना की जाती है और यह क्रम तब तक चलता है जब तक कि कोई भी प्रत्याशी 50 प्रतिशत के आंकड़े को छू ना ले। यह पद्धति इसलिए अपनायी गयी है ताकि राष्ट्रपति के चुनाव केन्द्र और राज्यों के मध्य संतुलन बनाया जा सके। इस तरह से राष्ट्रपति केन्द्र और राज्य दोनों का प्रतिनिधित्व करता है और इससे भारतीय राजनीति का संघीय चरित्र भी दिखाई देता है।

राष्ट्रपति का कार्यकाल एवं पद से हटाने की प्रक्रिया

राष्ट्रपति का कार्यकाल पाँच वर्ष का होता है। उनका कार्यकाल पद ग्रहण करने के दिन से शुरू होता है। उन्हें भारत के मुख्य न्यायाधीश द्वारा पद और गोपनीयता की शपथ दिलायी जाती है। राष्ट्रपति दूसरे कार्यकाल के लिए भी चुनाव लड़ सकता है। डा० राजेन्द्र प्रसाद दो बार राष्ट्रपति चुने गये थे बावजूद कि उन्हें प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू का समर्थन प्राप्त नहीं था लेकिन कॉंग्रेस के सदस्यों का समर्थन प्राप्त था।

राष्ट्रपति अपने पद पर तब तक बने रहता है जब तक नया राष्ट्रपति पद पर ना आ जाये। यदि राष्ट्रपति त्यागपत्र देना चाहे तो वे अपना त्यागपत्र उप-राष्ट्रपति को सौंप सकते हैं। यदि राष्ट्रपति का पद रिक्त रहता है तो उप-राष्ट्रपति उनका चार्ज ले सकते हैं। लेकिन राष्ट्रपति का चुनाव उनके पद के रिक्त होने के छः माह के अंदर कराया जाना आवश्यक है।

अनुच्छेद 56 और 61 के अंतर्गत राष्ट्रपति के विरुद्ध महाभियोग की प्रक्रिया का प्रावधान है। इस संबंध में, संविधान के अंतर्गत यह प्रावधान है कि यदि राष्ट्रपति संविधान की अवहेलना करता है तो यह प्रमुख कारण होगा उसके खिलाफ महाभियोग लाने का महाभियोग की प्रक्रिया संसद के किसी भी सदन में शुरू की जा सकती है लेकिन इसे सदन

के दो-तिहाई बहुमत की आवश्यकता होती है। यदि दूसरा सदन भी दो-तिहाई के बहुमत से इसे पास कर दे तो राष्ट्रपति के खिलाफ महाभियोग लगाया जाता है तथा उन्हें तुरंत अपने पद से त्यागपत्र देना पड़ता है। इस प्रकार राष्ट्रपति को पद से हटाने की प्रक्रिया काफी जटिल है और संसद इसका दुरुपयोग भी नहीं कर सकती। अभी तक किसी भी राष्ट्रपति के विरुद्ध महाभियोग नहीं लाया गया है।

प्रश्न 5. राष्ट्रपति की विभिन्न प्रकार की शक्तियों का वर्णन कीजिए। उत्तर- राष्ट्रपति की शक्तियाँ

अनुच्छेद 53 के अंतर्गत राष्ट्रपति को कार्यपालिका शक्तियाँ प्रदान की गयी हैं। राष्ट्रपति की शक्तियों को दो भागों में विभाजित किया गया है (1) साधारण और (2) आपातकालीन।

साधारण शक्तियों को भी चार भागों में बाँटा गया है। कार्यपालिका, विधायिका वित्तीय एवं न्यायिक। कार्यपालिका शक्तियाँ राष्ट्रपति में निहित हैं। संविधान के अनुच्छेद 53 के अंतर्गत राष्ट्रपति को सभी कार्यपालिका शक्तियाँ प्रदान की गयी हैं जिन्हें राष्ट्रपति स्वयं या अपने अधीन पदाधिकारियों द्वारा इस्तेमाल करते हैं। अनुच्छेद 75 के अंतर्गत यह प्रावधान है कि प्रधानमंत्री अपने सभी कार्यों को राष्ट्रपति को सूचित करेंगे। अनु० 77 में यह कहा गया है कि केन्द्र की कार्यपालिका शक्तियाँ राष्ट्रपति के नाम से इस्तेमाल की जायेगी।

राष्ट्रपति को प्रशासनिक और सैनिक शक्तियाँ भी प्राप्त हैं। राष्ट्रपति तीनों सेवाओं का अध्यक्ष होता है। सैनिक बलों की सभी नियुक्तियाँ राष्ट्रपति द्वारा की जाती हैं। राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की भी नियुक्ति करता है तथा प्रधानमंत्री की सलाह पर मंत्री परिषद के सदस्यों की नियुक्ति करता है। इसके अलावा राष्ट्रपति भारत के अटॉर्नी जनरल, सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश, उच्च न्यायालय के न्यायाधीश, विशेष आयोग के सदस्यों की नियुक्ति तथा राज्यों के राज्यपालों की भी नियुक्ति करता है। प्रधानमंत्री की नियुक्ति राष्ट्रपति अपने विवेक से नहीं करते बल्कि लोक सभा के बहुमत प्राप्त दल के नेता को प्रधानमंत्री नियुक्त किया जाता है।

राष्ट्रपति सैनिक बलों का कमाण्डर इन चीफ होता है। वह थल सेना, वायु सेना और जल सेना के अध्यक्षों की नियुक्ति करता है। उन्हें युद्ध की घोषणा करने और शांति बहाल करने का अधिकार दिया गया है। लेकिन वे ये सब अधिकार संसद की अनुमति के बिना इस्तेमाल नहीं कर सकते हैं। हालांकि राष्ट्रपति संसद के किसी भी सदन का सदस्य नहीं है फिर भी अनु० 79 के अंतर्गत राष्ट्रपति संसद का अभिन्न अंग होता है। जैसा कि हमने इकाई 7 के अंतर्गत देखा है राष्ट्रपति को संसद के दोनों सदनों को समन करने का अधिकार है तथा वे संसद की संयुक्त बैठक को भी संबोधित करते हैं। राष्ट्रपति ही राज्य सभा में 12 सदस्यों को मनोनीत करता है तथा उन्हें लोक-सभा को भंग करने का भी अधिकार है। संसद में प्रस्तावित सभी धन विधेयकों को राष्ट्रपति की मंजूरी लेना आवश्यक है। नये राज्यों के निर्माण, क्षेत्रों में बदलाव, राज्यों के नाम में परिवर्तन तथा राज्यों की सीमा में परिवर्तन करते समय भी राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति लेना अनिवार्य है। अंत में, कोई भी विधेयक जो कि संसद द्वारा पारित हो चुका हो वह कानून तभी बन सकता है जब राष्ट्रपति इस पर अपनी सहमति दे दे। राष्ट्रपति किसी भी विधेयक को अपने पास रख सकते हैं या उसे पुनः संशोधन

के लिए भेज सकते हैं। लेकिन, यदि उस विधेयक को दोनों सदन फिर से पारित कर दे तो फिर उसे राष्ट्रपति को मंजूरी देना आवश्यक होता है। यदि संसद का सत्र नहीं चल रहा हो उस समय राष्ट्रपति को यह अधिकार दिया गया है कि वे जनता के हित में अध्यादेश ला सकते हैं। इन अध्यादेशों का असर भी उतना ही होता है जितना कि संसद में पारित कानून का असर। लेकिन इन अध्यादेशों को संसद के सामने लाया जाना आवश्यक है। संसद की अनुमति के बिना ये अध्यादेश वैध नहीं माने जायेंगे।

अनुच्छेद 254 के अंतर्गत राष्ट्रपति को यह अधिकार भी दिया गया है वे समवर्ती सूची में शामिल विषयों पर केन्द्र और राज्यों के मध्य विवाद को दूर कर सके। एक अन्य विधायी कार्य भी राष्ट्रपति द्वारा किया जाता है। वे राज्यों के राज्यपाल द्वारा भेजे गये राज्यों के विधेयकों को भी अपनी मंजूरी देते हैं। राष्ट्रपति की न्यायिक शक्तियों में सर्वोच्च न्यायालय उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति, क्षमा याचना, सजा कम करना इत्यादि शामिल हैं। क्षमा याचना किसी भी व्यक्ति को मानवीय आधार पर दी जाती है ताकि कानून कठोर न हो। राष्ट्रपति सर्वोच्च न्यायालय से संवैधानिक, कानूनी एवं राजनयिक मामलों में सलाह लेने का अधिकार है। 1977 में राष्ट्रपति ने सर्वोच्च न्यायालय से आपात स्थितियों में विशेष कोर्ट बनाने की सलाह ली थी।

आपातकालीन शक्तियाँ

भारत की संप्रभुता, अखंडता, एकता और स्वतंत्रता की सुरक्षा के लिए संविधान ने राष्ट्रपति को कुछ आपातकालीन शक्तियाँ प्रदान की हैं। राष्ट्रपति तीन प्रकार की आपातकाल की घोषणा कर सकते हैं। (1) राष्ट्रीय आपातकाल, विशेषकर, युद्ध की स्थिति में, बाहरी आक्रमण या सैनिक विद्रोह होने पर, (2) राज्य में संवैधानिक संकट उत्पन्न होने की स्थिति में तथा (3) वित्तीय आपातकाल।

राष्ट्रपति किसी भी समय राष्ट्रीय आपातकाल की घोषणा कर सकते हैं यदि उन्हें ऐसा महसूस हो कि देश की सुरक्षा खतरे में है। ऐसी स्थिति या तो युद्ध, बाहरी आक्रमण या सैनिक विद्रोह से उत्पन्न हो सकती है। लेकिन इसे संसद में मंजूरी के लिए प्रस्तुत किया जाना है। इसके लिए दोनों सदनों के दो तिहाई बहुमत से पारित करना जरूरी है तथा यह एक माह में स्वीकार करना आवश्यक है। यदि संसद इसे मंजूरी देने से मना कर दे तो यह निरस्त हो जायेगा। यदि इसे मंजूरी मिल जाती है तो यह छः महीने तक जारी रहेगी। लेकिन आपातकाल और आगे भी बढ़ाया जा सकता है यदि राष्ट्रपति हर छः माह बाद इसे मंजूरी दे रहे हैं। लेकिन संसद को इस आपातकाल को हटाने का पूरा अधिकार है। इसके लिए संसद प्रस्ताव पर मतदान होता है फिर इसे संसद में बहुमत से पारित करवाया जाता है। भारत में सर्वप्रथम 1962 में राष्ट्रीय आपातकाल लगाया गया था जब चीन ने आक्रमण किया था दूसरी बार 1971 में जब बंगलादेश युद्ध हुआ तब। तीसरी बार 1975 में आपातकाल लगाया गया था, जब प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी ने राष्ट्रपति को राष्ट्रीय सुरक्षा पर खतरा बताते हुए सलाह दी थी।

धारा 356 के अनुसार किसी राज्य में संविधानिक तंत्र के विफल होने की स्थिति में राष्ट्रपति शासन लागू किया जा सकता है। परन्तु 1994 के उच्चतम न्यायालय के आदेश जिसे बोनई केस के नाम से जाना गया राष्ट्रपति शासन लगाना कठिन हो गया है। इस

अनुसार राष्ट्रपति किसी राज्य सरकार को केवल उसी स्थिति में बर्खास्त कर सकती है, जब इसके प्रस्ताव को संसद के दोनों सदनों पारित किया है। यदि संसद के दोनों सदन इसे पारित नहीं करते हैं तब सरकार के बर्खास्त होने के दूसरे महीने के अंत में प्रस्ताव रद्द हो जाता है तथा बर्खास्त सरकार पुनः स्थापित हो जाती है। इस केस में 1989 में कर्नाटक में एस. आर. बोमाई (मुख्य मंत्री) की सरकार से 19 मंत्रियों ने राज्यपाल को सरकार से अपना समर्थन खींचे हुए पत्र लिखा। जिसके आधार पर राज्यपाल ने सरकार को भंग कर दिया। परन्तु कुछ ही समय में मंत्रियों ने सरकार को अपना समर्थन फिर से दे दिया। लेकिन राज्यपाल ने बोमाई को विधान सभा पटल पर अपना बहुमत साबित करने के लिए अवसर नहीं दिया तथा सरकार को इस आधार पर भंग कर दिया कि उसने अपना बहुमत खो दिया। बोमाई ने राज्यपाल के निर्णय को न्यायालय में चुनौती दी न्यायालय ने 1994 में बोई केस में अपना फैसला सुनाया। राष्ट्रपति शासन कम से कम छ माह तक लागू रहता है। संसद के 44वें संशोधन के तहत इसे छ माह तक और बढ़ाया जा सकता है। इस प्रकार यह एक वर्ष से अधिक नहीं लगाया जा सकता है यदि देश में राष्ट्रीय आपातकाल न हो तो। राज्य में आपातकाल की कुल अवधि तीन वर्ष से अधिक नहीं हो सकती है। इसके अलावा, यदि राज्य सरकार केन्द्र सरकार के निर्देशों का पालन करने से मना कर दे तो भी उस राज्य पर आपातकाल लगाया जा सकता है।

राष्ट्रपति देश में वित्तीय आपातकाल की घोषणा भी कर सकते हैं। संविधान के अनुच्छेद 360 में इसका उल्लेख किया गया है। यदि देश में वित्तीय संकट हो तो राष्ट्रपति इसे राष्ट्रीय आपातकाल मानकर वित्तीय आपातकाल की घोषणा कर सकते हैं। लेकिन इसके लिए भी संसद की मंजूरी लेना आवश्यक है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि राष्ट्रपति के पास असीम शक्तियाँ हैं। लेकिन हकीकत में वे इन शक्तियों का इस्तेमाल प्रधानमंत्री की सलाह या मंत्रीपरिषद की सलाह पर करता है। इस प्रकार राष्ट्रपति की स्थिति ब्रिटिश सम्राट की तरह है न कि अमेरिका के राष्ट्रपति की तरह। यद्यपि राष्ट्रपति राज्य का अध्यक्ष या मुखिया है लेकिन सरकार का मुखिया प्रधानमंत्री ही होता है।

प्रश्न 6. संसदीय कार्य प्रणाली में वास्तविक शक्तियाँ प्रधानमंत्री में निहित होती हैं? चर्चा कीजिए।

उत्तर-

प्रधानमंत्री

संविधान के अंतर्गत वास्तविक शक्तियाँ प्रधानमंत्री के पास होती हैं वे सभी कार्यपालिका शक्तियों का अधिकार रखते हैं। प्रधानमंत्री मंत्रीपरिषद के मुखिया होते हैं। राष्ट्रपति मंत्रीपरिषद की सलाह पर ही कार्य करते हैं। मंत्रीपरिषद वास्तविक रूप में कार्यपालिका होती है न कि राष्ट्रपति।

ब्रिटेन की तरह, भारत में भी प्रधानमंत्री निम्न सदन का नेता होता है। वह सामान्यतया निचले सदन यानी लोकसभा का सदस्य होता है। जब इंदिरा गाँधी 1966 में प्रधानमंत्री बनी तब वे राज्य सभा की सदस्य थी। लेकिन जब वे लोक सभा में चुनी गयी तब से यह परंपरा बनी कि प्रधानमंत्री भी लोकसभा का सदस्य होता है। प्रधानमंत्री की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है। राष्ट्रपति के पास प्रधानमंत्री नियुक्त करने के लिये ज्यादा विकल्प नहीं होते हैं। वे केवल लोकसभा में बहुमत प्राप्त दल के नेता को प्रधानमंत्री नियुक्त कर सकते हैं।

लेकिन ऐसा करते समय वे पूर्ण रूप से संतुष्ट होना चाहते हैं कि वे सदन में अपना बहुत सिद्धांत प्रकट कर देंगे। प्रधानमंत्री राष्ट्रपति की इच्छा तक अपने पद पर बने रह सकते हैं। राष्ट्रपति की इच्छा से तात्पर्य है प्रधानमंत्री को लोक सभा में पूरा बहुमत प्राप्त हो।

राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की सलाह पर अन्य मंत्रियों की भी नियुक्ति करता है। मंत्री किसी भी सदन से बनाया जा सकता है, वह किसी भी सदन की कार्यवाही में भाग ले सकता है। लेकिन वह उसी सदन में वोट दे सकता है जिस सदन का सदस्य हो। कोई भी व्यक्ति जो किसी भी सदन का सदस्य नहीं है उसे मंत्री बनाया जा सकता है लेकिन उसे छः महीने के अंदर दोनों सदन में से किसी एक का सदस्य बनना जरूरी है।

मंत्री परिषद और कैबिनेट

कैबिनेट को साधारण भाषा में मंत्रीपरिषद भी कहा जाता है। लेकिन ये दोनों अलग-अलग मंत्रीपरिषद में कई प्रकार के मंत्री शामिल होते हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व भारत में कैबिनेट नामक संस्था नहीं थी। उस समय कार्यकारी परिषद होती थी। 15 अगस्त 1947 के दिन कार्यकारी परिषद को परिवर्तित करके मंत्री परिषद में बदल दिया गया जो कि संसद के प्रत्येक सदस्य की होती है। 'कैबिनेट' शब्द का प्रयोग मंत्री परिषद के विकल्प के तौर पर किया गया। इस स्तर पर कैबिनेट के सभी मंत्री एक समान होते हैं प्रधानमंत्री को छोड़कर। लेकिन जब कनिष्ठ सदस्यों को मंत्रीमंडल में शामिल किया गया तब से परिस्थिति बदल गयी है। 1977 में 'गोपालस्वामी आयोग' गठित समिति की सिफारिशों के पश्चात् त्रि-स्तरीय मंत्रीपरिषद गठन किया गया। इसमें सबसे ऊपर कैबिनेट रैंक के मंत्री होते हैं। मध्य स्तर पर राज्य मंत्री तथा निचले स्तर पर उप-मंत्री होते हैं।

कैबिनेट रैंक के मंत्री सबसे वरिष्ठ मंत्री होते हैं जो प्रशासन की सबसे महत्वपूर्ण जिम्मेदारी निभाते हैं। यह सबसे शक्तिशाली निष्ठा होती है। यह सरकार को सबसे छोटी निष्ठा होती है लेकिन बहुत महत्वपूर्ण होती है। कैबिनेट के तीन महत्वपूर्ण कार्य होते हैं (1) सरकार की नीतियों को संसद में प्रस्तुत करती है (2) सरकार की नीतियों को लागू करने की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी निभाती है। (3) यह सभी विभागों एवं मंत्रालयों के बीच समन्वय स्थापित करती है। कैबिनेट सामान्यतः नियमित रूप से मिलती है क्योंकि उनका निर्णय-निर्माण करने वाली संस्था है। इसे कैबिनेट सचिवालय द्वारा सहायता मिलती है जिसमें एक कैबिनेट सचिव होता है तथा अन्य वरिष्ठ अधिकारी होते हैं। कार्य को सुगम बनाने के लिए कैबिनेट की अन्य समितियाँ भी होती हैं। ये स्थायी समितियाँ एवं अस्थायी समितियाँ होती हैं। इसको चार स्थायी समिति एवं कुछ तदर्थ समितियाँ होती हैं। स्थायी समिति इस प्रकार हैं (1) रक्षा समिति, (2) आर्थिक समिति (3) प्रशासनिक समिति तथा अस्थायी एवं अस्थायी या तदर्थ समितियाँ? कानूनी मामलों की समिति। अस्थायी या तदर्थ समितियाँ समय-समय पर गठित की जाती हैं।

दूसरी रैंक के मंत्री राज्य मंत्री होते हैं। ये स्वतंत्र प्रभार वाले मंत्री होते हैं तथा उन्हें कैबिनेट मंत्रियों की तरह कार्य करने का अधिकार प्राप्त है। राज्य मंत्रियों एवं कैबिनेट मंत्रियों में केवल इतना फर्क है कि राज्य मंत्री कैबिनेट की बैठकों में हिस्सा नहीं ले सकते केवल तभी कैबिनेट की बैठकों में हिस्सा लेते हैं जब उन्हें बुलाया जाता है। कुछ अन्य मंत्री होते हैं जो राज्य मंत्री से कैबिनेट के अधीन कार्य करते हैं।

निचले स्तर पर उप-मंत्री होते हैं जिन्हें कुछ खास प्रशासनिक जिम्मेदारियाँ दी जाती हैं। ये मंत्री अन्य मंत्रियों से भिन्न होते हैं। इनकी मुख्य जिम्मेदारी इस प्रकार है। (1) संसद में पूछे गये प्रश्नों का जवाब देना तथा संबंधित मंत्री की सहायता करना (2) आम जनता को सरकार की नीतियों के बारे में बताना, संसद के सदस्यों के साथ अच्छा व्यवहार रखना राजनीतिक दलों एवं प्रेस के साथ अच्छा संबंध बनाना। (3) किसी खास समस्या की जीव पड़ताल करना जो उन्हें किसी संबंधित मंत्री द्वारा दी गयी हो। उपर्युक्त बातों से यह पता चलता है कि कैबिनेट मंत्रीपरिषद की धुरी है। इस वजह से वॉल्टर बेगहॉट कैबिनेट की गायिका को सबसे बड़ी समिति कहते हैं। यह कार्यपालिका एवं विधायिका के बीच कड़ी का काम करती है तथा कार्यपालिका एवं विधायिका की शक्तियों को एक साथ जोड़ती है।

सामूहिक उत्तरदायित्व

मंत्रीपरिषद सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धांत पर कार्य करती है। इस सिद्धांत के अंतर्गत सभी मंत्री अपने कार्य के प्रति एवं सरकार के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होते हैं। सामूहिक नेतृत्व के अंतर्गत, सभी मंत्री कैबिनेट के निर्णयों की जिम्मेदारी सामूहिक रूप से साझा करते हैं। शंका एवं असहमति केवल, कैबिनेट के कमरे तक सीमित रहती है। एक बार यदि कोई निर्णय ले लिया तो यह सम्पूर्ण सरकार का निर्णय माना जाता है। यदि कोई मंत्री सरकार के निर्णयों से सहमत नहीं है तथा उनका समर्थन नहीं करता है तो उसे नैतिक आधार पर मंत्रीपरिषद से त्यागपत्र देना पड़ता है।

यदि मंत्रीपरिषद का गठन विभिन्न राजनीतिक दलों के गठबंधन से किया गया हो तो यह न्यूनतम साझा कार्यक्रम पर आधारित होता है ताकि सभी मंत्रालयों में सामंजस्य बनी रहे तथा सभी राजनीतिक दलों को न्यूनतम साझा कार्यक्रम के साथ खड़ा रहना चाहिये। यदि वे ऐसा नहीं करते तो मंत्रीपरिषद अस्तित्व में नहीं रह सकती। मंत्रीपरिषद के भीतर एकता न केवल इसके लिए अनिवार्य है बल्कि इसको कुशलता और कार्यक्षमता के लिए भी जरूरी है। इसके लिए जनता का विश्वास जीतना भी आवश्यक है। जनता सरकार के सदस्यों के बीच सार्वजनिक आक्षेप और लोक नीति जैसे मामलों में आपसी टकराव इसके पतन का प्रमुख कारण था 1979 में।

कैबिनेट और संसद

संसदीय सरकार का मूलभूत तत्व प्रधानमंत्री और इसके कैबिनेट का संसद के प्रति उत्तरदायी होना है। संसद शासन नहीं चलाती बल्कि सरकार की नीतियों का आलोचनात्मक परीक्षण करती है तथा इसे उचित एवं अनुचित मानकर कार्यों की समीक्षा करती है। प्रधानमंत्री एवं इसके मंत्रीपरिषद का अस्तित्व संसद के समर्थन पर निर्भर है। जैसा हमने देखा है, मंत्रीपरिषद सामूहिक रूप से संसद के प्रति उत्तरदायी होती है। इस प्रकार सामान्य तौर पर यह माना जाता है कि संसद कार्यपालिका पर नियंत्रण रखती है। लेकिन यथार्थ में, प्रधानमंत्री ही अपने बहुमत के बल पर संसद की कार्यप्रणाली पर नियंत्रण रखते हैं।

प्रधानमंत्री की शक्तियाँ एवं प्रभाव का स्रोत

हालांकि संविधान में प्रधानमंत्री की शक्तियों का कहीं भी उल्लेख नहीं है लेकिन व्यावहारिक रूप में वे कई प्रकार की शक्तियों का इस्तेमाल करते हैं। प्रधानमंत्री मंत्रीपरिषद

का मुखिया होता है तथा लोकसभा का नेता होता है। प्रधानमंत्री का यह विवेकाधिकार है कि वे अपने मंत्रीमंडल का गठन खुद करते हैं। वे कबिनेट की बैठकों की अध्यक्षता करते हैं तथा उन्हें संसद के सदस्यों को प्रभावित करने की क्षमता होती है। प्रधानमंत्री अपने मंत्रीमंडल के सदस्यों को चुनने के लिए स्वतंत्र होता है लेकिन उसे अपने दल के भीतर समर्थन प्राप्त करना जरूरी होता है। उदाहरण के लिए प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने सरदार पटेल को अपना उप-प्रधानमंत्री नियुक्त किया क्योंकि पटेल पार्टी में बहुत बड़े नेता थे तथा उन्हें नजरअंदाज नहीं किया जा सकता था। पटेल के समर्थकों को मंत्रीमंडल में भी जगह दी गयी थी। इसी प्रकार श्रीमती इंदिरा गाँधी ने भी पार्टी के बड़े नेताओं को अपने मंत्रीमंडल में जगह दी थी। 1971 के मध्यवर्धि चुनावों के बाद इंदिरा गाँधी सबसे मजबूत नेता बनकर सामने आयी थी इसलिए उन्हें पूरी आजादी थी अपने मंत्रियों को चुनने की। लेकिन गठबंधन सरकारों में प्रधानमंत्री के पास अपने मंत्रियों को चुनने का ज्यादा विकल्प नहीं होता है। जनता सरकार में मोरारजी देसाई के कार्यकाल में ऐसे ज्यादा मंत्री थे जिन्हें वे जानते भी नहीं थे। इसी तरह से एच.डी.डी. देवगौड़ा और इन्द्र कुमार गुजराल। की सरकार में भी 14 पार्टियों शामिल थी जिनसे संयुक्त मोर्चा का गठन किया उसमें भी मंत्रियों का चयन पार्टियों के द्वारा किया गया प्रधानमंत्री संसद में बहुमत वाली पार्टी के नेता होते हैं इसलिए उन्हें सबसे ज्यादा ताकतवर समझा जाता है। वे संसदीय शासन प्रणाली में अपनी पार्टी के मजबूत नेता माने जाते हैं। लोकसभा के नेता होने के कारण प्रधानमंत्री के पास संसदीय कार्यप्रणाली के ऊपर नियंत्रण 16 होता है। वे राष्ट्रपति को संसद के सत्र की सूचना देते हैं। लोकसभा अध्यक्ष भी लोकसभा की कार्यवाही के लिए प्रधानमंत्री से सलाह करते हैं। जब संसद का सत्र नहीं चल रहा हो तब प्रधानमंत्री के पास राष्ट्रपति को अध्यादेश लाने की शक्तियाँ होती हैं। सबसे अधिक शक्ति प्रधानमंत्री की होती है लोक सभा को भंग करने की। राष्ट्रपति को प्रधानमंत्री की सलाह मानना जरूरी है। इसी शक्ति से ही प्रधानमंत्री विपक्ष पर भी नियंत्रण रखता है। सरकार का मुखिया होने के कारण प्रधानमंत्री को असीमित अधिकार दिये गये हैं। सरकार की सभी महत्वपूर्ण नियुक्तियाँ प्रधानमंत्री ही राष्ट्रपति के नाम पर करते हैं। इनमें सर्वोच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश तथा अन्य न्यायाधीश, अटार्नी जनरल, सेना प्रमुख, जल प्रमुख एवं वायु सेना प्रमुख शामिल हैं। सभी राज्यों के राज्यपाल, राज-दूत, उच्च आयुक्त तथा चुनाव आयोग के सदस्यों की नियुक्ति भी प्रधानमंत्री की सलाह पर की जाती है।

प्रधानमंत्री अन्य प्रशासनिक एजेंसियों जैसे सी.बी.आई. इत्यादि पर भी नियंत्रण रखता है। इन सब कारणों के अलावा अन्य कुछ विशेषताएँ भी हैं जिस कारण प्रधानमंत्री को और भी शक्तियाँ प्राप्त हैं। कई ऐसे उदाहरण हैं जिसने प्रधानमंत्री को बहुत ही लोकप्रिय बनाया है। कभी-कभी अपने करिष्माई नेतृत्व की वजह से भी बहुत से प्रधानमंत्री लोकप्रिय हुए हैं जैसे जवाहरलाल नेहरू, इंदिरा गाँधी और वर्तमान में नरेन्द्र मोदी।

प्रश्न 7. भारत में सर्वोच्च न्यायालय के गठन, संरचना कार्यकाल, अधिकार पर एक लेख लिखिए।

उत्तर-

सर्वोच्च न्यायालय

संपूर्ण न्यायव्यवस्था तीन स्तरों में विभाजित है। सबसे ऊपर सर्वोच्च न्यायालय है, इसके नीचे उच्च न्यायालय तथा सबसे नीचे सत्र न्यायालय स्थापित हैं। सर्वोच्च न्यायालय

कानून का सर्वोत्तम न्यायालय है। संविधान का मानना है कि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा घोषित कानून सबके लिए बाध्यकारी होगा विशेषकर भारतीय क्षेत्र के सभी छोटे न्यायालयों में। सर्वोच्च न्यायालय के नीचे उच्च न्यायालय होते हैं जो कि राज्यों में स्थापित होते हैं। इन न्यायालयों में जिला सत्र न्यायालय अधीनस्थ न्यायालय एवं अन्य छोटे न्यायालय भी शामिल हैं। संघीय व्यवस्था में न्यायपालिका की महत्ता को देखते हुए सर्वोच्च न्यायालय को भारतीय संविधान की व्याख्या करने का अंतिम अधिकार प्राप्त है। न्यायिक प्रावधानों की रचना करते वक्त संविधान सभा ने न्यायालय की स्वतंत्रता, सर्वोच्च न्यायालय की शक्ति तथा न्यायिक समीक्षा जैसे मुद्दों पर विशेष ध्यान दिया।

संरचना एवं नियुक्तियाँ

सर्वोच्च न्यायालय में एक मुख्य न्यायाधीश के अलावा 26 अन्य न्यायाधीश होते हैं। जब सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना की गयी थी उस समय मात्र आठ न्यायाधीश थे। अब इसकी संख्या बढ़कर 26 हो गयी है। भारत के राष्ट्रपति द्वारा इनकी नियुक्ति की जाती है लेकिन राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री एवं मंत्रीपरिषद की सलाह पर नियुक्ति करते हैं।

संविधान के अनुच्छेद 124 (2) में राष्ट्रपति सर्वोच्च न्यायालय के जजों की नियुक्ति मंत्रीपरिषद की सलाह के पश्चात् करते हैं। सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति राष्ट्रपति विभिन्न न्यायाधीशों के साथ विचार-विमर्श करने के बाद करते हैं।

संवैधानिक प्रावधानों के बावजूद सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति राजनीतिक विवाद के कारण बन गयी है। यहाँ पर यह जानना जरूरी है कि 1973 में जब सरकार ने न्यायाधीश एस. एस. रे को भारत का मुख्य न्यायाधीश नियुक्त किया तब उन्हें बार जजों को दूर रख कर किया गया। उस वक्त के मुख्य न्यायाधीश एस.एम. सीकरी की सिफारिशों को भी सरकार ने नहीं माना था। इसी राजनीतिक हस्तक्षेप से बचने के लिए सर्वोच्च न्यायालय के जजों की नियुक्ति के लिए कुछ योग्यताएँ निर्धारित की गयी हैं। ये योग्यताएँ इस प्रकार हैं:- वह व्यक्ति भारत का नागरिक होना चाहिये, वह किसी उच्च न्यायालय में पाँच वर्ष तक कार्य किया हो, या वह किसी उच्च न्यायालय में दस वर्ष तक कालत की हो। या फिर वह राष्ट्रपति की राय में एक वरिष्ठ और प्रतिष्ठित विधिवक्ता हो।

न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए कोलेजियम प्रणाली (अधिपासी) समिति या मंडल की प्रकृति बड़ी अद्भुत है। यह इसलिए भी काफी लोकप्रिय है क्योंकि यह न्यायाधीशों को चयन करने के लिए न्यायाधीश ही होते हैं। इस प्रणाली की शुरुआत 1990 में दो महत्वपूर्ण निर्णयों के बाद हुई थी। इस प्रणाली में एक निकाय या संस्था होती है जिसमें कुछ वरिष्ठ जज होते हैं जो सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालय के जजों की नियुक्ति एवं तबादले के लिए जिम्मेदार होते हैं।

कार्यकाल

एक बार नियुक्त होने के बाद न्यायाधीश 65 वर्ष की आयु पूरी होने तक अपने पद पर बने रहते हैं। सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश या तो अपने पद से इस्तीफा दे सकते हैं या फिर उन्हें दुर्व्यवहार या काबिल ना होने पर अपने पद से हटाया जा सकता है। हटाने की प्रक्रिया को महाअभियोग कहते हैं। संविधान के प्रावधानों के अनुसार न्यायाधीश

में एक जज के खिलाफ महाभियोग का प्रस्ताव संसद में पेश किया गया था। इसमें सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश बी. रामास्वामी शामिल थे। इनके कार्यकाल में कई प्रकार के अनियमितताएँ पायी गयी थीं इसलिए तीन सदस्यीय जाँच समिति का गठन किया गया था। इस समिति ने यह पाया कि बड़े स्तर पर पद का दुरुपयोग किया गया है तथा इसे जनता के हित को भी चोट पहुँची है और यह पूरी तरह से दुरुपयोग का मामला है। इस प्रस्ताव पर न्यायाधीश बी. रामास्वामी ऐसे पहले जज थे जिनके खिलाफ महाभियोग की कार्यवाही की गयी थी। जज रामास्वामी ने हालांकि यह आरोप लगाया कि इस प्रस्ताव में कई खामियों हैं इसलिए यह प्रस्ताव 1993 में गिर गया था और पास नहीं हुआ था। इसके पक्ष में कुल 401 मत थे जबकि विरोधियों के पास 196 मत गिरे थे तथा बाकी 205 मतदान प्रक्रिया से बाहर रहे थे। हालांकि बाद में जज रामास्वामी अपने पद से इस्तीफा दे दिया था।

वेतन

न्यायाधीशों का सबसे महत्वपूर्ण तत्व जो कि उनकी स्वतंत्रता को निर्धारित करते हैं वह है उनके द्वारा प्राप्त किया जाने वाला वेतन। उनका वेतन बहुत अधिक निर्धारित किया गया है ताकि वे स्वतंत्र, कुशल एवं निष्पक्ष तरीके से कार्य कर सकें। वेतन के अलावा सभी जजों को आधिकारिक अवास भी दिया जाता है जो पूरी तरह मुफ्त होता है। संविधान में यह भी प्रावधान किया गया है कि जजों की तनखाह बढ़ती नहीं जायेगी, सिर्फ वित्तीय आपातकाल स्थिति में ही उनका वेतन बढ़ा जा सकता है। जजों का वेतन भते एवं सुविधाएँ भारत की संविधान निर्माताओं से दिये जाते हैं।

अधिकार

राजनीतिक विवादों से बचने के लिए संविधान ने जजों को कुछ विशेष अधिकार (उन्मुक्तियाँ) दिये हैं ताकि उन्हें आलोचनाओं से एवं अपने आधिकारिक कार्यों की खामियों से बचाया जा सके। न्यायालय को यह अधिकार दिया गया है कि वह ऐसे व्यक्ति के खिलाफ अवमानना की कार्यवाही कर सकता है जो जजों के आधिकारिक कार्यों में बाधा उत्पन्न करता है। यहाँ तक कि संसद में भी जजों के बर्ताव पर कोई चर्चा नहीं हो सकती सिवाय उनको पद से हटाने वाले प्रस्ताव को छोड़कर।

प्रश्न 8. सर्वोच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्रों का वर्णन कीजिए।

उत्तर— सर्वोच्च न्यायालय का क्षेत्राधिकार

संविधान के अनुच्छेद 141 के अंतर्गत सर्वोच्च न्यायालय को यह अधिकार दिया गया है कि उसके बनाये कानून भारत में सभी न्यायालयों पर लागू होंगे। सर्वोच्च न्यायालय को क्षेत्राधिकार को चार वर्गों में विभाजित किया गया है। (1) प्रारंभिक क्षेत्राधिकार, (2) अपील क्षेत्राधिकार (3) परामर्शवादी क्षेत्राधिकार तथा (4) पुनरावलोकन क्षेत्राधिकार।

आरंभिक क्षेत्राधिकार

सर्वोच्च न्यायालय को प्रारंभिक क्षेत्राधिकार की शक्ति पूर्व में संघीय न्यायालय प्राप्त हुई है। संघीय व्यवस्था में विशेषकर भारत में केन्द्र एवं राज्य सरकारें संविधान शक्तियाँ अर्जित करती हैं। केन्द्र एवं राज्यों के मध्य शक्तियों के विभाजन के विवाद को केन्द्र

स्वतंत्र न्यायपालिका ही हल निकाल सकती है। अनुच्छेद 131 के अंतर्गत सर्वोच्च न्यायालय को विशेष अधिकार दिये गये हैं। यह विभिन्न राज्यों के मध्य या केन्द्र एवं राज्यों मध्य विवादों का निपटारा करती है। जब हम सर्वोच्च न्यायालय के विशेष अधिकार की बात करते हैं तो इसका मतलब है भारत में अन्य किसी न्यायालय के पास ऐसे अधिकार नहीं हैं। इसी तरह सर्वोच्च न्यायालय के प्रारंभिक क्षेत्राधिकार का मतलब है कि सभी विवादित पक्ष संघ की इकाई हैं। आस्ट्रेलिया एवं संयुक्त राज्य अमेरिका की भाँति भारत के सर्वोच्च न्यायालय को विभिन्न राज्यों के निवासियों के बीच विवादों को हल करने का प्रारंभिक अधिकार नहीं है।

सर्वोच्च न्यायालय के पास मौलिक अधिकारों की रक्षा के लिए भी विशेष अधिकार प्राप्त हैं। संविधान के अनुच्छेद 32 के अंतर्गत हर नागरिक को यह अधिकार है कि जैसे आपने इकाई 5 में पढ़ा है अपने अधिकारों का प्रवर्तन कराने के लिए समुचित कार्रवाई द्वारा उच्चतम न्यायालय का द्वार खटखटा सके। उच्चतम न्यायालय अपनी आरंभिक अधिकारिता में याचिका की सुनवाई कर सकता है। उच्चतम न्यायालय को यह शक्ति दी गयी है वह प्रदत्त अधिकारों में से किसी को प्रवर्तित कराने के लिये ऐसे निर्देश या आदेश या रिट जिनके अंतर्गत बन्दी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, प्रतिषेध, अधिकार-पृच्छा और उन्नेषण रिट हैं जो भी समुचित हो, जारी कर सके। कोर्ट ऐसे मामलों में व्यक्ति को छोड़ सकता है यदि उसे ऐसा लगे कि यह गैर कानूनी है। अधिकार पृच्छा वाली याचिका पर कोर्ट यह आदेश दे सकता है कि जन अधिकारियों को अपनी कानूनी जिम्मेदारी ठीक से निभानी चाहिये। प्रतिषेध या निषेध वह याचिका है जिसके द्वारा कोर्ट किसी दिवंगत या प्राधीकरण के कामों को रोक सकता है। परमादेश वह याचिका है जिसके द्वारा किसी व्यक्ति को अपने पद से हटने का आदेश दे सकता है। इन याचिकाओं के अलावा सर्वोच्च न्यायालय कार्यपालिका को समुचित निर्देश एवं आदेश भी दे सकता है।

अपीलीय क्षेत्राधिकार

भारत में सर्वोच्च न्यायालय सभी न्यायालयों में सबसे बड़ा अपीलीय न्यायालय है। इसे सभी संवैधानिक मामलों में अपीलीय अधिकार प्राप्त हैं। इसके अलावा सभी सिविल, आपराधिक संपत्ति मामले, मृत्यु दंड तथा अन्य विशेष मामलों में अपीलीय अधिकार प्राप्त हैं। अनुच्छेद 132 में यह प्रावधान दिया गया है कि सर्वोच्च न्यायालय में वे सभी केस जो कि उच्च न्यायालय में विचाराधीन हैं उस पर अपील कर सकते हैं। यदि ऐसे केस जो कि संविधान की व्याख्या से संबंधित हो वे भी मामले अपीलीय अधिकार में आते हैं। यह अपील उच्च न्यायालय पर निर्भर है यदि वह यह प्रमाणित करता है कि उक्त अपील वाकनीय है, यदि नहीं तो फिर सर्वोच्च न्यायालय इसे विशेष लीव अपील प्रदान कर सकता है। अनुच्छेद 133 के अंतर्गत सभी सिविल केस की सुनवाई सर्वोच्च न्यायालय में की जायेगी, संविधान में यह प्रावधान है कि उच्च न्यायालय के अधीन सिविल कार्यवाही की अपील सर्वोच्च न्यायालय में की जाती है। उच्चतम न्यायालय की अपीलीय अधिकारिता, दीवानी, फौजदारी तथा संवैधानिक मामलों पर लागू होती है। अनुच्छेद 134 के अधीन किसी उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध कोई अपील उच्चतम न्यायालय में की जा सकती है। यह अधिकारक्षेत्र सिर्फ तीन श्रेणी के मामलों पर लागू होता है। (क) उच्च न्यायालय ने किसी अभियुक्त को दोषमुक्ति के आदेश को पलट दिया है और उसको मृत्युदंड का आदेश दे दिया है या (ख)

अपने अधिकार के अधीन किसी न्यायालय से किसी मामले के विचारण के लिये अपने पास मंगा लिया है और ऐसे विचारण में अभियुक्त को सिद्धदेश ठहराया है और उसे मृत्युदंड का आदेश दिया है। (ग) अनुच्छेद 134 के अधीन किसी उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध कोई अपील उच्चतम न्यायालय में की जा सकती है, यदि उच्च न्यायालय अनुच्छेद 134 के अधीन प्रमाणित कर देता है कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किये जाने योग्य है। अंत में, अनुच्छेद 136 के अधीन उच्चतम न्यायालय अपने विवेकानुसार भारत के राज्य क्षेत्र के किसी न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा किसी वाद का मामले में पारित किये गये या दिये गये किसी निर्णय, डिक्री, अवधारण, दंगदेश या आदेश की अपील के लिए विशेष इजाजत दे सकेगा।

परामर्श की अधिकारिता

संविधान का अनुच्छेद 143 सर्वोच्च न्यायालय को परामर्श की अधिकारिता प्रदान करता है। सार्वजनिक महत्व की विधि या तथ्य के किसी ऐसे प्रश्न पर उच्चतम न्यायालय की राय राष्ट्रपति माँग सकता है जिसके बारे में उसका विचार हो कि ऐसी राय प्राप्त करना है। परामर्शवादी भूमिका सर्वोच्च न्यायालय की साधारण भूमिका से अलग है। इसके तीन प्रमुख कारण हैं। (1) यदि दो पक्षों में कोई मुकदमा न हो। (2) परामर्शीय राय सरकार पर बाध्य नहीं होगी, तथा (3) कोर्ट का यह निर्णय लागू न माना जाये। सर्वोच्च न्यायालय की परामर्श तभी तक मान्य है जब तक कि किसी महत्वपूर्ण मसलों पर उसकी राय नहीं माँगी गयी हो। इसी प्रकार यह सरकार के लिए भी एक अच्छा विकल्प होता है किसी राजनीतिक मुद्दों को हल करने के लिए।

न्यायिक समीक्षा का अधिकार

सर्वोच्च न्यायालय को किसी भी निर्णय को समीक्षा करने का अधिकार प्राप्त है। सर्वोच्च न्यायालय अमेरिका के न्यायालय से अधिक शक्तिशाली है। अमेरिका में सर्वोच्च न्यायालय केवल उन मामलों की सुनवाई करता है जो कि संघ से संबंधित किसी कानून अथवा संघ से इसका तात्पर्य यह है कि सर्वोच्च न्यायालय अपने किसी भी निर्णय आदेश की समीक्षा कर सकता है। जबकि भारत में सर्वोच्च न्यायालय न केवल संविधान की व्याख्या करता है। बल्कि वह दीवानी एवं फौजदारी जैसे मामलों में भी सुनवाई करता है। यह किसी सीमा की बाध्यता के बिना ऐसे मामलों को अपने पास रख सकता है जो भारत में किसी अधिकरण के पास आया हो। परामर्शवादी अधिकारिता भी भारतीय सर्वोच्च न्यायालय को शक्तिशाली बनाता है जो कि अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय में नहीं है। इन शक्तियों के बावजूद भारतीय सर्वोच्च न्यायालय हमारे संविधान से निर्मित है तथा वह पूर्ण रूप से निर्भर है। केन्द्रीय विधायिका संविधान में संशोधन करके इन पर अंकुश लग सकती है। इसके अतिरिक्त, इन सभी शक्तियों को निलंबित भी किया जा सकता है यदि देश में आपातकाल की घोषणा हो गयी हो।

प्रश्न 9. उच्च न्यायालय के गठन एवं क्षेत्राधिकार पर टिप्पणी लिखिए।

उत्तर-

उच्च न्यायालय

संविधान में उच्च न्यायालय का भी प्रावधान किया गया है जो कि राज्य का सर्वोच्च कीर्तिय न्यायालय होता है। संविधान के भाग छ: के अध्याय 5 में अनुच्छेद 214 के 221 तक

उच्च न्यायालय के संगठन एवं कार्यों के प्रावधान दिये गये हैं। संविधान के अनुच्छेद 125 में यह कहा गया है कि प्रत्येक राज्य का एक उच्च न्यायालय होगा। इन न्यायालयों को भी संवैधानिक दर्जा प्राप्त होता है। संसद को यह अधिकार है कि वह दो या इससे अधिक राज्यों का एक सामूहिक उच्च न्यायालय गठित कर सकती है। उदाहरण के लिये पंजाब और हरियाणा का एक ही उच्च न्यायालय है। इसी तरह, असम, नागालैण्ड, मीज़ोरम और अरुणाचल प्रदेश का भी एक ही उच्च न्यायालय है।

संघ शासित प्रदेशों में संसद किसी उच्च न्यायालय को इसके अधीन कर सकती है या फिर अलग से एक नया उच्च न्यायालय सृजित कर सकती है। दिल्ली जो कि एक केन्द्र शासित प्रदेश था उसका अपना एक उच्च न्यायालय है जबकि मद्रास उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में पांडिचेरी है, केरला, उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में लक्षद्वीप है, मुंबई उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में दादरा एवं नागर हवेली, कोलकाता उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में अंडमान और निकोबार द्वीप समूह तथा पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में चंडीगढ़ आता है।

उच्च न्यायालय का गठन

सर्वोच्च न्यायालय से भिन्न, उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की कोई न्यूनतम संख्या नहीं होती है। राष्ट्रपति समय-समय पर उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की संख्या निर्धारित करते हैं। उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति राष्ट्रपति करते हैं। राष्ट्रपति इसके लिए भारत के मुख्य न्यायाधीश एवं राज्यों के राज्यपाल से सलाह लेते हैं। न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए राष्ट्रपति मुख्य न्यायाधीश की सलाह लेते हैं। संविधान में अतिरिक्त न्यायाधीशों की नियुक्ति का भी प्रावधान किया गया है। लेकिन ये नियुक्तियाँ अस्थायी होती हैं जो कि दो वर्ष से अधिक नहीं होती हैं। कोलेजियम व्यवस्था के अंतर्गत भी न्यायाधीशों की नियुक्ति का प्रावधान है। इसमें शीर्ष न्यायालय के वरिष्ठ जज नामों की सिफारिश करता है।

उच्च न्यायालय के न्यायाधीश का कार्यकाल 62 वर्ष तक होता है। वह अपना इस्तीफा देकर पद से हट सकता है। राष्ट्रपति किसी भी जज को दुराचार के आरोप में अपने पद से हटा सकता है। यह प्रक्रिया सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश के समान है।

अधिकार क्षेत्र

उच्च न्यायालय का प्रारंभिक क्षेत्राधिकार मौलिक अधिकारों को लागू करना, केन्द्र एवं विधान सभा के चुनाव से संबंधित विवादों का निपटारा करना, तथा राजस्व मामले भी शामिल है। अपीलीय क्षेत्राधिकार दीवानी एवं फौजदारी दोनों मामलों में होता है। दीवानी मामलों में उच्च न्यायालय या तो प्रथम अपील कोर्ट है या दूसरा। जबकि फौजदारी मामलों में उच्च न्यायालय किसी विशेष केस की सुनवायी करता है। इन दोनों के अतिरिक्त उच्च न्यायालय को चार अन्य शक्तियाँ भी प्राप्त हैं :

(1) मौलिक अधिकारों को लागू करने के लिए याचिका दायर करने की शक्ति होती है। यह अधिकार सर्वोच्च न्यायालय से भी बढ़ा है। यदि मौलिक अधिकारों का हनन हो रहा है तो वह याचिका दायर कर सकता है।

(2) सभी न्यायाधिकरणों के कार्यों का निरीक्षण करना विशेषकर सशस्त्र सेना से संबंधित कार्यों को छोड़कर। यह समय-समय पर नियम एवं कानून बना सकता है तथा कुछ दिशा निर्देश भी जारी करता है ताकि न्यायालय के कार्यों को प्रभावशाली बनाया जा सके।

(3) संविधान की व्याख्या से संबंधित केशों को अधीनस्थ न्यायालय से अपने पास स्थानांतरित करना।

(4) उच्च न्यायालय के अधिकारियों एवं नौकरों को नियुक्त करने का भी अधिकार है। कुछ मामलों में उच्च न्यायालय का अधिकार क्षेत्र प्रतिबंधित है। जैसे, इसे उन मामलों में कोई अधिकार नहीं है जो केन्द्र के एक्ट के अंतर्गत आते हों, चाहे वह मौलिक अधिकार के 24) उल्लंघन का मामला ही क्यों न हो।

प्रश्न 10. भारत में न्यायिक समीक्षा का आलोचनात्मक विश्लेषण कीजिए।

उत्तर-

न्यायिक समीक्षा

न्यायिक पुनरावलोकन का अर्थ है किसी भी निर्णय की समीक्षा करना। न्यायिक पुनरावलोकन का उन देशों में काफी महत्व है जहाँ पर लिखित संविधान है क्योंकि उन देशों में सीमित सरकार की अवधारणा लागू होती है। न्यायिक पुनरावलोकन इस अर्थ में माना जाता है कि इससे किसी विधायिका की शक्तियों की मान्यता कहाँ तक उचित है तथा सरकार के कार्यों की वैधता कहाँ तक है। विशेषकर संविधान के प्रावधानों के अनुरूप सरकार के कार्य संपन्न हो रहे हैं या नहीं इन सब कारणों के लिए न्यायालय को न्यायिक पुनरावलोकन की शक्तियाँ दी गयी हैं।

इंग्लैंड में लिखित संविधान नहीं है। यहाँ पर संसद ही सर्वोच्च सत्ता है। यहाँ पर न्यायालय को संसद के द्वारा पारित कानूनों की समीक्षा करने का अधिकार नहीं है। हालाँकि इंग्लैंड में कोर्ट को कार्यपालिका के कार्यों की वैधता की समीक्षा कर सकती है। संयुक्त राज्य अमेरिका में न्यायापालिका को कार्यपालिका कार्यों की समीक्षा का अधिकार दिया गया है। यह सभी कार्यों की समीक्षा करता है कि पूरी प्रक्रिया अपनायी गयी या नहीं। भारत में यदि कोई कार्य संविधान के मुताबिक नहीं है तो न्यायालय उसे अवैध घोषित कर सकता है। संविधान में वर्णित मौलिक अधिकार एवं संवैधानिक उपचारों का अधिकार इसी संदर्भ में है।

सर्वोच्च न्यायालय की न्यायिक समीक्षा का अधिकार संविधान एवं अन्य विधायक कार्यों तक लागू होता है। हालाँकि न्यायिक पुनरावलोकन संविधान संशोधन में विवादस्थ होता है। क्योंकि संविधान में अनुच्छेद 368 के अनुसार, संविधान में संशोधन की शक्ति केवल संसद द्वारा ही दी जा सकती है। हालाँकि अनुच्छेद 13 में यह भी कहा गया है कि संसद ऐसा कोई कानून नहीं बना सकती जिससे कि मौलिक अधिकारों पर असर पड़े। इससे यह साबित होता है कि संविधान में क्या वाकई कोई संशोधन किया जा सकता है? क्या ऐसा कोई संशोधन जो मौलिक अधिकारों से संबंधित हो वह असंवैधानिक माना जायेगा? यह विवाद भारत की आजादी के दो दशक तक चलता रहा था।

प्रारंभ में, न्यायालय ने संविधान संशोधन को कानून नहीं माना था क्योंकि, यह अनुच्छेद 13 के अनुरूप नहीं था। लेकिन 1967 में, गोलकनाथ केस के संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय ने यह माना कि संविधान संशोधन भी एक कानून है यदि वह मौलिक अधिकारों का उल्लंघन न करे, यदि ऐसा करे तो वह असंवैधानिक माना जायेगा। पहले के सभी

संशोधन जो संपत्ति के मौलिक अधिकार से संबंधित थे सभी असंवैधानिक घोषित किये गये। यदि कोई कानून लंबे समय तक मान्य रहे तो यह वैध माना जाता है क्योंकि इसका असर समाज पर पड़ता है। यदि पुराने सभी संशोधन वैध माने जाते हैं तो उन सबको लागू किया जाता है। लेकिन इससे राजनीतिक एवं आर्थिक उथल-पुथल की संभावना बनी रहती है। लेकिन ऐसी स्थिति से निपटने के लिए पुराने सभी कानूनों को सही माना गया। लेकिन सर्वोच्च न्यायालय ने यह माना कि भविष्य में जो भी संशोधन हो यदि मौलिक अधिकारों के विरुद्ध हो तो वे मान्य नहीं होंगे। न्यायालय ने यह भी माना कि अनुच्छेद 368 को संविधान की पूरी तरह से संशोधन का अधिकार नहीं है बल्कि यह मात्र संशोधन की एक प्रक्रिया है। इस व्याख्या ने भी मुश्किल पैदा कर दी। यदि किसी प्रावधान को संशोधन करने की जरूरत हो तो, यह मुश्किल होगा क्योंकि इससे मौलिक अधिकारों पर प्रभाव पड़ सकता है।

1970 में, जब सर्वोच्च न्यायालय ने इंदिरा गाँधी के लोक-लुभावन वादों को विफल किया, जैसा कि प्रीवी पर्स का खात्मा, तथा बैंकों का राष्ट्रीयकरण, तब प्रधानमंत्री ने संसद की सर्वोच्चता को प्रमुख माना। 1971 में उन्हें दो तिहाई बहुमत प्राप्त हुआ तब उसने इसे सही माना था। 1972 में, संसद ने 25 वें संविधान संशोधन पारित किया जिसमें विधायिका को यह अनुमति दी कि वह मौलिक अधिकारों पर भी अतिक्रमण कर सकती है। यदि यह राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धांतों को प्रभावित करे। कोई भी न्यायालय ऐसे प्रश्नों की अनुमति नहीं दे सकता। 28 वें संशोधन के अंतर्गत भारतीय राज्यों के पूर्व शासक जिनको विशेष सुविधा प्राप्त थी उनके प्रीवी पर्स को खत्म कर दिया गया था।

इन संशोधनों को सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती दी गयी थी। 1973 में यह केशवानंद भारत केस के नाम से प्रचलित हुआ था। इसे मौलिक अधिकारों से संबंधित केस भी माना जाता है। सर्वोच्च न्यायालय ने यह माना कि संसद मौलिक अधिकारों में भी संशोधन कर सकती है लेकिन यह संविधान के मूल ढाँचे में परिवर्तन नहीं कर सकती है। 'मूल ढाँचे' के अंतर्गत, संविधान संशोधन तभी तक मान्य होगा जब तक कि यह मूल ढाँचे को प्रभावित नहीं करे। 'मूल ढाँचे में परिवर्तन' का सिद्धांत ही सर्वोच्च न्यायालय की वास्तविक न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति मानी जाती है।

इस सिद्धांत के बाद संविधान में संशोधन करते वक्त काफी सावधानी बरती गयी थी। किसी व्यक्ति के संसद में चुने जाने को भी चुनौती दी गयी थी जो कि प्रधानमंत्री का पद ग्रहण करता हो। 39 वें संशोधन ने एक अलग प्रक्रिया का प्रावधान किया। ऐसे किसी भी मसले को संसद की विशेष समिति के अंतर्गत चुनौती दी जा सकती है, लेकिन यह वैध माना तभी जायेगा जब इस पर कोई प्रश्न नहीं पूछेगा। सर्वोच्च न्यायालय इस संशोधन को अवैध माना क्योंकि यह संविधान के मूल ढाँचे के विपरीत था। कोर्ट ने यह दलील दी कि मुक्त और निष्पक्ष चुनाव लोकतंत्र का अहम भाग है। चुनाव का सही परीक्षण किये बिना किसी व्यक्ति को सही मान लेना, ठीक नहीं है, यह संविधान के मूल लोकतांत्रिक आदर्शों के खिलाफ है। बाद के एक और मामले में जिसे हम मिनरवा मिल केस के नाम से जानते हैं, सर्वोच्च न्यायालय एक कदम आगे बढ़ा। 1976 के 42 वें संविधान संशोधन के तहत अनुच्छेद 368 में एक भाग जोड़ा गया जिसमें संविधान संशोधन को न्यायिक पुनरावलोकन से दूर रखा गया। कोर्ट ने यह माना कि यह न्यायिक पुनरावलोकन के सिद्धांत के विपरीत है जो कि संविधान की प्रमुख विशेषता है।

1970 से न्यायपालिका ने मौलिक अधिकारों की रक्षा के लिए बड़ी भूमिका निभाई है। यह मुख्य रूप से न्यायिक सक्रियता के रूप में जाना जाता है। सर्वोच्च न्यायालय ने वंचित वर्गों के अधिकारों की रक्षा के लिए कदम उठाये जो कि गरीबी सामाजिक भेदभाव तथा जागरूकता की कमी के कारण अपने अधिकारों की मांग के लिए कोर्ट तक पहुँच नहीं पाते हैं। सर्वोच्च न्यायालय ने अपने सुने जाने के अधिकार वाले सिद्धांत को कम किया जो कि कोर्ट को न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति को सीमित करता है। सुने जाने के अधिकार के सिद्धांत के माध्यम से कोई भी व्यक्ति कोर्ट तक जा सकता है यदि उसे किसी प्रशासनिक कार्यवाही से ऐसा लगे कि उसे अपने अधिकार देने से इनकार किया जा रहा हो। 1979 में सर्वोच्च न्यायालय ने यह सुनने का निर्णय लिया कि ऐसे किसी भी केस में वह पीड़ित व्यक्ति की बजाय उसके पक्ष में अन्य व्यक्ति को सुनेगा जो कि इस केस में जनहित में लाया जाता है।

1982 में, सर्वोच्च न्यायालय ने एक फैसला सुनाया जो निर्माण मजदूरों के अधिकारों से संबंधित था जिसमें उसने लोगों को अपने जनतांत्रिक अधिकार प्रदान किये। इसे हम जनहित याचिका का अधिकार भी कहते हैं। अमेरिका के कोर्ट का उदाहरण देते हुए भारतीय न्यायालय ने भी किसी भी व्यक्ति को जनहित में कोर्ट में जाने का अधिकार है। वह व्यक्ति एक पत्र के माध्यम से भी कोर्ट जा सकता है। इसने सभी व्यक्तियों को अपने पास आने का अधिकार दिया जनहित के मुद्दों के लिए। अब बड़ी संख्या में कोर्ट में ऐसे केस आ रहे हैं जिसमें लोगों के अधिकार के अलावा, गरीबों के जीवन-यापन में सुधार तथा पर्यावरण सुरक्षा जैसे मुद्दे भी शामिल होते हैं। इस कारण अब न्यायालय ने गरीबों एवं वंचितों के अधिकारों की रक्षा करने के लिए कुछ उपाय किये हैं।

1990 में, राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग, महिला आयोग, पिछड़ा वर्ग आयोग तथा अनुसूचित जाति एवं जन जाति आयोग की स्थापना की गयी ताकि दलितों, आदिवासियों, अल्पसंख्यकों एवं महिलाओं के अधिकारों की रक्षा की जा सके। इसके अलावा सन् 2000 में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का भी गठन किया गया ताकि मौलिक अधिकारों की रक्षा की जा सके। इस आयोग ने पीड़ित व्यक्तियों के मानव अधिकारों के उल्लंघन पर जाँच करने तथा उसे न्याय दिलाने की बात कही। हालांकि इसके पास सजा दिलाने की शक्ति नहीं है। लेकिन वह मानव अधिकार के उल्लंघन के खिलाफ सरकार को अपनी सिफारिश दे सकता है।

जनहित याचिका के अधिकार को प्रदान करने के पश्चात् कुछ लोगों ने इसे जनतांत्रिक अधिकारों की रक्षा का सबसे बड़ा उपाय माना, और यह अधिकार संसद ने नहीं बल्कि न्यायालय ने दिया है। अब कोर्ट के पास ढेरों जनहित याचिकाएँ आ रही हैं। इससे यह पता चलता है कि लोगों को अपने अधिकारों से वंचित किया जा रहा है। लेकिन इससे कोर्ट भी दबाव में है तथा उसके ऊपर और अधिक भाड़ आता जा रहा है।

प्रश्न 11. राज्यों में कार्यपालिका के गठन एवं विभिन्न अंगों का विवरण दीजिए।

उत्तर—

राज्यपाल

भारतीय संविधान के अनुसार प्रत्येक राज्य के लिए एक राज्यपाल होगा। यदि आवश्यकता पड़े तो एक ही व्यक्ति दो या दो से अधिक राज्यों के लिए भी राज्यपाल बनाया जा सकता है। प्रत्येक राज्य की कार्यपालिका संबंधी शक्तियाँ वहाँ के राज्यपाल में निहित

होती हैं। यह इन शक्तियों का प्रयोग प्रत्यक्ष अथवा अधीनस्थ अधिकारियों के माध्यम से कर सकता है।

राज्यपाल नियुक्ति, योग्यताएं, कार्यकाल, इत्यादि

किसी राज्य के राज्यपाल की नियुक्ति भारत के राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। किसी राज्यपाल को उसी राज्य में या किसी दूसरे राज्य में पुनः नियुक्ति करने पर कोई पाबंदी नहीं है। इससे यह पता चलता है कि राज्यपाल निर्वाचित नहीं होता परंतु नियुक्त किया जाता है। राज्यपाल बनने के लिए निम्नलिखित योग्यताएँ होनी चाहिए:

1. उसे भारत का नागरिक होना चाहिए।
2. यह कम से कम 35 वर्ष का होना चाहिए, और
3. अपने कार्यकाल में किसी अन्य लाभ वाले पद पर नहीं रह सकता।

किंतु यदि कोई व्यक्ति संसद के किसी सदन अथवा राज्य विधायिका का अथवा राष्ट्रीय या राज्य स्तर पर मंत्रिपरिषद का सदस्य है और उसे राज्यपाल नियुक्त कर दिया जाता है तो वह मंत्रीपरिषद का सदस्य नहीं रहता अर्थात् पदमुक्त माना जाता है। राज्यपाल की नियुक्ति पांच वर्ष के लिए की जाती है परंतु प्रायः राष्ट्रपति की इच्छा तक अपने पद पर बना रहता है। वह अपना कार्यकाल समाप्त होने से पूर्व त्यागपत्र दे सकता है अथवा राष्ट्रपति संरचना करते समय या उसे पदच्युत करते समय राष्ट्रपति प्रधानमंत्री के परामर्श को मानता है। उसे निशुल्क आवास दिया जाता है, जिसे राजभवन कहते हैं। उसके वेतन, भत्ते, तथा अन्य सुविधाओं का निर्धारण समय-समय पर कानून बना कर किया जाता है किंतु उन्हें किसी भी राज्यपाल के कार्यकाल के दौरान कम नहीं किया जा सकता।

राज्यपाल: शक्तियाँ, स्थिति तथा भूमिका

राज्यपाल की शक्तियाँ एवं कार्य मुख्यतः दो श्रेणियों में बांटे जा सकते हैं— (1) राज्य का प्रमुख होने के नाते (2) केन्द्रीय सरकार के प्रतिनिधि के रूप में। राज्य का मुखिया होने के नाते इसकी शक्तियों के अंतर्गत, आप इसकी कार्यपालिका संबंधी, विधायी, वित्तीय तथा क्षमादान करने की शक्तियों के बारे में पढ़ेंगे। हम सबसे पहले राज्यपाल की इन्हीं शक्तियों के बारे में अध्ययन करेंगे।

(क) कार्यकारी शक्तियाँ

राज्य में सभी कार्यपालिका संबंधी कार्य राज्यपाल के नाम से ही होते हैं। वह न केवल मुख्यमंत्री की नियुक्ति करता है बल्कि मुख्यमंत्री की सलाह से अन्य मंत्रियों को भी नियुक्ति करता है। स्थापित परम्परा के अनुसार विधान सभा में बहुमत प्राप्त दल के नेता को अथवा किसी भी दल को स्पष्ट बहुमत न मिलने की स्थिति में कुछ दलों के गठबंधन के नेता को सरकार बनाने के लिए आमंत्रित करता है। वह मुख्यमंत्री की सलाह से अन्य मंत्रियों में विभागों का विभाजन करता है। राज्यपाल राज्य के महान्यायवादी और राज्य के लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष एवं सदस्यों की नियुक्ति भी करता है।

वह उच्च न्यायालय को छोड़कर राज्य के सभी न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति करता है किंतु उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति

राज्य की कार्यपालिका का प्रमुख होने के नाते अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने के लिए राज्यपाल मुख्यमंत्री के नेतृत्व में मंत्रिपरिषद से परामर्श एवं सहायता लेता है।

(ख) विधायी शक्तियाँ

राज्यपाल राज्य विधान सभा का एक अभिन्न अंग है तथा उसकी अनेक विधायी शक्तियाँ भी हैं। उसे राज्य विधान मंडल की बैठक बुलाने या स्थगित करने का अधिकार है। वह चाहे तो मुख्यमंत्री एवं मंत्रिपरिषद के परामर्श पर विधान सभा को भंग भी कर सकता है। वह राज्य की विधान सभा को अथवा दोनों सदनों की संयुक्त बैठक को सम्बोधित कर सकता है। वह किसी एक सदन अथवा दोनों सदनों को संदेश भेज सकता है। यदि राज्यपाल के विचार में आगल भारतीय समुदाय को राज्य विधान सभा में उचित प्रतिनिधित्व न मिले हो, तो राज्यपाल इस समुदाय के एक सदस्य को विधान सभा के लिए मनोनीत कर सकता है।

जिन राज्यों में विधान परिषद है, वहाँ का राज्यपाल विधान परिषद की कुल सदस्य संख्या के 1/6 सदस्यों को मनोनीत करता है। ये मनोनीत सदस्य साहित्य, कला, विज्ञान सहकारिता अथवा समाज सेवा में ख्याति प्राप्त व्यक्ति होते हैं।

किसी भी विधेयक को कानून बनने के लिए राज्यपाल की स्वीकृति आवश्यक है। इस संबंध में राज्यपाल के पास निम्नलिखित विकल्प हैं—

(क) राज्यपाल विधेयक को स्वीकृति प्रदान करे, ऐसा होने पर विधेयक कानून बन जाता है।

(ख) वह विधेयक को स्वीकृति देने की बजाए अपने पास रख ले तो इस स्थिति में विधेयक कानून नहीं बन पाता।

(ग) राज्यपाल कुछ संशोधनों सहित विधेयक को पुनर्विचार के लिए वापस भेज सकता है। यदि सदन इस विधेयक को संशोधित करके या मूल रूप से पारित कर राज्यपाल के पास भेज दे, तो वह स्वीकृति देने से मना नहीं कर सकता।

(घ) वह विधेयक को राष्ट्रपति के विचारार्थ सुरक्षित रख सकता है।

यदि राज्य विधायिका का अधिवेशन न चल रहा हो, तो राज्यपाल को अध्यादेश जारि करने का अधिकार है किंतु इस प्रकार के अध्यादेश को विधान मण्डल की अगली सभा प्रारम्भ होने के छह सप्ताह के अंदर स्वीकृति मिलना आवश्यक है, अन्यथा अध्यादेश प्रभावी नहीं रहता। राज्य विधान सभा अध्यादेश के स्थान पर निर्धारित अवधि में एक नया कानून बना सकती है।

कार्यपालिका संबंधी शक्तियों की तरह विधायी शक्तियों का प्रयोग भी वास्तव में मुख्यमंत्री के नेतृत्व में मंत्रिपरिषद द्वारा किया जाता है।

(ग) वित्तीय शक्तियाँ

1. राज्यपाल की पूर्व अनुमति के बिना कोई धन विधेयक राज्य विधान सभा में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता।

2. राज्य का वार्षिक बजट तथा अनुपूरक बजट, राज्यपाल के नाम से ही, विधान सभा में प्रस्तुत किया जाता है।

3. राज्य की आकस्मिक निधि पर राज्यपाल का नियंत्रण होता है।

(घ) क्षमादान की शक्ति

राज्यपाल के पास न्यायालय द्वारा दण्डित किसी अपराधी को उस राज्य के किसी कानून के विरुद्ध अपराध करने पर मिले दण्ड को माफ, स्थगित अथवा कम करने की शक्ति है।

(ङ) स्वविवेक की शक्तियाँ

जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि राज्यपाल अपनी कार्यकारी संबंधी, विधायी, वित्तीय तथा न्यायिक शक्तियों का प्रयोग करते समय मुख्यमंत्री के नेतृत्व में मंत्रिपरिषद से परामर्श तथा सहयोग लेता है। उसकी यह शक्तियाँ उसे अपने राज्य के अध्यक्ष के नाते मिली हुई हैं। उसकी कुछ अन्य शक्तियाँ भी हैं जो उसे केन्द्रीय सरकार के प्रतिनिधि के रूप में मिली हुई हैं। इन शक्तियों को स्वविवेक की शक्तियाँ भी कहते हैं। ऐसा कुछ विशिष्ट परिस्थितियों में होता है जब राज्यपाल मंत्रिपरिषद के परामर्श के बिना कोई कार्य करता है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि राज्यपाल की ऐसी शक्तियों का प्रयोग उसकी इच्छा पर निर्भर करता है। ये शक्तियाँ हैं—

1. यदि राज्यपाल के विचार में राज्य में संवैधानिक तंत्र विफल हो चुका हो तो वह उसकी सूचना तुरंत राष्ट्रपति को देकर, राष्ट्रपति शासन लागू करने की सिफारिश कर सकता है। ऐसी स्थिति में मंत्रिपरिषद् की सलाह न लेकर, राज्यपाल स्वयं निर्णय करता है। इसलिए इसे स्वविवेक संबंधी शक्ति कहा जाता है। यदि राज्यपाल की सिफारिश राष्ट्रपति द्वारा स्वीकार कर ली जाती है तो अनुच्छेद 356 के अंतर्गत राष्ट्रपति संकट काल की घोषणा करता है और मंत्रिपरिषद को भंग कर दिया जाता है। विधान सभा भी या तो भंग कर दी जाती है अथवा स्थगित कर दी जाती है। इस काल में राज्यपाल राष्ट्रपति के अभिकर्ता के रूप में शासन करता है।

2. एक परिस्थिति यह भी हो सकती है कि राज्यपाल किसी विधेयक को राष्ट्रपति के विचारार्थ सुरक्षित सरकार की रखना चाहे। क्योंकि राज्यपाल यह निर्णय स्वयं अपने आप लेता है, इसलिए यह भी उसकी स्वविवेक की शक्ति है। राज्यपाल की स्वविवेक की शक्तियाँ असामान्य और संकट काल के लिए रखी गई हैं। किंतु देखा यह गया है कि इन शक्तियों का प्रयोग न केवल ऐसी परिस्थितियों में हुआ है बल्कि सामान्य परिस्थितियों में भी विवादास्पद तरीके से किया गया है, जिससे केंद्र और राज्यों के संबंध में तनाव पैदा हुआ है।

प्रश्न 12. राज्य विधायिका के दोनों सदनों पर एक विस्तृत लेख लिखिए।

उत्तर—

राज्य विधायिका

प्रत्येक राज्य में एक विधायिका होती है। नीचे चित्र में आप कर्नाटक राज्य की विधानसभा का भवन देख रहे हैं। आइये हम समझें कि राज्य विधायिका का गठन कैसे किया जाता है। कुछ राज्यों में विधायिका द्विसदनीय है अर्थात् विधायिका में दो सदन हैं। अधिकांश राज्यों में विधायिका एक सदनीय है अर्थात् वहाँ एक ही सदन है। राज्यपाल राज्य विधायिका का अभिन्न अंग होता है। एक सदनीय विधायिका में विधानसभा होती है तथा द्विसदनीय विधायिका में एक विधानसभा होती है जिसे निम्न सदन तथा दूसरी विधान परिषद होती है जिसे उच्च सदन कहा जाता है। वर्तमान में बिहार, जम्मू तथा कश्मीर, कर्नाटक, महाराष्ट्र एवं उत्तरप्रदेश में द्विसदनीय विधानमंडल है और बाकी सभी राज्यों के एकसदनीय विधायिका हैं।

विधानसभा का गठन

विधानसभा उन राज्यों में भी वास्तविक विधायिका होती है, जहां द्विसदनीय विधायिकाएँ हैं। भारतीय संविधान के अनुसार, राज्य विधान सभा में 500 सदस्यों से अधिक तथा 60 से कम सदस्य नहीं होंगे। लेकिन गोवा, सिक्किम तथा मिजोरम जैसे बहुत छोटे राज्यों की विधायिकाओं की सदस्य संख्या 60 से कम है। विधानसभा में अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति के लिए सीटें आरक्षित की गयी हैं। यदि राज्यपाल को ऐसा महसूस हो कि राज्य विधान सभा में एंग्लो-इंडियन समुदाय का पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है तो वह उस समुदाय के एक सदस्य को सदन के लिए मनोनीत कर सकता है। विधानसभा एक निर्वाचित सदन है। इसके सदस्य, सार्वभौम वयस्क मतधिकार के आधार पर नागरिकों द्वारा निर्वाचित किये जाते हैं। राज्य विधानसभा का सदस्य चुने जाने के लिए संविधान में कुछ निश्चित योग्यताओं का उल्लेख किया गया है

- वह भारत का नागरिक हो;
- वह 25 की आयु पूरी कर चुका हो;
- उसका नाम मतदाता सूची में दर्ज हो;
- वह किसी लाभ के पद पर नहीं हो; और
- वह सरकारी कर्मचारी नहीं हो।

विधानसभा का कार्यकाल 5 वर्ष का होता है। लेकिन मुख्यमंत्री की सलाह पर राज्यपाल विधानसभा को कार्यकाल के पूर्व भी भंग कर सकता है। इसी तरह, राज्य में राष्ट्रपति शासन के दौरान भी विधानसभा निर्वाचित या भंग की जा सकती है। राष्ट्रीय आपात के समय संसद राज्य विधान सभाओं की अवधि बढ़ा सकती है; किन्तु एक बार में एक वर्ष से अधिक की अवधि नहीं बढ़ाई जा सकती।

विधानपरिषद का गठन

राज्य विधायिका के दूसरे अर्थात् उच्च सदन को विधानपरिषद कहते हैं। इसकी सदस्य संख्या राज्य विधान सभा की कुल सदस्य संख्या के एक तिहाई से अधिक तथा 10 सदस्यों से कम नहीं हो सकती। जम्मू तथा कश्मीर की विधान परिषद में 36 सदस्य हैं यह एक अपवाद है। विधानपरिषद के सदस्य अंशतः निर्वाचित तथा अंशतः मनोनीत होते हैं विधानपरिषद की संरचना निम्न रूप में होती है :

- इसके 1/3 सदस्य राज्य के स्थानीय निकायों जैसे नगरपालिकाओं, जिला बोर्डों तथा अन्य स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा निर्वाचित किये जाते हैं;
- इसके 1/3 सदस्य राज्य विधान सभा के सदस्यों द्वारा निर्वाचित किये जाते हैं;
- इसके 1 / 12 सदस्य ऐसे व्यक्तियों से मिलकर बनने वाले निर्वाचक मण्डलों द्वारा निर्वाचित किये जाते हैं जो राज्यक्षेत्र में कम से कम तीन वर्ष के स्नातक हैं;
- इसके 1/12 सदस्य ऐसे व्यक्तियों से मिलकर बनने वाले निर्वाचक मण्डलों द्वारा निर्वाचित किये जाते हैं जो राज्य के भीतर माध्यमिक पाठशालाओं में, शिक्षण के काम में कम से कम तीन वर्ष से संलग्न हों; और
- शेष 16 सदस्य राज्य के राज्यपाल द्वारा मनोनीत किये जाते हैं।

विधान परिषद एक स्थायी सदन है और इसलिए यह भंग नहीं होती है। इसके सदस्य एक वर्ष के लिए निर्वाचित/नामांकित किये जाते हैं। प्रत्येक दो वर्ष में इसके 1/3 सदस्य निवृत्त हो जाते हैं। निवृत्त सदस्य पुनः चुने जाने के लिए योग्य होते हैं। राज्य विधानपरिषद का सदस्य बनने की योग्यताएं राज्य विधानसभा के सदस्यों के समान ही हैं। किन्तु विधान सभा के मामले में निम्नतम उम्र सीमा 25 वर्ष है जबकि विधानपरिषद के लिए यह 30 वर्ष है।

राज्यविधायिका की बैठकें वर्ष में कम से कम दो बार होती हैं। परंतु दो सत्रों के बीच की अवधि छः माह से अधिक की नहीं हो सकती। राज्य विधानसभा तथा विधानपरिषद अपने पदाधिकारियों जैसे विधानसभा अध्यक्ष, विधानसभा उपाध्यक्ष, विधान परिषद अध्यक्ष तथा विधान परिषद उपाध्यक्ष आदि का चुनाव करती हैं।

दोनों सदनों का कार्य संबंधित पीठासीन अधिकारियों द्वारा सम्पादित किया जाता है, जो कि सदन में अनुशासन तथा व्यवस्था भी बनाये रखते हैं।

राज्य विधायिका के कार्य

राज्य विधायिका निम्न तरह के कार्य करती है:

(अ) विधायी कार्य-विधानसभा को विधि निर्माण का अधिकार है। सभी कानून इसके द्वारा पारित किये जा सकते हैं। जहाँ पर द्विसदनीय विधायिका है यहाँ सामान्य विधेयक किसी भी सदन में प्रस्तुत किये जा सकते हैं। कोई विधेयक जो विधानसभा द्वारा पारित कर दिया जाता है उसे विधानपरिषद के पास भेजा जाता है। विधानपरिषद या तो उसे पारित कर देती है या अपनी सिफारिशों के साथ विधानसभा को वापस लौटाती है। यदि विधेयक विधानसभा द्वारा विधानपरिषद की सिफारिशों सहित या उनके बिना पुनः पारित कर दिया जाता है तो यह दोनों सदनों द्वारा पारित समझा जाता है। वित्त विधेयक केवल विधानसभा में ही प्रस्तुत किये जा सकते हैं। विधानसभा द्वारा वित्त विधेयक को पारित कर दिये जाने पर वह विधानपरिषद के पास भेजा जाता है। विधानपरिषद को इसे पारित करके या फिर अपनी सिफारिशों के साथ इसकी प्राप्ति की तारीख से 14 दिन की अवधि के भीतर वापस विधानसभा को लौटाना होता है। यदि विधानसभा विधानपरिषद द्वारा की गई सिफारिशों को नहीं मानती है तब भी वह विधेयक दोनों सदनों द्वारा पारित समझा जाता है। राज्य विधायिका द्वारा पारित होने के पश्चात विधेयक राज्यपाल की स्वीकृति के लिए भेजा जाता है। धन विधेयक पर राज्यपाल को अपनी स्वीकृति देनी ही होती है। धन विधेयक के अतिरिक्त विधेयकों को राज्यपाल स्वीकृत कर सकता है या पुनर्विचार के लिए लौटा सकता है या राष्ट्रपति के विचारार्थ विधेयक को आरक्षित कर सकता है।

(ब) कार्यपालिका पर नियंत्रण-राज्य विधायिका कार्यपालिका पर नियंत्रण रखती है। मंत्रिपरिषद् सामूहिक रूप से विधानसभा के प्रति जिम्मेदार होती है। वह तभी तक बनी रहती है जब तक विधानसभा का विश्वास उसे प्राप्त रहता है। यदि विधानसभा में अविश्वास का प्रस्ताव पारित हो जाता है तो मंत्रिपरिषद हटा दी जाती है। इसके अलावा, विधायिका प्रश्नों और पूरक प्रश्नों, स्थगन प्रस्तावों तथा ध्यानाकर्षण सूचनाओं द्वारा सरकार पर नियंत्रण रखती है। लोकतन्त्र की कार्यप्रणाली

(स) निर्वाचन कार्य-विधान सभा के निर्वाचित सदस्य राष्ट्रपति के चुनाव के लिए बने निर्वाचक मण्डल के सदस्य होते हैं। विधानसभा के सदस्य संबंधित राज्य से चुने जाने वाले

राज्यसभा के सदस्यों का चुनाव भी करते हैं। इसके अलावा, अपने राज्य की विधान परिषद के 1/3 सदस्यों का चुनाव भी विधानसभा सदस्यों द्वारा किया जाता है।

(द) संविधान संशोधनों से संबंधित कार्य-संविधान संशोधनों से संबंधित कार्य राज्य विधायिका का महत्वपूर्ण कार्य है। कुछ संविधान संशोधनों के लिए संसद के दोनों सदनों के प्रत्येक सदन के विशेष बहुमत के साथ कम-से-कम आधे राज्यों के विधानसभाओं के अनुसमर्थन की आवश्यकता होती है।

प्रश्न 13. संसद की रचना पर विस्तृत टिप्पणी कीजिए।

अथवा
संसद के दोनों सदनों के बारे में विस्तार से समझाइये।

उत्तर-

संसद की रचना
संसद के दो सदन हैं- राज्यसभा तथा लोकसभा। राज्यसभा उपरी सदन है और लोकसभा निम्न सदन है। इसे लोकसभा के विभिन्न राज्यों का प्रतिनिधित्व करता है जबकि लोकसभा निम्न सदन है। इसे लोकसभा सदन भी कहा जाता है क्योंकि यह भारत की जनता का प्रतिनिधित्व करता है। राष्ट्रपति संसद का अभिन्न अंग होता है यद्यपि वह किसी भी सदन का सदस्य नहीं होता है। संसद का अभिन्न अंग होने के नाते राष्ट्रपति की कुछ विशेष शक्तियाँ तथा कार्य हैं जिन्हें आप पिछले पाठ में पढ़ चुके हैं। इस पाठ में आप संसद के दोनों सदनों का विस्तृत अध्ययन करेंगे।

राज्यसभा: सदस्यता तथा निर्वाचन

राज्यसभा अथवा संसद का उच्च सदन एक स्थायी संस्था है क्योंकि उसे भंग नहीं किया जा सकता। राज्य सभा की सदस्यता 250 से अधिक नहीं हो सकती। इनमें से 12 सदस्य राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत किए जाते हैं जो कला, साहित्य, विज्ञान, शिक्षा या समाज सेवा, आदि के क्षेत्र में ख्याति प्राप्त व्यक्ति होते हैं और बाकी सभी सदस्यों का निर्वाचन होता है। वर्तमान में यह संख्या 245 है।

राज्यसभा भारतीय संघ में राज्यों का प्रतिनिधित्व करने वाली संस्था है। राज्यसभा सदस्यों का निर्वाचन आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर एकल संक्रमणीय मत प्रणाली द्वारा राज्यों की विधान सभाओं के सभी निर्वाचित सदस्यों द्वारा किया जाता है। परंतु राज्यों के सदस्यों की संख्या समान नहीं होती। उनकी संख्या राज्यों की जनसंख्या के आधार पर निश्चित की जाती है। इस प्रकार बड़े राज्यों को अधिक तथा छोटे राज्यों को कम प्रतिनिधित्व प्राप्त होता है। जहाँ उत्तर प्रदेश जैसे बड़े राज्यों को 31 स्थान दिए गए हैं वहीं सिक्किम तथा त्रिपुरा जैसे छोटे राज्य केवल एक प्रतिनिधि भेज सकते हैं। दिल्ली की विधान सभा राज्यसभा के लिए तीन सदस्यों का निर्वाचन करती है जबकि पांडीचेरी की विधान सभा केवल एक सदस्य भेजती है। बाकी केन्द्र प्रशासित क्षेत्रों का राज्यसभा में कोई प्रतिनिधित्व नहीं होता।

योग्यताएं

राज्यसभा का सदस्य बनने के लिए योग्यताएं इस प्रकार हैं:

1. वह भारत का नागरिक होना चाहिए तथा उसकी आयु कम से कम 30 वर्ष होनी चाहिए।
2. उसे शपथ या प्रतिज्ञान लेना होता है कि वह भारत के संविधान के प्रति निष्ठा और विश्वास बनाए रखेगा।

3. इस प्रकार, जन प्रतिनिधि अधिनियम 1951 के अनुसार इसका पंजीकरण उस राज्य की मतदाता सूची में होना चाहिए जहां से वह निर्वाचन लड़ रहा है। परंतु 2003 में राज्य सभा के लिए निर्वाचन में दो प्रावधान जोड़े गए हैं-- (i) कोई भी भारतीय नागरिक, चाहे वह किसी भी राज्य का रहने वाला क्यों न हो, राज्यसभा के लिए चुनाव लड़ सकता है। (ii) चुनाव खुली मतदान व्यवस्था द्वारा सम्पन्न कराए जाते हैं।

कार्य अवधि

सरकार की राज्यसभा के सभी सदस्यों की अवधि छह वर्ष के लिए सुरक्षित होती है। इसके एक तिहाई सदस्य प्रत्येक दो वर्ष के पश्चात् सेवानिवृत्त हो जाते हैं। वे यदि चाहें तो पुनः चुनाव लड़ सकते हैं। परंतु यदि कोई सदस्य मध्यावधि चुनाव में निर्वाचित होता है तो वह केवल शेष बची अवधि के लिए ही राज्यसभा का सदस्य होगा। इस प्रकार की निर्वाचन प्रक्रिया राज्यसभा की निरंतरता सुनिश्चितता बनाए रखती है।

राज्यसभा के पदाधिकारी

भारत का उपराष्ट्रपति राज्यसभा का पदेन (अपने पद के कारण) सभापति होता है। वह राज्यसभा की बैठकों की अध्यक्षता करता है। उसकी अनुपस्थिति में, उपसभापति, जिस का निर्वाचन सदस्य अपने में से ही करते हैं बैठकों की अध्यक्षता करता है। उपसभापति को राज्यसभा के सदस्यों द्वारा बहुमत के अविश्वास मत द्वारा अपदस्थ किया जा सकता है। परंतु सभापति (उपराष्ट्रपति) को हटाने के लिए राज्यसभा में उस समय के सदस्यों द्वारा बहुमत से प्रस्ताव पारित करके तथा लोकसभा की सहमति से ही हटाया जा सकता है। उपराष्ट्रपति राज्यसभा का पदेन सभापति होता है। वह राज्यसभा का सदस्य नहीं होता। वह प्रायः मत देने का अधिकारी नहीं होता। केवल गतिरोध की स्थिति में मतदान कर सकता है।

लोकसभा की सदस्यता तथा निर्वाचन

राज्यसभा की तरह, लोकसभा एक स्थाई सदन नहीं है। इसका निर्वाचन प्रत्यक्ष रूप से जनता द्वारा सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार के आधार पर होता है। लोकसभा की अधिकतम सदस्य संख्या 550 हो सकती है जिसमें से 530 सीधे राज्यों से निर्वाचित होते हैं। जबकि शेष 20 सदस्य केन्द्र प्रशासित क्षेत्रों से निर्वाचित होते हैं। इसके अतिरिक्त दो आंग्ल भारतीय सदस्यों को राष्ट्रपति मनोनीत करता है यदि उसे लगता हो कि समाज के उस वर्ग को सदन में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं मिला है।

लोकसभा में कुछ सीटें अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए सुरक्षित रखी गई हैं। प्रारम्भ में संविधान लागू होने के समय, यह प्रावधान केवल 10 वर्ष के लिए रखा गया था जिसे बाद में विभिन्न संविधान संशोधनों द्वारा कई बार दस-दस वर्ष कर के बढ़ा दिया गया है। उन्नासवें संविधान संशोधन द्वारा इसे संविधान लागू होने से 60 वर्ष तक बढ़ा दिया गया है। अनुसूचित जाति/जनजातियों के लिए स्थानों के आरक्षण से यह अभिप्राय है कि इन स्थानों के लिए केवल अनुसूचित जाति अथवा जनजाति के लोग ही चुनाव लड़ सकते हैं। परंतु हमारे यहां संयुक्त निर्वाचक मण्डल है और आरक्षित क्षेत्रों के सभी मतदाता बिना किसी जाति अथवा जनजाति से जुड़े होने के आधार पर मतदान करते हैं। जाति अथवा जनजाति के आधार पर मतदाताओं में कोई विभाजन नहीं किया जाता है। लोकसभा में प्रतिनिधित्व का

आधार जनसंख्या है। इसलिए उत्तर प्रदेश जो कि भारत का सर्वाधिक जनसंख्या वाला प्रदेश बर्हें से 80 सदस्य चुने जाते हैं जबकि मिजोरम, नागालैंड तथा सिक्किम लोकसभा में केवल एक-एक सदस्य ही भेजते हैं। दिल्ली से सात सदस्य निर्वाचित होते हैं।

लोकसभा के चुनाव हेतु जनसंख्या के आधार पर राज्यों का विभाजन एक सदस्यीय क्षेत्रों में किया जाता है।

योग्यताएं

संसद द्वारा बनाए गए कानून के अनुसार, भारत के सभी नागरिक जिनकी आयु 18 वर्ष या उससे ऊपर है, लोकसभा के चुनाव में मतदान करने के अधिकारी हैं। भारत का कोई भी नागरिक लोकसभा का सदस्य बन सकता है यदि वह निम्नलिखित योग्यताएं पूरी करें:

1. उसकी आयु 25 वर्ष से कम नहीं होनी चाहिए।
2. उसे शपथ अथवा प्रतिज्ञान के माध्यम से यह घोषणा करनी होगी कि वह भारत के संविधान के प्रति सच्ची निष्ठा एवं विश्वास रखता है तथा वह भारत की संप्रभुता एवं अखण्डता को अक्षुण्ण बनाए रखेगा।
3. उसमें वे सभी योग्यताएं हैं जो समय-समय पर संसद द्वारा निर्धारित की जाएंगी।
4. सुरक्षित स्थान के लिए चुनाव लड़ने वाला व्यक्ति वांछित शतों के अनुसार अनुसूचित जाति अथवा अनुसूचित जनजाति से होना चाहिए।

कार्य अवधि

लोकसभा की सामान्य अवधि पांच वर्ष होती है। परंतु पांच वर्ष की अवधि पूरी होने से पूर्व भी राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद की सलाह पर इसे भंग कर सकता है। राष्ट्रीय आपातकाल की स्थिति में इसकी अवधि एक बार में एक वर्ष कर के बढ़ाई भी जा सकती है। परंतु आपातकाल समाप्त होने के पश्चात यह अवधि ह मास से अधिक नहीं हो सकती। कई बार लोकसभा को उसकी अवधि पूरी होने से पहले भंग कर दिया जाता है जैसे 1998 में निर्वाचित बारहवीं लोकसभा 1999 में भंग कर दी गई थी।

लोकसभा के पदाधिकारी

अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष: लोकसभा के सभापति को अध्यक्ष कहा जाता है। उसे सदन के सदस्य निर्वाचित करते हैं। यदि लोकसभा भंग कर दी जाए, तो भी वह तब तक अध्यक्ष बना रहता है जब तक कि अगला सदन उसके स्थान पर नया अध्यक्ष नहीं चुन लेता। उसकी अनुपस्थिति में, उपाध्यक्ष जिसका निर्वाचन भी सदन ही करता है, बैठकों की अध्यक्षता करता है। अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष दोनों को, लोक सभा में उस समय के सदस्यों के बहुमत द्वारा पारित प्रस्ताव से अपदस्थ किया जा सकता है। लोकसभा अध्यक्ष की कुछ शक्तियां तथा कार्य नीचे दिए जा रहे हैं:

1. अध्यक्ष का मुख्य कार्य सदन की बैठकों की अध्यक्षता करना तथा उन्हें अनुशासित ढंग से चलाना है। उसकी आज्ञा के बिना कोई सदस्य सदन में बोल नहीं सकता। वह किसी भी सदस्य को अपना भाषण समाप्त करने के लिए कह सकता है और यदि सदस्य ऐसा न करे तो वह आदेश दे सकता है कि उसके भाषण का अभिलेखन न किया जाए।
2. सभी विधेयक, रिपोर्ट तथा प्रस्ताव अध्यक्ष की अनुमति से ही प्रस्तावित किए जाते हैं। वह विधेयक या प्रस्ताव पर मतदान करवाता है। वह स्वयं मतदान में भाग नहीं लेता।

परंतु जब भी गतिरोध की स्थिति पैदा हो जाती है अर्थात् पक्ष तथा विपक्ष दोनों ओर के मत समान हो जाते हैं तो वह अपना निर्णायक मत डाल सकता है। परंतु उससे यह आशा की जाती है कि मतदान करते समय उसकी निष्पक्षता तथा स्वतंत्रता बनी रहे।

3. सभी संसदीय मामलों में उसका निर्णय अंतिम होता है। वह संसदीय प्रक्रिया के उल्लंघन संबंधी उठाए गए प्रश्नों पर भी अपना निर्णय देता है जो अंतिम होता है।
4. वह सदस्यों के अधिकारों तथा विशेषाधिकारों की रक्षा करता है।
5. यदि कोई सदस्य दल बदल लेता है, तो वह उसकी सदस्यता रद्द कर सकता है। वह सदस्यों के त्यागपत्र भी स्वीकार करता है।
6. जब भी लोकसभा तथा राज्यसभा का संयुक्त अधिवेशन होता है, वह उसकी अध्यक्षता करता है।

प्रश्न 14. संसद के विभिन्न कार्य कौन-से हैं? वर्णन कीजिए।

उत्तर- संसद के कार्य एवं शक्तियों को विधायी कार्यपालिका संबंधी, वित्तीय तथा

अन्य श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

विधायी कार्य

मूलतया संसद कानून बनाने वाली संस्था है। पहले के एक पाठ में आपने पढ़ा है कि केन्द्र और राज्यों में शक्ति-विभाजन किया गया है जिसके लिए तीन सूचियां हैं- संघ सूची, राज्य सूची, तथा समवर्ती सूची। संघ सूची में वर्णित विषयों पर कानून बनाने का अधिकार केवल संसद को है। आप जानते हैं कि संघ सूची में 97 विषय हैं। राज्य विधायिकाओं के साथ-साथ, संसद भी समवर्ती सूची के विषयों पर कानून बना सकती है। यदि समवर्ती सूची के किसी विषय पर संसद तथा राज्य दोनों कानून बनाते हैं और दोनों द्वारा बनाए कानून में अंतर्विरोध है, तो केन्द्र द्वारा बनाए गए कानून को मान्यता दी जाएगी। ऐसा कोई विषय जिसका उल्लेख किसी भी सूची में नहीं किया गया तो ऐसी अविशिष्ट शक्तियां संसद के पास हैं।

इस प्रकार संसद की कानून निर्माण संबंधी शक्तियां बहुत विस्तृत हैं। इसके अंतर्गत संघ सूची, समवर्ती सूची तथा कुछ परिस्थितियों में राज्य सूची में वर्णित विषय भी आ जाते हैं।

कार्यपालिका संबंधी कार्य

संसदीय शासन प्रणाली में विधायिका तथा कार्यपालिका में घनिष्ठ संबंध होता है। अपने सभी कार्यों के लिए कार्यपालिका विधायिका के प्रति उत्तरदायी होती है। प्रधानमंत्री सहित मंत्रिपरिषद व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप से संसद के प्रति उत्तरदायी होती है। संसद अविश्वास प्रस्ताव को स्वीकार कर मंत्रिपरिषद को पदच्युत कर सकती है। भारत में ऐसा कई बार हुआ है। ऐसा 1999 में हुआ जब अटल बिहारी वाजपेयी की सरकार केवल एक मत से लोक सभा में विश्वास मत प्राप्त करने में असफल रही और उसने त्यागपत्र दे दिया। अतः अविश्वास मत या विश्वास मत संसद द्वारा कार्यपालिका पर नियंत्रण बनाए रखने के लिए सर्वाधिक कठोर तरीका है। इसका प्रयोग केवल विशेष परिस्थितियों में ही किया जाता है। नित्य प्रति के कार्यों में भी संसद कार्यपालिका के प्रति उत्तरदायी होती है।

आधार जनसंख्या है। इसलिए उत्तर प्रदेश जो कि भारत का सर्वाधिक जनसंख्या वाला प्रदेश बर्लिन से 80 सदस्य चुने जाते हैं जबकि मिजोरम, नागालैंड तथा सिक्किम लोकसभा में केवल एक-एक सदस्य ही भेजते हैं। दिल्ली से सात सदस्य निर्वाचित होते हैं। लोकसभा के चुनाव हेतु जनसंख्या के आधार पर राज्यों का विभाजन एक सदस्यीय क्षेत्रों में किया जाता है।

योग्यताएं

संसद द्वारा बनाए गए कानून के अनुसार, भारत के सभी नागरिक जिनकी आयु 18 वर्ष या उससे ऊपर है, लोकसभा के चुनाव में मतदान करने के अधिकारी हैं। भारत का कोई भी नागरिक लोकसभा का सदस्य बन सकता है यदि वह निम्नलिखित योग्यताएं पूरी करें:

1. उसकी आयु 25 वर्ष से कम नहीं होनी चाहिए।
2. उसे शपथ अथवा प्रतिज्ञान के माध्यम से यह घोषणा करनी होगी कि वह भारत के संविधान के प्रति सच्ची निष्ठा एवं विश्वास रखता है तथा वह भारत की संप्रभुता एवं अखण्डता को अक्षुण्ण बनाए रखेगा।
3. उसमें वे सभी योग्यताएं हैं जो समय-समय पर संसद द्वारा निर्धारित की जाएगी।
4. सुरक्षित स्थान के लिए चुनाव लड़ने वाला व्यक्ति वांछित शतों के अनुसार अनुसूचित जाति अथवा अनुसूचित जनजाति से होना चाहिए।

कार्य अवधि

लोकसभा की सामान्य अवधि पांच वर्ष होती है। परंतु पांच वर्ष की अवधि पूरी होने से पूर्व भी राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् की सलाह पर इसे भंग कर सकता है। राष्ट्रीय आपातकाल की स्थिति में इसकी अवधि एक बार में एक वर्ष कर के बढ़ाई भी जा सकती है। परंतु आपातकाल समाप्त होने के पश्चात यह अवधि ह मास से अधिक नहीं हो सकती। कई बार लोकसभा को उसकी अवधि पूरी होने से पहले भंग कर दिया जाता है जैसे 1998 में निर्वाचित बारहवीं लोकसभा 1999 में भंग कर दी गई थी।

लोकसभा के पदाधिकारी

अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष: लोकसभा के सभापति को अध्यक्ष कहा जाता है। उसे सदन के सदस्य निर्वाचित करते हैं। यदि लोकसभा भंग कर दी जाए, तो भी वह तब तक अध्यक्ष बना रहता है जब तक कि अगला सदन उसके स्थान पर नया अध्यक्ष नहीं चुन लेता। उसकी अनुपस्थिति में, उपाध्यक्ष जिसका निर्वाचन भी सदन ही करता है, बैठकों की अध्यक्षता करता है। अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष दोनों को, लोक सभा में उस समय के सदस्यों के बहुमत द्वारा पारित प्रस्ताव से अपदस्थ किया जा सकता है। लोकसभा अध्यक्ष की कुछ शक्तियां तथा कार्य नीचे दिए जा रहे हैं:

1. अध्यक्ष का मुख्य कार्य सदन की बैठकों की अध्यक्षता करना तथा उन्हें अनुशासित ढंग से चलाना है। उसकी आज्ञा के बिना कोई सदस्य सदन में बोल नहीं सकता। वह किसी भी सदस्य को अपना भाषण समाप्त करने के लिए कह सकता है और यदि सदस्य ऐसा न करे तो वह आदेश दे सकता है कि उसके भाषण का अभिलेखन न किया जाए।
2. सभी विधेयक, रिपोर्ट तथा प्रस्ताव अध्यक्ष की अनुमति से ही प्रस्तावित किए जाते हैं। वह विधेयक या प्रस्ताव पर मतदान करवाता है। वह स्वयं मतदान में भाग नहीं लेता।

परंतु जब भी गतिरोध की स्थिति पैदा हो जाती है अर्थात् पक्ष तथा विपक्ष दोनों ओर के मत समान हो जाते हैं तो वह अपना निर्णायक मत डाल सकता है। परंतु उससे यह आशा की जाती है कि मतदान करते समय उसकी निष्पक्षता तथा स्वतंत्रता बनी रहे।

3. सभी संसदीय मामलों में उसका निर्णय अंतिम होता है। वह संसदीय प्रक्रिया के उत्प्लानन संबंधी उठाए गए प्रश्नों पर भी अपना निर्णय देता है जो अंतिम होता है।
4. वह सदस्यों के अधिकारों तथा विशेषाधिकारों की रक्षा करता है।
5. यदि कोई सदस्य दल बदल लेता है, तो वह उसकी सदस्यता रद्द कर सकता है। वह सदस्यों के त्यागपत्र भी स्वीकार करता है।
6. जब भी लोकसभा तथा राज्यसभा का संयुक्त अधिवेशन होता है, वह उसकी अध्यक्षता करता है।

प्रश्न 14. संसद के विभिन्न कार्य कौन-से हैं? वर्णन कीजिए।

उत्तर—
संसद के कार्य
भारतीय संसद के कार्य एवं शक्तियों को विधायी कार्यपालिका संबंधी, वित्तीय तथा अन्य श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

विधायी कार्य

मूलतया संसद कानून बनाने वाली संस्था है। पहले के एक पाठ में आपने पढ़ा है कि केंद्र और राज्यों में शक्ति-विभाजन किया गया है जिसके लिए तीन सूचियां हैं- संघ सूची, राज्य सूची, तथा समवर्ती सूची। संघ सूची में वर्णित विषयों पर कानून बनाने का अधिकार केवल संसद को है। आप जानते हैं कि संघ सूची में 97 विषय हैं। राज्य विधायिकाओं के साथ-साथ, संसद भी समवर्ती सूची के विषयों पर कानून बना सकती है। यदि समवर्ती सूची के किसी विषय पर संसद तथा राज्य दोनों कानून बनाते हैं और दोनों द्वारा बनाए कानून में अंतर्विरोध है, तो केन्द्र द्वारा बनाए गए कानून को मान्यता दी जाएगी। ऐसा कोई विषय जिसका उल्लेख किसी भी सूची में नहीं किया गया तो ऐसी अविशिष्ट शक्तियां संसद के पास हैं।

इस प्रकार संसद की कानून निर्माण संबंधी शक्तियां बहुत विस्तृत हैं। इसके अंतर्गत संघ सूची, समवर्ती सूची तथा कुछ परिस्थितियों में राज्य सूची में वर्णित विषय भी आ जाते हैं।

कार्यपालिका संबंधी कार्य

संसदीय शासन प्रणाली में विधायिका तथा कार्यपालिका में घनिष्ठ संबंध होता है। अपने सभी कार्यों के लिए कार्यपालिका विधायिका के प्रति उत्तरदायी होती है। प्रधानमंत्री सहित मंत्रिपरिषद् व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप से संसद के प्रति उत्तरदायी होती है। संसद अविश्वास प्रस्ताव को स्वीकार कर मंत्रिपरिषद् को पदच्युत कर सकती है। भारत में ऐसा कई बार हुआ है। ऐसा 1999 में हुआ जब अटल बिहारी वाजपेयी की सरकार केवल एक मत से लोक सभा में विश्वास मत प्राप्त करने में असफल रही और उसने त्यागपत्र दे दिया। अतः अविश्वास मत या विश्वास मत संसद द्वारा कार्यपालिका पर नियंत्रण बनाए रखने के लिए सर्वाधिक कठोर तरीका है। इसका प्रयोग केवल विशेष परिस्थितियों में ही किया जाता है। नित्य प्रति के कार्यों में भी संसद कई प्रकार से कार्यपालिका पर अपना नियंत्रण बनाए रखती है। उनमें से कुछ इस प्रकार हैं:

(क) केन्द्रीय सरकार से संबंधित मामलों में किसी भी विषय के बारे में, सांसद प्रश्न अथवा पूरक प्रश्न पूछ सकते हैं। संसद के प्रत्येक कार्य दिवस का पहला घंटा प्रश्नकाल का होता है जिसमें मंत्रियों को सांसदों द्वारा पूछे गए प्रश्नों के उत्तर देने होते हैं।

(ख) यदि सदस्य सरकार द्वारा दिए गए उत्तरों से संतुष्ट नहीं होते, तो वे उस विषय पर अलग से चर्चा करने की मांग कर सकते हैं।

(ग) संसद कई प्रस्तावों के माध्यम से भी कार्यकारिणी पर नियंत्रण बनाए रखती है। उदाहरण के लिए, ध्यानकर्षण प्रस्ताव या स्थगन प्रस्ताव कुछ ऐसे साधन हैं जिनके द्वारा लोक महत्व के तत्कालीन अत्यावश्यक मामले उठाये जाते हैं। सरकार इन प्रस्तावों को बड़ी गम्भीरता से लेती है क्योंकि इसमें सरकारी नीतियों की कड़ी आलोचना की जाती है जिसका प्रभाव जनता पर पड़ता है। संसद के समक्ष आखिरी तो सरकार को जाना पड़ता है और यदि इस प्रकार का कोई प्रस्ताव पारित हो जाता है तो सरकार निंदित मानी जाती है।

(घ) बजट अथवा धन विधेयक, यहां तक कि किसी साधारण विधेयक को भी अस्वीकार करके लोक सभा मंत्रिपरिषद में अपना अविश्वास प्रकट कर सकती है।

वित्तीय कार्य

संसद महत्वपूर्ण वित्तीय कार्य करती है। इसे सरकारी धन का संरक्षक माना जाता है। यह केन्द्रीय सरकार की सम्पूर्ण आय पर नियंत्रण बनाए रखती है। बिना संसद की आज्ञा के कोई धन राशि व्यय नहीं की जा सकती। यह स्वीकृति वास्तविक व्यय से पूर्व या फिर किसी असाधारण स्थिति में व्यय के पश्चात ली जा सकती है। संसद हर वर्ष सरकार के आय-व्यय अर्थात् बजट को स्वीकृति प्रदान करती है।

निर्वाचन संबंधी कार्य

संसद के सभी निर्वाचित सदस्य राष्ट्रपति के चुनाव हेतु निर्वाचक मंडल के सदस्य होते हैं। इसलिए राष्ट्रपति के निर्वाचन में वे भाग लेते हैं। वे उपराष्ट्रपति का भी चुनाव करते हैं। लोकसभा अपने अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष का तथा राज्यसभा अपने उपसभापति का निर्वाचन करती है।

अपदस्थ करने की शक्ति

संसद की पहल पर कई महत्वपूर्ण उच्चस्तरीय अधिकारियों को उनके पद से हटाया जा सकता है। भारत के राष्ट्रपति को महाभियोग की प्रक्रिया से अपदस्थ किया जा सकता है जिसके बारे में आप पाठ 10 में पढ़ चुके हैं। यदि संसद के दोनों सदन विशेष बहुमत से प्रस्ताव पारित करें तो सर्वोच्च न्यायालय अथवा उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को राष्ट्रपति द्वारा पदच्युत किया जा सकता है।

संविधान संशोधन संबंधी कार्य

संविधान के अधिकांश भागों में संशोधन विशेष बहुमत द्वारा किया जा सकता है। परंतु कुछ प्रावधान ऐसे हैं जिनमें संसद द्वारा संशोधन के लिए राज्यों का समर्थन भी आवश्यक है। तथापि भारत के एक संघ राज्य होने के नाते संसद की संशोधन संबंधी शक्तियां अत्यंत सीमित रखी गई हैं। सर्वोच्च न्यायालय ने अपने एक निर्णय में यह कहा है कि संसद संविधान का मूल ढांचा नहीं बदल सकती। आप एक अन्य पाठ में संविधान संशोधन संबंधी प्रक्रिया को पहले ही पढ़ चुके हैं।

विविध कार्य

उपरोक्त कार्यों के अतिरिक्त संसद कई अन्य कार्य भी करती है जो इस प्रकार हैं:

(क) यद्यपि आपातकाल की घोषणा करने की शक्ति राष्ट्रपति की है, तथापि आपातकाल की सभी ऐसी घोषणाओं को स्वीकृति संसद ही प्रदान करती है। लोकसभा तथा राज्यसभा दोनों की स्वीकृति आवश्यक है।

(ख) किसी राज्य से कुछ क्षेत्र अलग करके दो या दो से अधिक राज्यों को मिलाकर संसद किसी नए राज्य का निर्माण कर सकती है। यह किसी राज्य की सीमाएं अथवा नाम में भी परिवर्तन कर सकती है। कुछ वर्ष पूर्व (2002) में छत्तीसगढ़, झारखण्ड तथा उत्तरांचल (अब उत्तराखंड) नए राज्य बनाए गये।

(ग) संसद किसी नए राज्य का विलय भारतीय संघ में कर सकती है जैसे 1975 में सिक्किम को भारत में विलय किया गया।

(घ) संसद राज्य विधान परिषद को समाप्त कर सकती है अथवा इसका निर्माण भी कर सकती है। परंतु यह केवल संबंधित राज्य के अनुरोध पर ही किया जाता है।

हमारी राजनीतिक व्यवस्था की संघात्मक प्रकृति के कारण यद्यपि संसद की शक्तियां सीमित हैं, तथापि इसे अनेक कार्य करने होते हैं। अपना दायित्व निभाते समय इसे जनता की आकांक्षाओं तथा आवश्यकताओं का पूरा ध्यान रखना पड़ता है। देश में सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक संघर्षों को हल करने का माध्यम संसद है। विदेश नीति निर्माण जैसे राष्ट्रीय महत्व के विषयों पर जनमत निर्माण करने में भी यह सहायता प्रदान करती है।

प्रश्न 15. संसद में कानून बनाने की प्रक्रिया का विस्तृत वर्णन कीजिए।

उत्तर— संसद में कानून बनाने की प्रक्रिया

जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है कि संसद मुख्यतया कानून बनाने वाली संस्था है। कोई भी प्रस्तावित कानून, संसद में एक विधेयक के रूप में प्रतिस्थापित किया जाता है। संसद में पारित होने तथा राष्ट्रपति की स्वीकृति के पश्चात यह कानून बन जाता है। अब आप यह अध्ययन करेंगे कि संसद किस प्रकार कानून बनाती है। संसद के समक्ष आने वाले विधेयक दो प्रकार के होते हैं। (अ) साधारण विधेयक (ब) धन अथवा वित्त विधेयक। अब हम इन दोनों प्रकार के विधेयकों को कानून बनाने की प्रक्रिया का वर्णन करेंगे।

साधारण विधेयक

संसद के प्रत्येक सदस्य को साधारण विधेयक प्रस्तावित करने का अधिकार है। इस दृष्टिकोण के आधार पर विधेयक दो प्रकार के होते हैं—सरकारी विधेयक और गैर-सरकारी विधेयक। मंत्री सरकारी विधेयक प्रस्तावित करते हैं और जो विधेयक किसी मंत्री द्वारा पेश नहीं किया जाता है वह गैर-सरकारी विधेयक होता है जिसका अर्थ यह है कि ऐसा विधेयक किसी सांसद द्वारा प्रस्तावित किया गया है न कि किसी मंत्री द्वारा। संसद का अधिकतर समय सरकारी विधेयकों को निपटाने में लग जाता है। विधेयक को कई अवस्थाओं से गुजरना पड़ता है।

(क) प्रथम वाचन विधेयक की प्रतिस्थापना के साथ-साथ, विधेयक का प्रथम वाचन प्रारम्भ हो जाता है। यह अवस्था बड़ी सरल होती है। जिस मंत्री को विधेयक प्रस्तावित करना होता है, वह अध्यक्ष को सूचित करता है। अध्यक्ष यह प्रश्न सदन के समक्ष रखता है। जब

स्वीकृति प्राप्त हो जाती है जो सामान्यतया ध्वनि मत से हो जाती है, तो संबंधित मंत्री को विधेयक को प्रतिस्थापित करने के लिए बुलाया जाता है।

(ख) द्वितीय वाचन: यह सबसे महत्वपूर्ण अवस्था है। सामान्य चर्चा के पश्चात् सदन के वास वार विकल्प होते हैं: (i) सदन स्वयं विधेयक पर विस्तृत धारावार चर्चा करे (ii) विधेयक सदन को प्रवर समिति को भेज दे (iii) दोनों सदनों की संयुक्त समिति को भेज दे (iv) जनमत जानने के लिए जनता में वितरित करे। यदि विधेयक प्रवर समिति अथवा संयुक्त प्रवर समिति को सौंपा जाता है, तो संबंधित समिति विधेयक का विस्तृत निरीक्षण करती है। प्रत्येक धारा का निरीक्षण किया जाता है। समिति चाहे तो वह विषय विशेषज्ञों तथा विधिवेत्ताओं से भी उनकी राय ले सकती है। पूरे विचार विमर्श के पश्चात् समिति अपनी रिपोर्ट सदन को भेज देती है।

(ग) तृतीय वाचन: द्वितीय वाचन पूरा हो जाने के पश्चात्, मंत्री विधेयक को पारित करने के लिए सदन से अनुरोध करता है। इस अवस्था में प्रायः कोई चर्चा नहीं की जाती। सदस्य केवल विधेयक विरोध या पारित करने के लिए विधेयक का समर्थन अथवा उसका विरोध कर सकते हैं। इसके लिए उपस्थित तथा मतदान करने वाले सदस्यों का साधारण बहुमत आवश्यक है।

2. द्वितीय सदन में विधेयक: किसी एक सदन से विधेयक पारित हो जाने के पश्चात् उसे दूसरे सदन में भेज दिया जाता है। यहां पर भी वही तीन वाचनों वाली प्रक्रिया अपनाई जाती है जिस का परिणाम इस प्रकार हो सकता है:-

(क) विधेयक पारित कर दिया जाए और फिर उसे राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भेज दिया जाता है।

(ख) विधेयक में कुछ संशोधन करके उसे पारित किया जाए। विधेयक पहले पारित करने वाले सदन को भी वापस भेज दिया जाता है। इस दशा में पहला सदन संशोधनों पर विचार करेगा और यदि उन्हें स्वीकार कर लेता है तो विधेयक राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भेज दिया जाता है। यदि पहला सदन संशोधनों को मानने से मना कर दे, तब इसे गतिरोध माना जाता है।

(ग) दूसरा सदन विधेयक को अस्वीकार कर सकता है जिसका अर्थ गतिरोध है। दोनों सदनों में इस गतिरोध को समाप्त करने के लिए राष्ट्रपति दोनों सदनों का संयुक्त अधिवेशन बुलाता है। ऐसे संयुक्त अधिवेशन बहुत कम होते हैं और ऐसा केवल अभी तक तीन बार ही हुआ है जो दहेज विरोधी अधि नियम 1959, बैंक सेवा आयोग (निरस्तीकरण) अधिनियम 1978 तथा आतंकवाद रोकने के लिए। 2002 के अधिनियम को पारित करते समय बुलाया गया था।

(घ) विधेयक पर राष्ट्रपति द्वारा स्वीकृति: दोनों सदनों अथवा दोनों सदनों की संयुक्त बैठक से विधेयक पारित होने के पश्चात् इसे राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भेज दिया जाता है। राष्ट्रपति के पास भी कुछ विकल्प होते हैं। (अ) वह अपनी स्वीकृति प्रदान करे जिसके साथ ही विधेयक कानून बन जाता है। (ब) राष्ट्रपति स्वीकृति देने से पूर्व परिवर्तन हेतु कुछ सुझाव दे। इस दशा में विधेयक इसी सदन को वापस भेजा जाता है जहां वह प्रारम्भ हुआ था। परंतु यदि दोनों सदन राष्ट्रपति के सुझाव मान लें या न मानें और विधेयक पुनः

पारित करके राष्ट्रपति को भेज दे तो राष्ट्रपति के पास स्वीकृति प्रदान करने के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं।

धन विधेयक / वित्त विधेयक

वे विधेयक जिनका संबंध वित्त या धन से होता है जैसे टैक्स लगाना, सरकारी व्यय करना, ऋण प्राप्त करना, आदि, धन विधेयक कहलाते हैं। यदि यह निर्णय न हो पाए कि कोई विधेयक धन विधेयक है। या नहीं, तो अध्यक्ष का निर्णय अंतिम होता है। साधारण विधेयक की तरह, धन विधेयक को पारित करने के लिए भी उन्हीं तीन अवस्थाओं से गुजरना पड़ता है। परंतु इसमें कुछ अन्य शर्तें जुड़ी हैं। वे हैं (i) धन विधेयक केवल लोकसभा से (ii) लोकसभा से पारित होने के पश्चात् इसे राज्यसभा को भेजा जाता है। राज्यसभा के पास इस पर विचार करने तथा पारित करने के लिए केवल 14 दिन का समय होता है। (iii) राज्यसभा धन विधेयक को अस्वीकार नहीं कर सकती है। इसे या तो विधेयक पारित करना होता या फिर कुछ सुझाव देने होते हैं। (iv) यदि राज्यसभा कुछ सुझाव देती है तो विधेयक लोकसभा के पास वापस आ जाता है। लोकसभा इन सुझावों को मान भी सकती है और नहीं भी। किसी परिस्थिति में, विधेयक राज्यसभा में वापस नहीं भेजा जाएगा बल्कि इसे सीधा राष्ट्रपति के पास उसकी स्वीकृति के लिए भेज दिया जाएगा। (v) यदि राज्यसभा 14 दिन तक विधेयक को वापस नहीं भेजती तो यह माना जाता है कि विधेयक दोनों सदनों द्वारा पारित हो गया है। इसलिए इसे राष्ट्रपति को हस्ताक्षरों के लिए भेज दिया जाता है।

धन विधेयक वे विधेयक होते हैं जिन का संबंध वित्तीय मामलों से होता है जैसे

सरकार द्वारा कर लगाना, कर हटाना, किसी कर में परिवर्तन करना अथवा ऋण लेने को नियंत्रित करना अथवा भारत सरकार द्वारा किए गए किसी वित्तीय इकरार संबंधी कानून में संशोधन करना या संचित निधि अथवा आकस्मिक निधि से संबंधित मामला।

बजट

सार्वजनिक धन से होने वाले आय तथा व्यय का वार्षिक वित्तीय ब्योरा बजट कहलाता है। यह विधेयक नहीं होता है। प्रति वर्ष वार्षिक बजट वित्त मंत्री द्वारा लोकसभा में प्रस्तुत किया जाता है। बजट तैयार करना एक बहुत बड़ा कार्य है। बजट को वित्त मंत्री अपने मंत्रालय की सहायता से बनाता है, परंतु इसमें पूरी सरकार सम्मिलित होती है। भारत में बजट दो भागों में प्रस्तावित किया जाता है- रेल बजट तथा सामान्य बजट।

(i) बजट प्रस्तुत करना:- सामान्यतया रेल बजट रेलमंत्री द्वारा फरवरी के तीसरे सप्ताह में प्रस्तुत किया जाता है जबकि साधारण बजट प्रायः फरवरी के अंतिम कार्य दिवस पर प्रस्तुत किया जाता है। साधारण बजट प्रस्तुत करते समय वित्त मंत्री द्वारा भाषण दिया जाता है जिसके पश्चात् वह धन विधेयक प्रस्तावित करता है जिसमें सरकार द्वारा कर लगाने के सभी प्रस्ताव शामिल होते हैं। बजट की प्रस्तुति वाले दिन इस पर कोई चर्चा नहीं होती इसलिए प्रस्तावित होने के फौरन बाद सदन की बैठक समाप्त हो जाती है। वर्ष 1993-94 से भारत में विभागीय प्रवर समितियों की एक नयी व्यवस्था शुरू की गई है। संघ सरकार के सभी मंत्रालयों तथा विभागों की समितियों का गठन लोकसभा द्वारा किया जाता है। ये प्रवर समितियां अनुदान की मांगों पर विचार करने के पश्चात् अपनी-अपनी रिपोर्टों को

लोकसभा को भेज देती हैं। बजट पर सामान्य चर्चा के पश्चात दोनों सदन लगभग तीन सप्ताह के लिए स्थगित कर दिए जाते हैं। इस काल में मंत्रालयों की विभागीय समितियाँ बजट की मांगों की जांच पड़ताल करती हैं और अपनी सिफारिशों को भी तैयार करती हैं। इससे पूरे सदन का समय बचता है। अतः पूरी लोकसभा अनुदान मांगों पर एक-एक करके चर्चा नहीं करती। सदन की बैठक के लिए न्यूनतम सदस्यों की उपस्थिति की अनिवार्यता गणपूर्ति कहलाती है। यह सदन की कुल सदस्य संख्या का दसवां भाग होता है। इसका अर्थ यह है कि लोकसभा या राज्यसभा की बैठक केवल तभी हो सकती है जब कम से कम सदन की कुल सदस्य संख्या के 1/10 सदस्य उपस्थित हों।

प्रश्न 16. राज्य विधान मण्डल के कार्य एवं शक्तियाँ का उल्लेख कीजिए।

उत्तर- राज्य विधान मण्डल के कार्य एवं शक्तियाँ

कानून बनाने संबंधी कार्य

संसद की तरह, राज्य विधान मण्डल का कार्य भी कानून बनाना है। इसको राज्य सूची तथा समवर्ती सूची में वर्णित किसी भी विषय पर कानून बनाने का अधिकार है। संसद तथा राज्य विधायिका दोनों को समवर्ती सूची के किसी भी विषय पर कानून बनाने का अधिकार प्राप्त है। परंतु यदि एक ही विषय पर संसद द्वारा बनाए गए कानून और विधान मण्डल द्वारा बनाए गए कानून में विरोध हो, तो संसद द्वारा बनाया गया कानून माना जाएगा। विधेयक दो प्रकार के होते हैं। साधारण विधेयक तथा धन विधेयक। साधारण विधेयक दोनों में से किसी भी सदन में प्रस्तावित किया जा सकता है। परंतु धन विधेयक पहले विधान सभा में हो प्रस्तावित किया जा सकता है। दोनों सदनों से विधेयक पारित होने के पश्चात राज्यपाल के पास उसे स्वीकृति के लिए भेज दिया जाता है। राज्यपाल चाहे तो विधायक पुनर्विचार के लिए वापिस भेज सकता है यदि विधान मण्डल इसे पुनः पारित कर दे तो राज्यपाल को स्वीकृति प्रदान करनी पड़ती है। आप परतु पढ़ चुके हैं कि यदि संसद का अधिवेशन न चल रहा हो और किसी कानून की नितांत आवश्यकता हो तो राष्ट्रपति अध्यादेश जारी कर सकता है। इसी प्रकार विधानमण्डल के सत्र के न होने की स्थिति में राज्यपाल भी किसी राज्य विषय के लिए अध्यादेश जारी कर सकता है। अध्यादेश में कानून का बल होता है। जारी किए गए अध्यादेश को विधानमण्डल की बुलाई गयी बैठक में रखा जाता है। यह बैठक बुलाए जाने के छह सप्ताह बाद निष्प्रभावी हो जाती है यदि विधान मण्डल इसको इससे पूर्व अस्वीकार न कर दे।

वित्तीय शक्तियाँ

विधान मण्डल राज्य के वित्त पर नियंत्रण बनाए रखता है। कोई भी धन विधेयक पहले विधान सभा में प्रस्तावित किया जाता है। धन विधेयकों में सरकार द्वारा व्यय किए जाने वाले धन की स्वीकृति, करों को लगाने अथवा हटाए जाने संबंधी प्रस्ताव, तथा ऋण संबंधी प्रस्ताव आते हैं। ऐसे विधेयक मंत्री द्वारा राज्यपाल की पूर्व अनुमति से प्रस्तावित किए जाते हैं। धन विधेयक किसी सदस्य द्वारा निजी रूप में प्रस्तावित नहीं किया जा सकता है। कोई विधेयक धन विधेयक है अथवा नहीं, यह निर्णय विधान सभा का अध्यक्ष देता है।

विधान सभा द्वारा धन विधेयक पारित होने के पश्चात विधान परिषद में भेज दिया जाता है जिसे 14 दिन के अंदर पारित करके या बिना पारित किए विधेयक वापस भेजना

होता है। इस स्थिति में धन विधेयक दोनों सदनों द्वारा पारित माना जाता है। अब विधेयक को राज्यपाल के पास उसकी स्वीकृति के लिए भेज दिया जाता है। राज्यपाल स्वीकृति देने से मना नहीं कर सकता क्योंकि विधेयक प्रस्तावित करने से पूर्व उसकी अनुमति ले ली गई है।

कार्यपालिका पर नियंत्रण

संघ सरकार की तरह, राज्य विधायिका भी कार्यपालिका पर नियंत्रण रखती है। राज्य की मंत्रिपरिषद सामूहिक रूप से विधान सभा के प्रति उत्तरदायी होती है और जब तक उसे विधान सभा के बहुमत का समर्थन प्राप्त होता है मंत्रिपरिषद अपने पद पर बनी रहती है। इसे केवल तभी अपदस्थ किया जा सकता है जब विधान सभा इसके विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित करे अथवा किसी सरकारी विधेयक को रद्द करे। अविश्वास प्रस्ताव के अतिरिक्त प्रश्न तथा पूरक प्रश्न पूछकर, काम रोकने का प्रस्ताव द्वारा अथवा ध्यानाकर्षण प्रस्ताव द्वारा विधायिका कार्यपालिका पर नियंत्रण बनाए रखती है।

चुनाव संबंधी कार्य

विधान सभा के सभी निर्वाचित सदस्य राष्ट्रपति का निर्वाचन करने के लिए निर्वाचक मंडल के सदस्य होते हैं। इस प्रकार वे भारतीय गणतंत्र के राष्ट्रपति के चुनाव में अपनी हिस्सेदारी निभाते हैं। (पाठ संख्या 10 देखिए)। विधान सभा के सदस्य अपने-अपने राज्यों से राज्य सभा के लिए सांसदों का भी निर्वाचन करते हैं। जिन राज्यों में विधान परिषद है, वहाँ इसके एक तिहाई सदस्यों का निर्वाचन भी विधान सभा के सदस्य ही करते हैं। इन सभी निर्वाचनों में विधानसभा के सदस्य एकल संक्रमणीय मत प्रणाली के आधार पर मतदान करते हैं।

संवैधानिक कार्य

आप भारतीय संविधान में संशोधन संबंधी प्रक्रिया के बारे में पढ़ चुके हैं। संघीय विषयों में संशोधन के लिए संसद के दोनों सदनों में विशेष बहुमत तथा आधे से अधिक राज्यों का अभिसमर्थन होना चाहिए। अभिसमर्थन का प्रस्ताव राज्य विधान मण्डल द्वारा साधारण बहुमत से पारित किया जाता है। विधान मण्डल के अभिसमर्थन के बिना संविधान में किसी प्रकार संशोधन संभव नहीं है।

प्रश्न 17. विधान मण्डल के दोनों सदनों का तुलनात्मक विवरण दीजिए।

उत्तर-लोकसभा की तरह, विधान सभा भी अधिक प्रभावशाली सदन है। विधान सभा की तुलना में विधान परिषद की शक्तियाँ काफी कम हैं चाहे साधारण विधेयक का ही प्रश्न क्यों न हो। धन विधेयक के अतिरिक्त बाकी सभी विधेयकों के पारित करने में भी विधान परिषद की शक्तियाँ काफी कम हैं। विधान सभा तथा विधान परिषद की तुलनात्मक स्थिति इस प्रकार है:

साधारण विधेयक के संबंध में

संसद में यदि दोनों सदनों के बीच किसी साधारण विधेयक को लेकर सहमति न हो तो राष्ट्रपति दोनों सदनों की संयुक्त बैठक बुलाता है और यदि वहाँ बहुमत से विधेयक पारित हो जाए, तो उसे दोनों सदनों से पारित समझा जाता है। परंतु संयुक्त बैठक की यह व्यवस्था राज्यों में नहीं है।

यद्यपि साधारण विधेयक विधान मण्डल के किसी भी सदन में प्रस्तावित किया जा सकता है तथापि दोनों सदनों की शक्तियाँ समान नहीं हैं। यदि कोई विधेयक विधान सभा से पारित होता है, तो उसे विचारार्थ विधान परिषद में भेज दिया जाता है। जब विधान परिषद बिना किसी संशोधन के इसे पारित कर देती है, तो विधेयक राज्यपाल के पास उसकी स्वीकृति के लिए भेज दिया जाता है। यदि विधेयक परिषद द्वारा रद्द कर दिया जाता है अथवा विधेयक पर परिषद तीन महीने तक विचार न करे अथवा कुछ संशोधन करके विधेयक पारित कर दे जिससे विधान सभा सहमत न हो, तो विधान सभा उसी सत्र में या अगले सत्र में विधेयक को पुनः पारित कर सकती है। इसके पश्चात् विधेयक फिर विधान परिषद को भेज दिया जाता है। यदि विधान परिषद एक महीने के अंदर विधेयक पारित कर के नहीं भेज दिया जाता है। यदि विधान परिषद एक महीने के अंदर विधेयक पारित कर के नहीं भेज दिया जाता है। इसका अर्थ यह हुआ कि विधान परिषद किसी विधेयक को अधिकतम चार महीने तक रोक सकती है।

वित्त विधेयक के संबंध में

लोक सभा की तरह कोई भी वित्त विधेयक पहले विधान सभा में रखा जाता है। यह विधान परिषद में प्रस्तावित नहीं किया जा सकता। विधान सभा अध्यक्ष यह प्रमाणित करता है कि कोई विधेयक धन विधेयक है अथवा नहीं। विधान सभा से विधेयक पारित होने के पश्चात् विधान परिषद को भेज दिया जाता है। विधान परिषद को इस पर चर्चा के लिए 14 दिन मिलते हैं। यदि परिषद विधेयक पारित कर दे तो इसे राज्यपाल के पास स्वीकृति के लिए भेज दिया जाता है। यदि परिषद द्वारा 14 दिन के अंदर विधेयक वापस नहीं भेजा जाता तो इसे परिषद द्वारा भी पारित माना जाता है। यदि परिषद विधेयक में कुछ परिवर्तन/संशोधन सुझाती है और विधान सभा को भेज देती है तो विधान सभा उन सुझावों को स्वीकार कर भी सकती है और नहीं भी। इसके पश्चात् विधेयक राज्यपाल को उसकी स्वीकृति के लिए भेज दिया जाता है जिसे मानने के लिए वह बाध्य होता है।

कार्यपालिका पर नियंत्रण

राज्य मंत्रिपरिषद केवल विधान सभा के प्रति उत्तरदायी होती है और तब तक अपने पद पर बनी रहती है जब तक उसे विधान सभा के बहुमत का विश्वास प्राप्त रहता है। यद्यपि विधान परिषद के सदस्य प्रश्न पूछ सकते हैं, काम रोकें या स्थगन प्रस्ताव रख सकते हैं अथवा ध्यानाकर्षण प्रस्ताव भी ला सकते हैं तथापि विधान परिषद मंत्रिपरिषद को अपदस्थ नहीं कर सकती।

चुनाव संबंधी कार्य

केवल विधान सभा के निर्वाचित सदस्य ही राष्ट्रपति के निर्वाचन में भाग ले सकते हैं। वे निर्वाचक मण्डल का सदस्य होने के नाते मतदान कर सकते हैं। परंतु विधान परिषद के सदस्य राष्ट्रपति के निर्वाचन में मतदान नहीं कर सकते। सभी राज्यों राज्य सभा के सदस्यों का निर्वाचन भी विधान सभा के सदस्य ही करते हैं, विधान परिषद के नहीं। उपरोक्त चर्चा से एक बात तो स्पष्ट हो जाती है कि विधान परिषद शक्तिहीन तथा प्रभावहीन सदन है। यह एक गौण सदन बन चुका है। इसीलिए अधिकतर राज्य एक सदनीय विधायिका के पक्ष में हैं।

परंतु परिषद बिल्कुल दिखावा मात्र भी नहीं है। यह विधान सभा द्वारा जल्दबाजी में लाए गए विधेयकों पर अंकुश का कार्य करती है और विधेयकों की कमियों तथा कमजोरियों को उजागर करती है। यह विधान सभा के बौद्धिक को भी कम करती है क्योंकि कई विधेयक विधान परिषद में प्रस्तावित किए जाते हैं।

लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. लोकसभा व राज्यसभा के पीठासीन अधिकारी कौन होते हैं? संक्षिप्त में बताइये।

उत्तर—दोनों सदनों के अपने पीठासीन अधिकारी होते हैं। लोकसभा का अध्यक्ष और उपाध्यक्ष इसके पीठासीन अधिकारी होते हैं जबकि राज्य सभा का भी अध्यक्ष और उपाध्यक्ष होते हैं।

लोक सभा अध्यक्ष

लोकसभा अध्यक्ष की स्थिति इंग्लैण्ड के कॉमन सभा के अध्यक्ष की तरह है। लोक सभा अध्यक्ष का कार्यलय बहुत सम्मानजनक और उच्च कोटी का होता है। एक बार अध्यक्ष चुने जाने के पश्चात् लोक सभा अध्यक्ष का अपनी पार्टी से कोई भी संबंध नहीं होता है। वह निष्पक्ष होकर अपनी जिम्मेदारी निभाता है। वह सदन की कार्यवाही को सुचारु रूप से चलाता है। वह सदन की गरिमा बनाये रखता है उन्हें सदन में शांति एवं व्यवस्था बनाये रखने की भी जिम्मेदारी होती है। लोक सभा अध्यक्ष ही धन विधेयक को प्रमाणित करता है। लोक सभा अध्यक्ष ही सदन में प्रश्न पूछने, प्रस्ताव लाने की अनुमति प्रदान करता है। लोक सभा अध्यक्ष ही विभिन्न समितियों का गठन करता है। जब लोक सभा भंग होती है तब भी अध्यक्ष का पद बना रहता है। लोक सभा अध्यक्ष के कार्य को कोई चुनौती नहीं दे सकता है। उसका वेतन और भत्ते संसद की निधि से तय किया जाता है।

लोक सभा अध्यक्ष अपने पद पर जब तक रहता है तब तक कि नयी संसद का गठन नहीं हो जाता है। लोक सभा अध्यक्ष की अनुपस्थिति में उपाध्यक्ष लोक सभा की अध्यक्षता करता है।

राज्यसभा का समापति

भारत का उप-राष्ट्रपति राज्य सभा का सभापति होता है। लेकिन उस समय जब उप राष्ट्रपति राष्ट्रपति का कार्यभार संभालता है या राष्ट्रपति के कार्य करता है वह राज्य सभा के सभापति का दायित्व नहीं निभा सकता। उप राष्ट्रपति का चुनाव संसद के दोनों सदनों के सदस्य मिलकर करते हैं। यह गुप्त मतदान द्वारा सिंगल ट्रांसफेयरबल मत प्रणाली द्वारा अनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर किया जाता है। उप राष्ट्रपति संसद या राज्य विधान सभा के किसी भी सदन का सदस्य नहीं होता है। उप राष्ट्रपति का कार्यकाल पांच वर्ष का होता है। उसका कार्यकाल उसके पद ग्रहण करने के दिन से माना जाता है। वे इच्छा से अपने पद से इस्तीफा देकर पद मुक्त हो सकते हैं। या फिर उन्हें राज्य सभा के सदस्यों द्वारा बहुमत से एक प्रस्ताव पास करके पद से हटाया जा सकता है जिसमें लोक सभा की स्वीकृति भी जरूरी है। राज्य सभा सभापति के कार्य एवं शक्तियाँ लोक सभा अध्यक्ष के होती हैं।

प्रश्न 2. संसदीय विशेषाधिकार से आपका क्या तात्पर्य है?

उत्तर-संसदीय विशेष लाभ या विशेषाधिकार कुछ ऐसे अधिकार हैं जो संसद के सदस्यों को प्राप्त हैं। ये अधिकार संसद के सदस्यों को कुशलता पूर्वक कार्य करने की गारंटी देते हैं। संसद के सदस्यों को दो प्रकार के विशेषाधिकार प्राप्त हैं। प्रगणित एवं अप्रगणित अधिकार। प्रगणित अधिकार इस प्रकार हैं :-

- (1) संसद के दोनों सदनों में सदस्यों को बोलने की आजादी
- (2) संसद में या उसकी किसी समिति में किसी सदस्य द्वारा कही गई किसी बात या किये गये किसी मत के संबंध में संसद सदस्य के विरुद्ध किसी अदालत में कोई कार्यवाही नहीं की जा सकती।

(3) किसी सदन के प्राधिकार द्वारा या उसके अधीन किसी रिपोर्ट, पत्र, मतों या कार्यवाहियों के प्रकाशन के संबंध में भी इस प्रकार कोई उत्तरदायी नहीं होगा।

(4) किसी भी दीवानी मामले में गिरफ्तार होने से छूट मिलती है। यदि सत्र चल रहा है तो उसके 40 दिन पहले एवं 40 दिन बाद तक गिरफ्तारी पर रोक होती है।

(5) किसी भी कोर्ट में गवाह के रूप में छूट मिलती है। अप्रगणित अधिकार वह हैं जिसमें कोई भी सदस्य यदि संसद की अवमानना करता है तो संसद को यह शक्ति है कि उसके विरुद्ध कड़ी कार्यवाही करे।

प्रश्न 3. कार्यपालिका पर नियंत्रण के संसदीय उपाय कौन कौन से हैं?

उत्तर-संसद का एक महत्वपूर्ण कार्य कार्यपालिका पर नियंत्रण है। इसके लिये कई प्रकार के उपाय मौजूद हैं। संसद की कार्यवाही के कुछ महत्वपूर्ण नियम हैं। पीठासीन अधिकारी प्रश्नकाल का निर्देश देते हैं। प्रश्न पूछना किसी भी सदस्य का संसदीय अधिकार होता है। चाहे वह किसी भी पार्टी का हो। प्रश्न पूछने के पीछे किसी भी सदस्य का उद्देश्य प्रशासन की कमियों को बताना है तथा सरकार को सही नीति अपनाने को मजबूर करना। यदि नीति पहले से ही बनी हो तो उसमें उचित संशोधन करना।

यदि किसी सदस्य अपने प्रश्नों के उत्तर संतुष्ट नहीं होता है तो वह पीठासीन अधिकारी को जनता के हित अपना प्रश्न मानकर उस पर चर्चा की माँग कर सकता है। पीठासीन अधिकारी बैठक के अंत के आधे घंटे पहले चर्चा की अनुमति दे सकता है।

पीठासीन अधिकारी की अनुमति से सदस्य मंत्री से किसी महत्वपूर्ण मुद्दे पर जवाब माँग सकते हैं। मंत्री या तो उस मुद्दे पर अपना संक्षिप्त वक्तव्य दे सकते हैं या फिर इसके लिये कुछ समय माँग सकते हैं।

स्थगन प्रस्ताव किसी महत्वपूर्ण मसले की ओर इशारा करता है जो कि देश के लिये काफी गंभीर है। यह स्थगन प्रस्ताव इसलिये लाया जाता है ताकि किसी महत्वपूर्ण मसले पर चर्चा की जा सके और सामान्य मसले की चर्चा से अलग रख सके। स्थगन प्रस्ताव को पारित करने का आशय है सरकार की निन्दा करना। इस उपायों के अतिरिक्त संसद अन्य समितियों के माध्यम से कार्यपालिका पर नियंत्रण रखती है। आप इन समितियों के बारे में आगे उप इकाई में अध्ययन करेंगे।

संसदीय समितियाँ

संसदीय शासन प्रणाली में संसद को कार्यपालिका या मंत्रियों के उत्तरदायित्व तथा प्रशासनिक जवाबदेही को सुनिश्चित करना होता है। कार्यपालिका की जवाबदेही को

सुनिश्चित करने के उनके माध्यम हैं जैसे संसदीय समितियाँ। संसद के द्वारा कई समितियों का गठन किया गया है। ये समितियाँ सरकार के कार्यों की जाँच पड़ताल करने का अधिकार रखती हैं। उन महत्वपूर्ण समितियों में दो सबसे खास समितियाँ हैं जो सरकार के काम-काज की समीक्षा करती हैं। ये समितियाँ वित्तीय क्षेत्र से संबंधित हैं। प्रथम लोक लेखा समिति तथा दूसरी आकलन समिति। इन दो समितियों के साथ-साथ अन्य समितियों द्वारा कार्यपालिका पर नजर रखी जाती है। ये समितियाँ सभी नीतियों का परीक्षण करती हैं ताकि इन्हें प्रभावशील तरीके से लागू किया जा सके। प्रायः ये समितियाँ सभी विवादित मसलों एवं संवेदनशील मुद्दों पर चर्चा करती हैं। ये समितियाँ सभी मंत्रियों एवं पीठासीन अधिकारियों के लिये प्ररीक्षण का कार्य भी करती हैं।

प्रश्न 4. राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री के कर्तव्यों में अन्तर कीजिए।

उत्तर-संविधान के अनुच्छेद 78 के अंतर्गत प्रधानमंत्री के कर्तव्यों का विवरण है। (1) प्रधानमंत्री राष्ट्रपति को मंत्रीपरिषद के फैसलों की जानकारी देता है। (2) केन्द्र के सभी कार्यों एवं प्रस्तावों को राष्ट्रपति की मंजूरी के लिए सूचित करते हैं। (3) यदि राष्ट्रपति चाहे तो मंत्रीपरिषद के निर्णयों की जानकारी ले सकते हैं। ये कर्तव्य ही प्रधानमंत्री को राष्ट्रपति से कमतर समझते हैं। इसी वजह से राष्ट्रपति वास्तविक कार्यपालिका भी है। लेकिन जैसा कि हम देख चुके हैं राष्ट्रपति अपने अधिकारों का प्रयोग मंत्रीपरिषद की सलाह पर करता है। लेकिन कई ऐसे अवसर भी आते हैं जब राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री के बीच कई नीतियों पर मतभेद नजर आते हैं। प्रथम राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद ने इस परंपरा को तोड़ा कि राज्याध्यक्ष और प्रधानमंत्री जो कि मंत्रीपरिषद का मुखिया होता है वही वास्तविक कार्यपालिका भी है। हमेशा प्रधानमंत्री या मंत्रीपरिषद की सलाह मानने को बाध्य हैं। उदाहरण के तौर पर वे नेहरू जी से इस बात पर नाखुश थे क्योंकि नेहरू जी हिन्दू पर्सनल लॉ में सुधार करने का प्रयास कर रहे थे। 1987 में राष्ट्रपति ज्ञानी जेल सिंह ने भारतीय डाक विधेयक को मंजूरी देने से मना कर दिया। इस बिल को संसद ने मंजूरी दे दी थी फिर भी राष्ट्रपति ने इसे मंजूरी नहीं दी। इस प्रकार राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री राजीव गाँधी के बीच मतभेद सामने आये।

प्रश्न 5. भारत में न्यायपालिका की उत्पत्ति पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिए।

उत्तर-भारत में न्यायपालिका की उत्पत्ति औपनिवेशिक काल से मानी जाती है। 1773 में रेगुलेंटिंग एक्ट (अधिनियम) पारित होने के पश्चात् भारत में प्रथम सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना हुई। यह कलकत्ता में स्थापित किया गया जिसमें एक मुख्य न्यायाधीश एवं तीन अन्य जज थे। इनकी नियुक्ति ब्रिटिश क्राउन के द्वारा की गयी थी। इसे राजा का न्यायालय बनाया गया था न कि कंपनी का कोर्ट। इस कोर्ट में राजा के क्षेत्राधिकार भी शामिल थे। जहाँ पर भी न्यायालय बनाये गये वहीं राजा के अधिकार निर्धारित किये गये। पहली बार सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना मद्रास में हुई तथा इसके बाद बंबई में। इस काल में न्यायिक व्यवस्था दो प्रकार की थी। एक प्रसीडेंसी के अंदर सर्वोच्च न्यायालय तथा प्रांतों के अंदर सदर न्यायालय। सर्वोच्च न्यायालय के अंदर अंग्रेजी कानून एवं प्रक्रियाएँ लागू थी जबकि सदर न्यायालयों में व्यक्तिगत कानून तथा विधिक कानून लागू थे। 1861 के उच्च न्यायालय अधिनियम के अंतर्गत इन दोनों को मिलाकर एक कर दिया गया। इस अधिनियम से सर्वोच्च न्यायालय को करवों में बदला गया। कलकत्ता, बंबई और मद्रास में उच्च न्यायालयों की

स्वायत्तता की गयी। लेकिन सबसे बड़ा अपील (Appeal) न्यायालय सीवी परिषद थी जोकि न्यायिक शक्तों के अधीन थी।

प्रश्न 6. अधीनस्थ न्यायालयों से आप क्या समझते हैं?

उत्तर-उच्च न्यायालय के अंतर्गत एक प्रकार की क्रमबद्धता है। इसे संविधान में भी दर्शाया गया है जिन्हें हम अधीनस्थ न्यायालय कहते हैं। क्योंकि ये न्यायालय राज्य सरकार के कानून द्वारा बनाये गये हैं इसलिए इनका नाम एवं पद अलग-अलग राज्य में अलग-अलग हैं। लेकिन, इनके मूल ढाँचे में एकरूपता होती है।

राज्य जिलों में विभाजित होता है। प्रत्येक जिले में एक जिला न्यायालय होता है। इन जिला न्यायालयों के अधीन लघु न्यायालय होते हैं जैसे, अतिरिक्त जिला न्यायालय, उप-न्यायालय, मुन्सिफ मजिस्ट्रेट न्यायालय, विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट, इत्यादि। सबसे निचले स्तर पर पंचायत न्यायालय होते हैं। जैसे न्याय पंचायत, ग्राम पंचायत, पंचायत अदालत इत्यादि। लेकिन ये न्यायालय आपराधिक मामलों के अंतर्गत नहीं आते हैं।

जिला न्यायालय का प्रमुख कार्य है अधीनस्थ न्यायालयों की अपील को सुनना। हालांकि न्यायालय प्रारंभिक मामलों में स्वयं संज्ञान ले सकता है जैसे, भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, संरक्षक अधिनियम, तथा भूमि अधिग्रहण अधिनियम इत्यादि। संविधान अधीनस्थ न्यायालयों की स्वतंत्रता को भी सुनिश्चित करता है। जिला न्यायालयों के जजों की नियुक्ति राज्यपाल करता है उच्च न्यायालय की सलाह पर ऐसे जज के पास सात वर्षों का बकाया का अनुभव होना चाहिए या फिर उसे उच्च किसी भारतीय न्यायालय में सेवा प्रदान करने का अनुभव होना चाहिए। जिला न्यायालय के अलावा अन्य न्यायालय में नियुक्ति के लिए राज्यपाल उच्च न्यायालय या राज्य लोक सेवा आयोग से सलाह लेता है। उच्च न्यायालय इन जिला न्यायालयों पर नियंत्रण रखता है विशेषकर पद-स्थापन पदोन्नति, पुष्टियाँ प्रदान करना इन मामलों में या राज्य न्यायिक सेवाओं से संबंधित मामलों में उच्च न्यायालय नियंत्रण रखता है।

प्रश्न 7. न्यायिक सुधार से आपका क्या तात्पर्य है?

उत्तर-न्यायपालिका ने नागरिकों के अधिकारों की रक्षा के लिए सम्मान अर्जित किया है लेकिन बड़ी संख्या में केस अभी लटके पड़े हैं इसने न्यायपालिका की प्रतिष्ठा में आँच लगाई तथा यह इसकी सबसे बड़ी कमजोरी भी है। 2010 में अखिल भारतीय न्यायिक सुधार कार्यशाला में मुख्य न्यायाधीश एस. एच. कपाड़िया यह इंगित किया कि देश में करीब एक करोड़ केस पिछले एक साल से अधूरे पड़े हैं। इसका प्रमुख कारण है न्यायपालिका के ढाँचे एवं प्रक्रिया में कहीं कुछ दोष या कमी है। कुछ कारण ऐसे भी हैं जो कि न्यायपालिका के अंदर शक्तियों का दुरुपयोग कर रहे हैं। इससे केस और लंबित होते हैं तथा न्याय दिलाने में भी देरी होती है। न्यायपालिका की एक और कमजोरी है वह है इसकी बोज़िल प्रक्रिया व्यवस्था तथा न्याय की अनिष्ट प्रक्रिया। न्यायिक सुधार के सुझाव सामने आ रहे हैं। ताकि एक नयी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक व्यवस्था कायम की जा सके एवं सामाजिक न्याय प्राप्त किया जा सके।

प्रश्न 8. राज्यपाल की भूमिका तथा स्थिति स्पष्ट कीजिए।

उत्तर-राज्यपाल की शक्तियों की सूची पर दृष्टि डालने से आप यह अनुभव करेंगे कि राज्यपाल राज्य में एक 'शक्तिशाली व्यक्ति' है। जैसा कि आप को विदित है कि संसदीय

प्रशासन प्रणाली में मंत्रिपरिषद राज्य विधायिका के प्रति उत्तरदायी होती है। इसलिए वास्तविक शक्तियों का प्रयोग मंत्रिपरिषद द्वारा किया जाता है न कि राज्यपाल द्वारा राष्ट्रपति की तरह वह भी मुख्यमंत्री के नेतृत्व में मंत्रिपरिषद के परामर्श से कार्य करता है इसलिए सामान्यतया मंत्रिपरिषदों में राज्यपाल को अपनी शक्ति का प्रयोग अपने विवेक के आधार पर करने का अवसर मिल जाता है। 1967 के आम चुनावों से जब कई दलों ने संयुक्त विधायक दल की सरकार बनाने का विकल्प चुना, राज्यपाल का पद, अपनी स्वविवेक की शक्ति के कारण बहुत विवादस्पद बन गया है। राज्यपालों ने अपनी मनमर्जी से काम किया है और कई बार तो केन्द्रीय स्तर पर सत्तासीन दल को प्रसन्न करने का प्रयास किया है। संविधान विशेषज्ञों के अनुसार तीन क्षेत्रों में राज्यपाल की भूमिका बहुत विवादस्पद हो गई है। वे हैं: राष्ट्रपति को संकटकाल की घोषणा करने के लिए सिफारिश करना, किसी भी राजनीतिक दल को स्पष्ट बहुमत प्राप्त न होने पर मुख्यमंत्री की नियुक्ति और दल बदल की स्थिति में मुख्यमंत्री के भविष्य का फैसला करना। इन विवादों के पीछे कई राज्यों में बहुदलीय मंत्रिपरिषदों का निर्माण, दलगत राजनीति, दल बदल की समस्या तथा दलों का विघटन मुख्य कारण रहे हैं। प्रशासनिक सुधार आयोग तथा सरकारिया आयोग द्वारा भेजी गई सिफारिशें तथा सुझाव कागजों तक सिमट कर रह गए हैं जबकि वास्तविकता यह है कि इन सिफारिशों तथा सुझाव करने से राज्यपाल के काम में पक्षपात करने की सम्भावना कम हो सकती थी।

प्रश्न 9. भारतीय संविधान में मुख्यमंत्री की स्थिति एवं भूमिका स्पष्ट कीजिए।

उत्तर-प्रत्येक राज्य में, राज्यपाल के दायित्व निर्वहन में सहयोग और सहायता के लिए एक मंत्रिपरिषद होती है। मुख्यमंत्री राज्य में सरकार का मुखिया होता है। मुख्यमंत्री के नेतृत्व में मंत्रिपरिषद राज्य स्तर पर वास्तविक शक्तियों का प्रयोग करती है।

मंत्रिपरिषद का गठन

मुख्यमंत्री की नियुक्ति राज्यपाल द्वारा की जाती है। विधान सभा में बहुमत प्राप्त दल के नेता की राज्यपाल द्वारा मुख्यमंत्री नियुक्त किया जाता है। मुख्यमंत्री की सिफारिश पर बाकी मंत्रियों की नियुक्ति की जाती है। मंत्रिपरिषद में शामिल किए जाने वाले मंत्रियों के लिए राज्य विधायिका के किसी एक सदन का सदस्य होना आवश्यक है। कोई व्यक्ति जो राज्य विधायिका का सदस्य नहीं है। उसे मंत्री नियुक्ति किया जा सकता है परंतु उसे छह महीने के अंदर राज्य विधायिका का सदस्य निर्वाचित होना अनिवार्य है अन्यथा उसका मंत्री पद समाप्त हो जाता है। मंत्रियों में विभागों का विभाजन, मुख्यमंत्री की सलाह से राज्यपाल द्वारा किया जाता है।

मुख्यमंत्री के कार्य

मुख्यमंत्री राज्य की मंत्रिपरिषद का मुखिया होता है। मुख्यमंत्री की संवैधानिक स्थिति लगभग प्रधानमंत्री जैसी होती है। राज्य के प्रशासन में मुख्यमंत्री की भूमिका बड़ी महत्वपूर्ण है। उसके कार्यों की चर्चा हम सरकार की संरचना इस प्रकार कर सकते हैं:

1. मुख्यमंत्री राज्य सरकार का वास्तविक मुखिया है। उसी की सिफारिश पर मंत्रियों की नियुक्ति राज्यपाल द्वारा की जाती है। राज्यपाल मंत्रियों के विभागों का विभाजन भी मुख्यमंत्री की सलाह पर ही करता है।

2. मुख्यमंत्री मंत्रिमण्डल की बैठकों की अध्यक्षता करता है। वह विभिन्न मंत्रालयों में लक्ष्य बनाता है तथा मंत्रिपरिषद का मार्ग दर्शन करता है।
3. राज्य सरकार के कानून तथा नीतियां बनाने में मुख्यमंत्री की भूमिका प्रमुख होती है। उसकी स्वीकृति से ही कोई मंत्री सदन में विधेयक प्रस्तावित करता है। वह विधान सभा के अंदर तथा बाहर दोनों जगह सरकार की नीतियों का मुख्य प्रवक्ता होता है।
4. संविधान के अनुसार प्रशासन, राजकीय मामले तथा प्रस्तावित विधेयकों के बारे में राज्यपाल को जानकारी देने का दायित्व मुख्यमंत्री का है।
5. जब भी राज्यपाल चाहता है, मुख्यमंत्री को उपरोक्त विषयों के बारे में राज्यपाल को जानकारी देनी होती है।
6. ऐसा कोई विषय या मामला जिस पर किसी मंत्री ने निर्णय लिया हो परंतु उस पर मंत्रिपरिषद ने विचार नहीं किया हो, राज्यपाल की इच्छा पर मुख्यमंत्री द्वारा मंत्रिपरिषद में विचारार्थ रखा जाता है।
7. राज्यपाल और मंत्रिमण्डल के बीच संचार का एक मात्र सेतु मुख्यमंत्री होता है। मंत्रिपरिषद द्वारा लिए गए सभी निर्णयों के बारे में जानकारी प्राप्त करने का अधिकार राज्यपाल को है।

उपरोक्त कार्यों से यह पता चलता है कि वास्तविक शक्तियां, मुख्यमंत्री के नेतृत्व में मंत्रिपरिषद के पास होती हैं। मंत्रिपरिषद राज्य की वास्तविक कार्यपालिका है। राज्य मंत्रिपरिषद की स्थिति मुख्यतया इस बात पर निर्भर करती है कि सत्ताधारी दल की विधान सभा में क्या शक्ति है और मुख्यमंत्री का व्यक्तित्व कैसा है। मुख्यमंत्री की स्थिति और भी शक्तिशाली हो जाती है यदि उसी का राजनीतिक दल केन्द्र में भी सत्ता में हो। जब तक मुख्यमंत्री और मंत्रिपरिषद को विधान सभा में बहुमत का विश्वास प्राप्त है, वे राज्य में वास्तविक शक्तियों का प्रयोग करते हैं।

प्रश्न 10. राज्यपाल तथा मुख्यमंत्री के बीच संबंध किस प्रकार के हैं?

उत्तर-राज्यपाल राज्य का संवैधानिक प्रमुख है। राज्य के सभी कार्यपालिका संबंधी कार्य उसी के नाम से होते हैं। राज्यपाल मुख्यमंत्री की नियुक्ति करता है और फिर उसकी सिफारिश पर मंत्रियों की नियुक्ति करता है। राज्य प्रशासन को सुचारु रूप से चलाने की जिम्मेदारी राज्यपाल की है। यह देखना भी उसी का दायित्व है कि राज्य प्रशासन संविधान के अनुसार चल रहा है कि नहीं। यदि वह यह अनुभव करे कि राज्य में संवैधानिक तंत्र असफल हो चुका है अथवा प्रशासन संविधान के अनुसार बनाए नियमों का पालन नहीं कर रहा है तो वह केन्द्र सरकार को राज्य में संकट काल की घोषणा करने की सिफारिश कर सकता है। वह अपनी रिपोर्ट में राष्ट्रपति को राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू करने का परामर्श दे सकता है। यदि राष्ट्रपति संतुष्ट हो जाता है तो वह अनुच्छेद 356 के अंतर्गत आपातकाल की घोषणा कर देता है जिसे सामान्यतया राष्ट्रपति शासन कहते हैं। घोषणा के पश्चात, राज्य प्रशासन पर केन्द्र का नियंत्रण हो जाता है और राज्यपाल केन्द्र के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करता है। मंत्रिपरिषद को भंग कर दिया जाता है और विधान सभा या तो भंग अथवा स्थगित कर दी जाती है।

संविधान के अनुसार राज्य का प्रशासन सुचारु रूप से चलाने के लिए राज्यपाल के सहयोग तथा सहायता के लिए मुख्यमंत्री के नेतृत्व में एक मंत्रिपरिषद की व्यवस्था होगी

जोकि वह अपने दायित्व का वहन कर सके, सिवाय उस स्थिति के जब संविधान के अनुसार उसे स्वविक के आधार पर काम करना होता है। जब मुख्यमंत्री विधान सभा में विश्वास मत प्राप्त कर लेता है तब राज्यपाल का विवेकाधिकार कम हो जाता है। ऐसी परिस्थिति में मुख्यमंत्री राज्य का वास्तविक प्रमुख होता है जबकि राज्यपाल केवल संवैधानिक प्रमुख रह जाता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि राज्यपाल की दोहरी भूमिका है। राज्य का संवैधानिक प्रमुख होने के नाते वह मंत्रिपरिषद के परामर्श से कार्य करता है और केन्द्र सरकार के प्रतिनिधि के रूप में भी वह कार्य करता है। राज्यपाल तथा मुख्यमंत्री के आपसी संबंध राज्य के राजनीतिक तथा संवैधानिक वातावरण पर निर्भर करते हैं। सामान्यतया राज्यपाल राज्य का नाममात्र का प्रमुख है परंतु राष्ट्रपति शासन के समय वह केन्द्र सरकार का प्रतिनिधि बन जाता है और राज्य प्रशासन का भार संभाल लेता है। संवैधानिक भावना को ध्यान में रखते हुए राज्यपाल को एक प्रकार से केन्द्रीय सरकार की आंखें तथा कान भी कहा जा सकता है। यदि उसकी नियुक्ति, पदच्युति और स्थानांतरण केन्द्र सरकार द्वारा होता है, अतः वह केन्द्र सरकार तथा सत्ताधारी दल का आज्ञाकारी बना रहता है। एक बात तो स्पष्ट है कि राज्यपाल का कार्य केवल एक अम्पायर जैसा ही नहीं है जो केवल यह देखे कि खेल संवैधानिक प्रावधानों तथा उसमें निहित भावनाओं के अनुसार खेला जा रहा है अथवा नहीं।

प्रश्न 11. नागरिकों और उनके दैनिक जीवन पर राज्य सरकार के प्रभाव समझाइये।

उत्तर-क्या आपने कभी महसूस किया है कि राज्य सरकार की नीतियों तथा कार्यक्रमों पर राज्य विधायिकाओं में होने वाली बहस किस तरह हमारे दैनिक जीवन को प्रभावित करती है? सभी राज्यों द्वारा चलाई जा रही योजनाएं तथा परियोजनाएं हमें प्रत्यक्षतः अथवा परोक्षतः प्रभावित करती हैं। इनमें से प्रमुख भाग राज्य सरकारों द्वारा चलाई जा रही कल्याणकारी परियोजनाओं का है। कई बार राज्य सरकारों द्वारा संघ सरकार की कल्याणकारी योजनाओं को अपनाकर उन्हें कार्यान्वित किया जाता है।

उदाहरणार्थ आंध्रप्रदेश तथा राजस्थान राज्यों में विद्यालय नहीं जाने वाले बच्चों की शिक्षा के लिए रेजिडेंशियल ब्रीज कोर्सेज के द्वारा अभिनव प्रयास किये जा रहे हैं। ऐसे बच्चों में मानसिक रूप से कमजोर, श्रवण दृष्टि बाधित तथा शारीरिक रूप से विकलांग बच्चे भी शामिल हैं। इस तरह के प्रयास इन बच्चों को मुख्य धारा के विद्यालयों से जुड़ने के योग्य बनाते हैं। केन्द्र सरकार की मध्याह्न भोजन योजना के रूप में, उत्तरप्रदेश में 95,000 सरकारी प्राथमिक विद्यालयों से भी अधिक में बच्चों को खाना उपलब्ध करवाया जा रहा है। इन योजनाओं को स्कूलों में कार्यान्वित करने के लिए ग्राम का निर्वाचित प्रधान जिम्मेदार होता है। राज्य मध्याह्न भोजन गेहूं, चावल, सब्जियाँ, सोयाबीन और दालों को शामिल करता है। इन बच्चों के लिए जिन अभिनव प्रयासों को अपनाया जाता है, उनमें खेल तथा कम्प्यूटर द्वारा लेखने की प्रक्रियाएँ भी शामिल हैं। महाराष्ट्र राज्य में विद्यालय स्वास्थ्य एवं स्वच्छता शिक्षा कार्यक्रम कार्यान्वित किया जा रहा है। इस कार्यक्रम के द्वारा परिवर्तन लाने में बच्चे नेतृत्व प्रदान कर रहे हैं। बच्चे जिन्हें 'स्वच्छता दूत' कहा जाता है, स्कूलों, परिवारों और समुदायों में लड़ाई और स्वच्छता के संबंध में जागरूकता ला रहे हैं। यह कार्यक्रम महाराष्ट्र राज्य सरकार द्वारा संघ सरकार के संपूर्ण स्वच्छता अभियान के अंग के रूप में चलाया जा रहा है।

राज्यसभा तथा लोकसभा में तुलनात्मक अध्ययन कीजिए।

1. कुछ शक्तियां तथा कार्य ऐसे हैं जिनमें लोकसभा राज्यसभा से अधिक शक्तिशाली है जैसे किनी धन विधेयक को प्रस्तावित तथा पारित करना एवं अविश्वास प्रस्ताव पारित करने का अधिकार जो अदालत करना। ऐसे में राज्यसभा को एकाधिकार प्राप्त है जिनमें लोकसभा का कोई अधिकार नहीं है किनी विचार लेने का अधिकार।

3. कुछ क्षेत्रों में दोनों की शक्तियाँ समान हैं। जैसे धन विधेयक के अतिरिक्त अन्य विधेयकों को पारित करना, आपातकाल की स्वीकृति देना, स्थगन प्रस्ताव तथा अन्य प्रस्तावों को लाना।

दोनों सदनों के सभी सदस्यों को सांसारिक के क्षेत्रीय विकास निधि में से हर वर्ष दो-दो करोड़ रुपये मिलते हैं। यह धन सीधा ससद सदस्य को देने की बजाए सम्बन्धित जिला मुख्यालय को दिया जाता है जिसका प्रयोग सांसद अपने क्षेत्र के विकास के लिए कर सकता है।

UNIT-IV

- दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

उत्तर-

यद्यपय मे लोकतंत्र भारतीय संविधान निर्माताओं मे चुनाव करवाने के लिए एक स्वतंत्र मशीनरी को विशेष महत्व दिया। भारत के संविधान में एक निर्वाचन आयोग का है जो सभी चुनावों के निरीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण के लिए उत्तरदायी है। यह के दोनों सदनों, विधान सभाओं तथा राष्ट्रपति एवं उप-राष्ट्रपति पर के चुनावों के लिए है। इसके अतिरिक्त यह मतदान सुविधियाँ बनाये उन्हें संशोधित करने तथा मतदाता के रख-रखाव के लिए भी उत्तरदायी है। यह संसद और राज्य विधान सभाओं के के लिए चुनावी क्षेत्र परिशिष्टों करता है, चुनावी कार्यक्रम नियंत्रित करता है और विवाद सुनता है। यह चुनाव के संबंधित अन्य अन्य कार्य करता है।

निर्वाण अस्मिन्
मनेन चित्तं अनुसृत्य
वद से १९८९ तः
लिपि काली सप्तमः
ब्रह्मचर्याय नमः
मे वरिष्ठ को

मुख्य चुनाव आयुक्त को अपने अधिकारों का उपयोग करके मतदाताओं को सूचित करने और मतदान की प्रक्रिया को सुचारु रूप से चलाने में मदद करने के लिए आवश्यक है।

आयुक्त के नीचे काम करते हैं, उन्हें राष्ट्रपति द्वारा मुख्य चुनाव आयुक्त की सिफारिश पर ही हटाया जा सकता है।

निर्वाचन आयोग की शक्तियाँ और कार्य

निर्वाचन आयोग का प्राथमिक कार्य भारत में स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव करवाना है। इस हेतु निर्वाचन आयोग के निम्नलिखित कार्य हैं-

चुनाव क्षेत्रों का परिसीमन करना- चुनाव प्रक्रिया को सुविधाजनक बनाने के लिए देश को अनेक चुनावी क्षेत्रों में बांटना होता है।

चुनाव क्षेत्र- यह एक ऐसा क्षेत्र है जहाँ से प्रत्याशी चुनाव लड़ते हैं।

चुनाव क्षेत्रों के परिसीमन का काम आमतौर पर परिसीमन आयोग करता है जिसमें उच्चतम न्यायालय के पांच सेवानिवृत्त अथवा सेवारत न्यायाधीश होते हैं तथा मुख्य चुनाव आयुक्त इसका पदेन सदस्य होता है। परिसीमन आयोग को सभी प्रकार की सचिवालयी सहायता निर्वाचन आयोग द्वारा प्रदान की जाती है। परिसीमन आयोग का समय-समय पर सरकार द्वारा गठन किया जाता है।

मतदाता सूचियाँ तैयार करना

प्रत्येक क्षेत्र की एक विस्तृत मतदाता सूची होती है। इसे मतदाता सूची कहा जाता है। निर्वाचन आयोग संसद तथा विधान सभा चुनावों के लिए मतदाता सूची तैयार करता है। प्रत्येक चुनाव क्षेत्र की मतदाता सूची में उन सभी व्यक्तियों के नाम दर्ज होते हैं जो उस चुनाव में मतदान करने का अधिकार रखते हैं। मतदाता सूची को समय-समय पर प्रायः साधारण चुनाव, उपचुनाव और मध्यावधि चुनावों से पूर्व संशोधित किया जाता है।

आम चुनाव- नई लोक सभा अथवा विधान सभा गठित करने के लिए होने वाले चुनावों को आम चुनाव कहा जाता है।

उप चुनाव- यदि किसी समय लोक सभा अथवा विधान सभा के कार्यकाल के बीच किसी सदस्य की मृत्यु अथवा त्यागपत्र देने से स्थान रिक्त होता है तो उस स्थान / सीट के लिए होने वाले चुनाव को उपचुनाव कहते हैं।

मध्यावधि चुनाव- यदि लोक सभा अथवा राज्य विधान सभा को पांच वर्ष की कार्यवधि से पूर्व भंग कर दिया जाता है और नई लोक सभा अथवा विधान सभा गठित करने के लिए होने वाले चुनावों की मध्यावधि चुनाव कहते हैं।

चुनाव आयोग द्वारा नियुक्त संगणकों द्वारा घर-घर जाकर संशोधन किया जाता है और सभी योग्य मतदाताओं का पंजीकरण किया जाता है। किसी भी व्यक्ति को मतदाता के रूप में पंजीकृत किया जा सकता है यदि वह अधोलिखित योग्यताएं पूरी करता हो:

1. वह भारत का नागरिक हो।
2. उसकी आयु 18 वर्ष की हो।
3. वह उस चुनाव क्षेत्र का निवासी हो।

राजनीतिक दलों को मान्यता

निर्वाचन आयोग का एक महत्वपूर्ण कार्य राजनीतिक दलों को अखिल भारतीय (राष्ट्रीय) अथवा राज्य (क्षेत्रीय) राजनीतिक दल के रूप में मान्यता देना है। यदि किसी

साधारण चुनाव में किसी दल विशेष को किन्हीं चार राज्यों के कुल वैध मतों का 6 प्रतिशत प्राप्त होता है तो उसे अखिल भारतीय (राष्ट्रीय) दल के रूप में मान्यता मिलती है। यदि एक दल को एक राज्य में पड़े वैध मतों का 4 प्रतिशत मिलता है तो उसे प्रांतीय अथवा क्षेत्रीय दल के रूप में मान्यता दी जाती है। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, भारतीय जनता पार्टी, भारतीय कम्युनिष्ट पार्टी, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी), बहुजन समाज पार्टी और राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी वर्तमान में प्रमुख राष्ट्रीय दल हैं।

चुनाव चिह्न आवंटित करना

राजनीतिक दलों के पास निर्वाचन आयोग द्वारा आवंटित चुनाव चिह्न होते हैं। उदाहरण के लिए, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का चुनाव चिह्न हाथ है, भारतीय जनता पार्टी का कमल तथा बहुजन समाज पार्टी का चुनाव चिह्न हाथी है। ये चुनाव चिह्न निम्नलिखित कारणों से महत्वपूर्ण हैं:

1. यह निरक्षर मतदाताओं के लिए महत्वपूर्ण एवं सहायक होते हैं जो उम्मीदवारों के नाम नहीं पढ़ सकते।
2. यह एक ही नाम वाले दो उम्मीदवारों के बीच अंतर (भेद) करने में भी सहायक होते हैं।

चुनाव करवाने वाले अधिकारी

स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित करने के लिए चुनाव आयोग चुनाव कार्य में सहायता करने के लिए हजारों चुनाव इन अधिकारी नियुक्त करता है। अधिकारियों को मजिस्ट्रेटों, पुलिस अफसरों, लोक सेवकों, टाइपिस्टों, स्कूली अध्यापकों, ड्राईवरों और चपरासियों इत्यादि से लिया जाता है। इनमें से तीन प्रमुख अधिकारी हैं जो स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव करवाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये हैं- रिटर्निंग ऑफीसर, पीठासीन अधिकारी और चुनाव (मतदान) अधिकारी।

रिटर्निंग अधिकारी

प्रत्येक चुनाव क्षेत्र में सम्बद्ध राज्य सरकार से परामर्श करके एक अधिकारी को रिटर्निंग अधिकारी का पदनाम दिया जाता है। एक अधिकारी को एक से अधिक चुनाव क्षेत्रों का रिटर्निंग अधिकारी भी नियुक्त किया जा सकता है। सभी नामांकन पत्र रिटर्निंग अधिकारी को सौंपे जाते हैं। वह पत्रों की जांच करता है और ठीक पाये जाने पर उन्हें स्वीकार करता है। चुनाव आयोग के निर्देशानुसार वह चुनाव चिह्न आवंटित करता है। वह उम्मीदवारों द्वारा नाम वापस लेने को स्वीकृति देता है और अन्तिम सूची घोषित करता है। वह सभी मतदान केन्द्रों का निरीक्षण करता है, उसकी देखरेख में मतपत्रों की गिनती होती है और अंत में उसके द्वारा परिणाम घोषित किया जाता है। वास्तव में रिटर्निंग अफसर सम्बद्ध चुनाव क्षेत्र में निष्पक्ष और सक्षम चुनाव संचालन का सबसे उपर का महत्वपूर्ण अधिकारी होता है।

पीठासीन अधिकारी

प्रत्येक क्षेत्र में बड़ी संख्या में मतदान केन्द्र होते हैं, प्रत्येक मतदान केन्द्र लगभग एक हजार मतदाताओं के लिए होता है। ऐसा प्रत्येक मतदान केन्द्र किसी एक अधिकारी के अंतर्गत होता है जिसे पीठासीन अधिकारी कहा जाता है। वह अपने मतदान केन्द्र की सभी

चुनावी प्रक्रिया की देखरेख करता है और सुनिश्चित करता है कि प्रत्येक मतदाता को स्वतंत्र मतदान का अवसर मिले। मतदान उपरांत वह मतपेटियों को सील कराता है और रिटर्निंग अफसर तक पहुंचाता है।

चुनाव अधिकारी

प्रत्येक पीठासीन अधिकारी की तीन अथवा चार चुनाव अधिकारी सहायता करते हैं। वे मतदाता का नाम मतदाता सूची में देखते हैं, मतदाता की उंगली पर न मिटने वाली स्थायी लगाते हैं, उसे मतपत्र देते हैं और सुनिश्चित करते हैं कि प्रत्येक मतदाता गुप्त मतदान कर सके।

प्रश्न 2. भारत में चुनाव आयोग का विस्तृत विवरण दीजिए।

उत्तर -
चुनाव प्रक्रिया

भारत में चुनाव कानून तथा निर्धारित विधि से होते हैं जिसके लिए निम्नलिखित प्रक्रिया अपनाई जाती है:

चुनाव की अधिसूची जारी करना

सरकारी तौर पर चुनाव की प्रक्रिया तब प्रारम्भ होती है जब चुनाव आयोग की सिफारिश पर लोक सभा के मामले में राष्ट्रपति और विधान सभा के मामले में राज्यपाल चुनाव की अधिसूचना जारी करता है। व्यवहार में लोकतन्त्र उम्मीदवारों को नामांकन पत्र जमा कराने के लिए सात दिन दिए जाते हैं अधिसूचना जारी होने के बाद रविवार को छोड़ कर सातवां दिन अन्तिम दिन होता है। नामांकन पत्रों की जांच साधारणतया नामांकन भरने की अन्तिम तिथि के बाद होती है। उम्मीदवार पत्रों की जांच के बाद दूसरे दिन अपना नाम वापस ले सकता है। चुनाव नामांकन वापस लेने के बाद के बीस दिन से पहले नहीं होता।

नामांकन पत्र भरना

चुनाव लड़ने के इच्छुक व्यक्ति को एक निर्धारित प्रपत्र भरना होता है जिसमें उसे अपना नाम, आयु, डाक का पता और मतदाता सूची में अपना क्रमांक लिखना होता है। प्रत्याशी के नामांकन पत्र को प्रस्तावित तथा समर्थित किन्हीं दो मतदाताओं जो कि उसी चुनाव क्षेत्र में पंजीकृत हों, द्वारा किया जाना आवश्यक है। प्रत्येक प्रत्याशी को शपथ भी लेनी होती है। इसके पश्चात नामांकन पत्र को रिटर्निंग प्राधिकारी के पास जमा कराना होता है।

सुरक्षा राशि (जमानत राशि)

प्रत्येक उम्मीदवार को नामांकन पत्र भरते समय एक सुरक्षा राशि भी जमा करवानी होती है। लोक सभा के लिए प्रत्येक उम्मीदवार को दस हजार रुपए तथा विधान सभा के लिए पांच हजार रुपए की सुरक्षा राशि जमा करानी होती है। परंतु अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के उम्मीदवारों को लोक सभा के लिए 5000 रु और विधान सभा चुनाव लड़ने के लिए 2500 रु. की सुरक्षा राशि जमा करानी होती है। यदि उम्मीदवार को कुल डाले गए वोट मतों का 1/6 भाग नहीं मिलता तो सुरक्षा राशि जवाब हो जाती है।

जांच और नाम वापस लेना

रिटर्निंग अधिकारी द्वारा प्राप्त सभी नामांकन पत्रों की चुनाव आयोग द्वारा निर्धारित दिन को जांच की जाती है। ऐसा यह सुनिश्चित करने के लिए किया जाता है कि सभी पत्र

निर्धारित विधि अनुसार भरे गए हैं अथवा नहीं तथा उनके साथ आवश्यक सुरक्षा (जमानत राशि भी जमा करवा दी गई है। रिटर्निंग अधिकारी निम्नलिखित में से किसी एक आधार पर नामांकन पत्र रद्द कर सकता है।

(i) यदि उम्मीदवार की आयु 25 वर्ष से कम है।

(ii) यदि उसने सुरक्षा राशि जमा नहीं करवाई है।

(iii) यदि उसके पास कोई लाभ का पद है।

(iv) यदि उसका नाम देश में कहीं भी मतदाता के रूप में पंजीकृत नहीं है।

पत्रों की जांच पड़ताल के बाद के दूसरे दिन नाम वापस लेने का अन्तिम दिन होता है। यदि उस दिन रविवार अथवा अवकाश हो तो उससे अगले दिन को नाम वापस लेने के लिए निश्चित किया जाता है।

चुनाव प्रचार / अभियान

चुनाव प्रचार वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से कोई उम्मीदवार मतदाताओं को किसी अन्य के स्थान पर स्वयं उसे ही मत देने के लिए प्रेरित करता है। इस अवधि में उम्मीदवार अपने क्षेत्र में यथासम्भव अधिक से अधिक मतदाताओं को अपने पक्ष में मतदान करने हेतु प्रभावित करने के लिए यात्रा करते हैं। पिछले कुछ समय से चुनाव आयोग ने सभी मान्यता प्राप्त राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय दलों को सरकारी इलेक्ट्रॉनिक मीडिया और आल इण्डिया रेडियो पर अपना प्रचार निशुल्क करने की सुविधा प्रदान की है। सभी

राजनीतिक दलों को निशुल्क दिया जाने वाला समय चुनाव आयोग द्वारा आबंटित किया जाता है। चुनाव प्रचार मतदान के दिन से 48 घंटे पहले रुक जाता है। चुनावी प्रक्रिया में प्रचार की अनेक तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। उनमें से कुछ हैं:-

(i) जन सभाएँ करना

(ii) अपने चुनाव घोषणा पत्र के मुख्य मुद्दों को उजागर करने वाले पर्चे बांटना (चुनाव घोषणा)। चुनाव घोषणा राजनीतिक दल द्वारा जारी एक दस्तावेज है, जिसमें सम्बन्धित दल की नीतियों एवं कार्यक्रमों की घोषणा होती है- इसके बारे में आप पाठ 19 में विस्तार से पढ़ेंगे।

(iii) दल के प्रभावशाली व्यक्तियों द्वारा घर-घर जाकर निवेदन करना।

(iv) विभिन्न राजनीतिक नेताओं के भाषणों को प्रसारित एवं टी.वी. पर दिखाया जाना।

आदर्श आचार संहिता

चुनाव प्रचार की अवधि में राजनीतिक दलों तथा चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवारों से राजनीतिक दलों की आपसी सहमति के आधार पर चुनाव आयोग द्वारा तैयार की गई आदर्श आचार संहिता का पालन करने की अपेक्षा की जाती है। चुनाव आयोग द्वारा चुनावी कार्यक्रम घोषित होने के साथ ही यह लागू हो जाती है। आचार संहिता निम्नलिखित प्रकार से है-

(i) राजनीतिक दलों और चुनाव लड़ रहे प्रत्याशियों (उम्मीदवारों) को चुनाव प्रचार के लिए धार्मिक स्थानों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

(ii) चुनाव प्रचार हेतु दिए गए भाषण विभिन्न धर्मों, जातियों और भाषाओं इत्यादि से संबंध रखने वाले विभिन्न समुदायों के बीच घृणा पैदा करने वाले नहीं होने चाहिए।

- (iii) चुनाव के लिए सरकारी मशीनरी का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए।
 (iv) चुनाव की तिथि घोषित होने के बाद कोई नई योजना घोषित नहीं की जा सकती।
 और कोई नई परियोजना शुरू नहीं की जा सकती।
 (v) कोई भी जन संचार के साधनों का पक्षपात पूर्ण ढंग से दुरुपयोग नहीं कर सकता।

खर्च की जांच-पड़ताल

यद्यपि चुनाव आयोग सभी मान्यता प्राप्त राष्ट्रीय और प्रांतीय दलों को अपने प्रचार के लिए सीमित समय की निशुल्क सुविधा प्रदान करता है, परंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि राजनीतिक दल अपने प्रचार पर कुछ खर्च नहीं करते। राजनीतिक दल और उम्मीदवार अपने प्रचार अभियान पर बहुत पैसा खर्च करते हैं, खर्च की गई राशि की जांच करने का अधिकार चुनाव आयोग को है। संसदीय और विधान सभाओं का चुनाव पर खर्च करने की एक निश्चित सीमा है। प्रत्येक उम्मीदवार को चुनाव परिणामों की घोषणा के बाद के 45 दिनों में अपने चुनावी खर्च का लेखा-जोखा जमा करवाना होता है। त्रुटि पाए जाने पर अथवा किसी उम्मीदवार द्वारा निश्चित सीमा से अधिक खर्च किए जाने पर चुनाव आयोग उचित कार्रवाई कर सकता है और विजयी उम्मीदवार को अयोग्य भी घोषित किया जा सकता है अर्थात् उसके चुनाव को रद्द किया जा सकता है।

मतदान, गिनती (गणना) परिणाम घोषित करना

मतदान करवाने के लिए प्रत्येक चुनाव क्षेत्र में बहुत बड़ी संख्या में मतदान केन्द्र बनाए जाते हैं। प्रत्येक चुनाव केन्द्र पर पीठासीन अधिकार का अधिकार होता है और उसके अधीन कई चुनाव अधिकारी काम करते हैं।

मतदाता गुप्त रूप से एक कक्ष में मतदान करता है ताकि कोई अन्य व्यक्ति न जान पाए कि उसने किसके पक्ष में मतदान किया है। इसे गुप्त मतदान कहते हैं। मतदान के उपरान्त मतपेटियों को उम्मीदवारों को एजेन्टों की उपस्थिति में सील किया जाता है। एजेन्ट यह सुनिश्चित करते हैं कि किसी मतदाता को मतदान के अधिकार से वंचित नहीं किया गया है। शर्त यह है कि मतदाता निर्धारित समय सीमा में मतदान के लिए आया हो।

प्रश्न 3. राज्य निर्वाचन आयोग के महत्व का वर्णन कीजिए।

उत्तर-

राज्य निर्वाचन आयोग

किसी भी देश में, राजनीतिक विकास का सार उस देश की संस्थानों एवं प्रक्रियाओं के विकास में निहित होता है, जो जनता की भागीदारी के लिए सहायक हो स्थानीय सरकार की संस्थाएँ जनता की इच्छाओं, उनके उत्साह और शासन में सक्रिय भागीदारी के लिए एक रास्ता दिखाती हैं। दूसरे शब्दों में स्थानीय सरकार की संस्थाएँ लोगों की लोकतांत्रिक जरूरतों को पूरा करती हैं, और राजनीतिक चेतना को भी व्यक्त करने के लिए चैनल के रूप में कार्य करती हैं। स्थानीय सरकार कई तरीकों से लोकतांत्रिक संस्थानों को मजबूत बनाने में योगदान दे सकती हैं, जिसके लिए ईमानदारी से किए गए प्रयासों की आवश्यकता है। लेकिन लोकतांत्रिक मानदंडों के बिना स्वशासी संस्थान का अस्तित्व सम्भव ही नहीं है। लम्बे समय से यह एक चिन्ता का विषय रहा है। स्वतंत्रता के बाद से, भारत में अधिकांश राज्य सरकारें स्थानीय निकायों के स्वशासन के विकास के प्रति उदासीन रवैया दिखाती रही हैं। इन संस्थानों पर कब्जा करने की नीति व्यापक रूप से पनपी है इसीलिए कई राज्यों में वर्षों से

चुनाव नहीं हुए थे। इस संदर्भ में, एक उदाहरण हिमाचल प्रदेश का है जहाँ शिमला नगर निगम के साथ 15 शहरों के चुनाव 1986 में 26 साल के अंतराल के बाद हुए थे। ऐसे अनेक उदाहरण दूसरे राज्यों में भी मिलते हैं। पंजाब में 1977 में तीन नगर निगम स्थापित किये गये थे लेकिन ये लंबे समय तक अलोकतांत्रिक निकायों के रूप में रहे।

इस समस्या को दूर करने के लिए विभिन्न भागों से बहुत बार मांग की गई है कि एक ऐसा तंत्र तैयार किया जाये जो स्थानीय निकायों के लिए नियमित और निष्पक्ष चुनाव करा सके। इस मांग को 73वें और 74वें संवैधानिक संशोधन अधिनियमों के एक भाग द्वारा पूरा किया गया। इस भाग में राज्य निर्वाचन आयोग की स्थापना का प्रावधान किया गया है, जिसकी स्थापना राज्यपाल द्वारा होगी ताकि यह आयोग पंचायत और नगर निकायों के चुनावों की निगरानी, निर्देशन और नियंत्रण कर सके। इस संदर्भ में, अनुच्छेद 243 और 243ख के अनुसार यह राज्य निर्वाचन आयोग की जिम्मेदारी है कि वह पंचायतों और नगरपालिकाओं के सभी चुनावों के संचालन से सम्बन्धित अधीक्षण, निर्देशन तथा नियंत्रण करे। संवैधानिक संशोधनों में सम्मिलित किए गए अनुच्छेद 245क के अनुसार सभी स्थानीय निकायों की कार्यकाल अवधि पाँच वर्ष की गई, और अगर यह पाँच वर्ष की अवधि से पहले भंग हो जाते हैं तो छ महीने की अवधि के भीतर फिर से स्थानीय निकाय का चुनाव कराने का प्रावधान है। यह अनुच्छेद राज्य निर्वाचन आयोग की भूमिका को रेखांकित करता है कि वह प्रत्येक पाँच वर्ष के बाद नियमित चुनाव करवाए और तब भी जब इस समय अन्तराल के बीच चुनाव कराने की आवश्यकता हो।

जब से संवैधानिक प्रावधानों को अपनाया गया, तब से राज्यों ने पंचायतों और नगर पालिकाओं के लिए अपने स्वयं के कानून पारित किये, और साथ ही साथ राज्य निर्वाचन आयोग की स्थापना के प्रावधान को भी सम्मिलित किया है। हालाँकि, कुछ राज्यों ने जैसे पंजाब ने राज्य निर्वाचन आयोग की स्थापना के लिए एक अलग अधिनियम पारित किया है। अधिकांश राज्यों ने राज्य निर्वाचन आयोगों का गठन किया, जिनका कार्य राज्य के स्थानीय निकायों के नियमित, स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव कराना है। यह भी कहा जा सकता है कि आयोग ये भी निर्धारित करेगा कि सरकार की नीतियों को कार्यान्वित करने के लिए स्थानीय नेतृत्व और सरकार के बीच सम्बन्ध स्थापित करने के लिए जनता की भागीदारी किस हद तक सुरक्षित हो सकती है।

प्रश्न 4. राज्य निर्वाचन आयोग की संरचना एवं गठन पर चर्चा कीजिए।

उत्तर- राज्य निर्वाचन आयोग : संरचना और गठन

सभी राज्यों में निर्वाचन आयोग का नेतृत्व राज्य निर्वाचन आयुक्त करता है, जो राज्यपाल द्वारा नियुक्त किया जाता है। यद्यपि कुछ राज्यों जैसे पंजाब में उप-निर्वाचन आयुक्त की नियुक्ति का प्रावधान है। अधिकांश राज्यों में एक सेवानिवृत्त प्रशासनिक सेवक या एक सेवानिवृत्त न्यायाधीश को निर्वाचन आयुक्त के रूप में नियुक्त किया जाता है। यहाँ हम पंजाब के केस का विवेचन कर सकते हैं।

(i) निर्वाचन आयुक्त-राज्यपाल सरकारी राजपत्र की अधिसूचना द्वारा (क) राज्य सरकार के अधिकारी की नियुक्ति करता है जिसकी उम्र पचपन वर्ष से कम ना हो, और वित्तीय आयुक्त के रैंक का हो, या राज्य सरकार का प्रमुख सचिव हो जो न्यूनतम वर्ष की

सेवा कर चुका हो, या (ख) राज्य निर्वाचन आयोग के रूप में उच्च न्यायालय के सेवारत या सेवानिवृत्त न्यायाधीश को नियुक्त करता है।

इसमें कि कोई भी अधिकारी, जो पेशन प्राप्त कर चुके हैं जैसा कि समय-समय पर राज्य सरकार द्वारा सुनिश्चित की जा सकती है, उनको निर्वाचन आयोग के रूप में नियुक्त नहीं किया जाएगा। निर्वाचन आयोग का पद छोड़ने के पश्चात् वह राज्य सरकार के तहत किसी भी आगे की नियुक्ति के लिए अयोग्य हो जाता है।

(ii) उप निर्वाचन आयोग-राज्य सरकार इस अधिनियम एवं नियमों के तहत, कर्तव्यों के निर्वहन में निर्वाचन आयोग की सहायता के लिए एक या एक से अधिक उप निर्वाचन आयोगों की नियुक्ति करती है, और साथ ही राज्य निर्वाचन आयोग के सचिव की नियुक्ति भी करती है।

(iii) अन्य निर्वाचन अधिकारी

(क) जिला निर्वाचन अधिकारी-प्रत्येक जिले के लिए एक जिला निर्वाचन अधिकारी होता है, जो राज्य निर्वाचन आयोग के अधीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण के अधीन होता है। जिला निर्वाचन अधिकारी जिले में सभी चुनाव भूमिकाओं की तैयारी, संशोधन और सुधारों की निगरानी करता है। जिला निर्वाचन अधिकारी ऐसे दूसरे कार्य भी करता है, जो उसे निर्वाचन आयोग के द्वारा सौंपे जाते हैं।

(ख) निर्वाचक पंजीकरण अधिकारी-प्रत्येक पंचायत या नगर पालिका के लिए 3 निर्वाचन नामावली को तैयार करने, और उसे संशोधित करने का कार्य निर्वाचक पंजीकरण अधिकारी द्वारा किया जाता है। एक निर्वाचक पंजीकरण अधिकारी पंचायतों या नगर पालिकाओं के लिए निर्वाचन नामावली तैयार करने और संशोधित करने के लिए व्यक्तियों को नियुक्त करता है।

(ग) रिटर्निंग अधिकारी-प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र में चुनाव के लिए एक पंचायत या नगर पालिका में एक सीट या एक से अधिक सीटें भरने के लिए, राज्य निर्वाचन आयोग राज्य सरकार के परामर्श से राज्य के अथवा स्थानीय प्राधिकरण के एक अधिकारी को रिटर्निंग अधिकारी नामित करता है, और एक अथवा एक से अधिक सहायक रिटर्निंग अधिकारियों को नियुक्त करता है।

(घ) मतदान केन्द्र और पीठासीन अधिकारी-प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र के लिए जिला निर्वाचन अधिकारी अपने अधिकार क्षेत्र में, पर्याप्त संख्या में मतदान केन्द्र प्रदान करता है, और साथ ही मतदान केन्द्रों को दर्शाने वाली एक सूची प्रकाशित करता है जिसमें मतदान केन्द्रों तथा मतदान क्षेत्रों या मतदाताओं के समूह की सूची होती है।

जिला निर्वाचन अधिकारी प्रत्येक मतदान केन्द्र के लिए एक पीठासीन अधिकारी नियुक्त करता है, और मतदान अधिकारी / अधिकारियों को नियुक्ति भी करता है, जितने वह आवश्यक समझता है। इस संदर्भ में, मतदान अधिकारी, पीठासीन अधिकारी के निर्देश के अनुसार कार्य करता है।

पीठासीन अधिकारी के कर्तव्य-किसी मतदान केन्द्र पर, पीठासीन अधिकारी यह सुनिश्चित करता है कि वहाँ व्यवस्था बनी रहे और चुनाव निष्पक्ष हों, तथा मतदान अधिकारी पीठासीन अधिकारी को कार्य-निष्पादन में सहायता करता है।

राज्य निर्वाचन आयोग की शक्तियाँ

राज्य निर्वाचन आयोग के उपरोक्त सूचीबद्ध कार्यों के अलावा, इसे सामान्यतः अपने कर्तव्यों के निर्वहन के लिए कुछ शक्तियों का प्रयोग करने का भी अधिकार होता है। उदाहरण के लिए, पंजाब राज्य निर्वाचन आयोग निम्नलिखित शक्तियाँ प्रदान करता है।

सिविल कोर्ट के रूप में निर्वाचन आयोग की शक्तियाँ

एक जाँच के लिए निर्वाचन आयोग के पास निम्नलिखित मामलों के संबंध में, एक सिविल कोर्ट की शक्ति है:

(i) किसी व्यक्ति को बुलावा भेजना तथा उसकी उपस्थिति को बाध्य करना, और शपथ दिलाकर उसकी जाँच करना।

(ii) साक्ष्य के रूप में, किसी भी दस्तावेज या अन्य सामग्री की खोज या प्रस्तुतीकरण की आवश्यकता।

(iii) किसी भी अदालत या कार्यालय से सार्वजनिक रिकार्ड या उसकी प्रति का अनुरोध करना।

(iv) शपथ पत्रों पर साक्ष्य प्राप्त करना।

(v) गवाह या दस्तावेजों की जाँच के लिए आदेश जारी करना।

इसके अतिरिक्त, राज्य निर्वाचन आयोग के पास यह शक्ति भी है कि वह किसी भी व्यक्ति को, कानून के तहत मिले विशेषाधिकार के अधीन बिन्दुओं या ऐसे मामले पर जानकारी देने के लिए कह सकता है जो जाँच के विषय के लिए उपयोगी या प्रासंगिक हों।

निर्वाचन आयोग को एक सिविल न्यायालय माना जाता है और यदि कोई अपराध निर्वाचन आयोग की दृष्टि में आता है जैसा कि भारतीय दंड संहिता 1860 की धारा 175, धारा 178, धारा 179, धारा 180 या 228 में वर्णित है, तो निर्वाचन आयोग स्टल अपराध दर्ज करके और अभियुक्तों के बयान दर्ज करने के बाद, मामले को उस मजिस्ट्रेट के पास भेजता है, जिसका अधिकार क्षेत्र होता है।

नियम बनाने की शक्ति

निर्वाचन आयोग के साथ परामर्श करने के बाद राज्य सरकार, सरकारी / शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, उद्देश्यों को पूरा करने के लिए निम्नलिखित से संबंधित नियम बनाती है:

(i) मतदान केन्द्रों पर पीठासीन अधिकारियों और मतदान अधिकारियों के कार्य।

(ii) निर्वाचक नामावली के संदर्भ में मतदाताओं की जाँच।

(iii) निर्वाचन क्षेत्र में मत देने का तरीका।

(iv) किसी व्यक्ति द्वारा अपने आपको एक मतदाता के रूप में वोट देने के लिए पीछा करने के मामले में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया।

(v) वोटिंग मशीनों के माध्यम से मत देने और रिकॉर्ड करने का तरीका, और मतदान केन्द्र पर अपनाई जाने वाली प्रक्रिया जहाँ ऐसी मशीनों का उपयोग किया जाएगा। न) चुनाव के परिणाम की घोषणा से पहले सुरक्षा और मतगणना।

(vii) वोटिंग मशीन के माध्यम से रिकॉर्ड किए गए वोटों की गिनती की प्रक्रिया।

(viii) निर्धारित समय-सीमा के अन्तर्गत बैलेट बॉक्स, वोटिंग मशीन, बैलेट पेपर और अन्य आवश्यक पेपरों की सुरक्षित अभिरक्षा, जिसके लिए कामजात संरक्षित किए जाएंगे, और ऐसे कामजातों का निरीक्षण और निर्माण।

(ix) वह स्थान, दिनांक और समय जिस पर दावे या आपत्तियां सुनी जाएंगी, और तरीके जिनके अन्तर्गत दावे या आपत्तियां सुनी जाएंगी और उनका निस्तारण किया जाएगा।

(x) निर्वाचन क्षेत्रों के लिए, निर्वाचक नामावली का अंतिम प्रकाशन।

(xi) चुनाव एजेंट, चुनाव का खर्च आदि।

(x) राज्य निर्वाचन आयोग के मुख्य कार्य

प्रश्न 4. राज्य निर्वाचन आयोग के मुख्य कार्य का उल्लेख कीजिए।

उत्तर- राज्य निर्वाचन आयोग के कार्य

इससे पहले कि हम राज्य निर्वाचन आयोग के कार्यों का विवेचन करें केन्द्र में निर्वाचन आयोग के कार्यों को समझना उचित होगा। यह कार्य संविधान के अनुच्छेद 324-329 में रेखांकित हैं।

(i) चुनाव आयोग देश में चुनावों का पर्यवेक्षण, निर्देशन, नियंत्रण और संचालन करता है। देश में स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव कराने की जिम्मेदारी आयोग की है।

(ii) यह लोक सभा के प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र की मतदाता सूची तैयार करता है और ऐसे ही राज्य विधान सभा की भी तैयार करता है। मतदाता सूची को संशोधित किया जाता है और हर चुनाव से पहले और हर जनगणना के बाद तैयार किया

(iii) जब भी चुनाव होने होते हैं तो यह लोक सभा और राज्य विधान सभाओं के लिए चुनाव आयोजित करता है। यह उप चुनाव भी आयोजित करता है। यह जहाँ भी विधान परिषद (राज्य विधान मंडल का ऊपरी सदन) मौजूद है, उसके लिए चुनाव कराने के लिए जिम्मेदार है। यह हर दो साल के बाद राज्य सभा का चुनाव भी कराता है क्योंकि राज्य सभा के 1/3 सदस्य हर दो साल के बाद सेवानिवृत्त होते हैं।

(iv) यह भारत के राष्ट्रपति और उप-राष्ट्रपति के चुनाव का आयोजन करता है। यह मतदाता सूची तैयार करता है, निर्वाचक मंडल के प्रत्येक मतदाता के वेटेज और मूल्य के साथ-साथ चुनाव जीतने के लिए आवश्यक मतों का कोटा निर्धारित करता है।

(v) चुनाव का संचालन करने के लिए निर्वाचन आयोग केन्द्र के साथ-साथ राज्यों से भी आवश्यक व्यक्तियों की सेवाओं की माँग कर सकता है। इन अधिकारियों में से, आयोग रिटर्निंग अधिकारियों, पीठासीन अधिकारियों और अन्य मतदान अधिकारियों की नियुक्ति करता है।

(vi) आम चुनाव के बाद, निर्वाचन आयोग राजनीतिक दलों को मान्यता प्रदान करता है- चाहे दल राष्ट्रीय स्तर का हो या राज्य स्तर का हो।

(vii) चुनाव को निष्पक्ष और स्वतंत्र तरीके से कराने के लिए, निर्वाचन आयोग चुनाव की आचार संहिता का निर्धारण और घोषणा करता है।

(viii) आयोग निर्दलीय उम्मीदवारों को चुनाव चिन्ह भी प्रदान करता है।

केन्द्रीय स्तर पर निर्वाचन आयोग की भूमिका और कार्यों की स्पष्ट जानकारी के पश्चात् अब हम राज्य योजना आयोग के कार्यों की व्याख्या करेंगे।

प्रत्येक राज्य में राज्य निर्वाचन आयोग का गठन स्थानीय निकायों के लिए स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव कराने के लिये किया गया है। इस प्रयोजन के लिए आयोग को बड़ी संख्या में कार्य करने और उनसे सम्बन्धित गतिविधियों को आरंभ करने की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए गुजरात में राज्य निर्वाचन आयोग का कार्य स्थानीय निकायों के नियमों के अनुसार वार्ड / चुनाव डिवीजन की तैयारी से सम्बन्धित गतिविधियों सीमाओं का निर्णय ग्राम पंचायत, ताल्लुका एवं जिला पंचायत / नगर पालिका और नगर निगम जैसे स्थानीय निकायों के लिए मतदाता सूची तैयार करने के साथ सीटों का वितरण करना, और सामान्य / मध्यावधि / उपचुनाव का संचालन और देखरेख भी करना। इन्हीं कार्यों के निर्वहन के लिए अनुच्छेद 243K के तहत राज्य निर्वाचन आयोग को स्थानीय निकायों के चुनावों के अधीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण का अधिकार दिया गया है। अब हम अधिकांश राज्यों में, राज्य निर्वाचन आयोग के कार्यों के बारे में विस्तार से विवेचन करेंगे।

(i) निर्वाचक नामावली तैयार करना-प्रत्येक पंचायत और नगर पालिका के लिए एक निर्वाचक नामावली होती है, जिसे निर्वाचन आयोग के अधीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण में तैयार किया जाता है। प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र के लिए निर्वाचक नामावली निर्धारित तरीके से तैयार की जाती है, और अधिनियम के तहत बनाए गए नियमों के अनुसार लागू होती है।

प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र के लिए निर्वाचक नामावली को

(क) प्रत्येक आम चुनाव से पहले; तथा

(ख) प्रत्येक उपचुनाव से पहले एक आकस्मिक रिक्ति को भरने के लिए संशोधित किया जाता है।

(ii) नामांकन के लिए तिथियों का चुनाव, आदि-जैसे ही किसी सदस्य या सदस्यों को निर्वाचित करने के लिए अधिसूचना जारी की जाती है, राज्य निर्वाचन आयोग निम्नलिखित की घोषणा करता है:

(क) नामांकन करने की अंतिम तिथि, जो पहले उल्लेखित अधिसूचना के प्रकाशन की तारीख के बाद सातवां दिन है, और यदि उस दिन सार्वजनिक अवकाश है, तो अगला वह दिन, जब सार्वजनिक अवकाश न हो,

(ख) चुनाव के लिए नामांकनों की जांच की तारीख,

(ग) उम्मीदवार द्वारा उम्मीदवारी वापस लेने की अंतिम तिथि,

(घ) वह तिथि जब कोई मतदान होना है; तथा

(ङ) वह तारीख, जिससे पहले चुनाव पूरा कराना है।

(iii) चुनाव की सार्वजनिक सूचना-एक अधिसूचना जारी करने पर रिटर्निंग अधिकारी होने वाले चुनाव की सार्वजनिक सूचना देता है, चुनाव के लिए उम्मीदवारों के नामांकन आमंत्रित करता है और उस स्थान को भी निर्दिष्ट करता है जहाँ नामांकन पत्र वितरित किये जाने हैं।

(iv) चुनाव के लिए उम्मीदवारों का नामांकन-किसी भी नागरिक को, यदि वह योग्य हो तो चुनाव के लिए उम्मीदवार के रूप में नामित किया जा सकता है।

(v) चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवारों की सूची का प्रकाशन-उम्मीदवारी वापस लेने की अवधि की समाप्ति के तुरन्त बाद, रिटर्निंग अधिकारी चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवारों की सूची

तैयार व प्रकाशित करता है, जिसमें वैध रूप से उन नामांकित उम्मीदवारों के नामों की सूची को शामिल किया जाता है, जिन्होंने निर्धारित अवधि के भीतर अपनी उम्मीदवारी वापस नहीं ली है। इस सूची में वर्णमाला के क्रम में नाम शामिल होते हैं, और चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवारों के पते भी उसी क्रम में शामिल किये जाते हैं जैसे अन्य विवरण के साथ नामांकन पत्र में भरे थे।

(vi) मतदान के लिए समय तय करना-राज्य निर्वाचन आयोग उन घंटों को सुनिश्चित करता है जिनके दौरान मतदान का संचालन होगा, और तय किए गए घंटे प्रकाशित किए जाते हैं। चुनाव मतदान के लिए, आबटित की गई कुल समय सीमा एक दिन के लिए, आठ घंटे से कम नहीं हो सकती।

(vii) आपात स्थिति में मतदान स्थगित करना-यदि किसी चुनाव में, किसी मतदान केंद्र पर कार्यवाही बाधित होती है या रोकी जाती है, तो संबंधित पीठासीन अधिकारी अपने अधिकार क्षेत्र में मतदान स्थगित करने की घोषणा कर सकता है।

(viii) मतों की गिनती-प्रत्येक पंचायत अथवा नगर पालिका के चुनाव के पश्चात् रिटर्निंग अधिकारी की देखरेख और निर्देशन में मतों की गिनती की जाती है।

प्रश्न 6. निर्वाचन न्यायाधिकरण का अर्थ स्पष्ट करते हुए कार्य एवं भूमिका पर प्रकाश डालिए।

निर्वाचन न्यायाधिकरण

उत्तर-

कुछ राज्यों ने निर्वाचन चुनाव संबंधी विवादों को सुलझाने के लिए राज्य स्तर पर एक न्यायाधिकरण निर्वाचन न्यायाधिकरण स्थापित करने का भी प्रावधान किया गया है। इस संबंध पंजाब में, राज्य सरकार द्वारा निर्वाचन आयोग की सलाह से प्रत्येक जिले या उसके किसी भाग के लिए, जिला या उप-मंडल मुख्यालय पर एक निर्वाचन न्यायाधिकरण का गठन करने का प्रावधान है। आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा राज्य सरकार, भारतीय प्रशासनिक सेवा या प्रांतीय सिविल सेवा के प्रथम श्रेणी / समूह के के अधिकारी, जिसके पास पर्याप्त प्रशासनिक, कानूनी या मजिस्ट्रियल अनुभव होता है, उसे चुनाव न्यायाधिकरण का पीठासीन अधिकारी नियुक्त करती है।

यह ध्यान देने योग्य है कि अधिनियम के प्रावधान के अनुसार प्रस्तुत चुनाव याचिका को छोड़कर किसी भी चुनाव पर प्रश्न नहीं किया जाता है। इस संबंध में केवल वह निर्वाचन न्यायाधिकरण, जिसका अधिकार क्षेत्र है, उसमें चुनाव की याचिकाओं पर निर्णय लेने की शक्ति होती है। चुनाव न्यायाधिकरण अपने विवेक से न्याय या सुविधा के लिए अपने निर्दिष्ट मुख्यालय के अलावा किसी अन्य स्थान पर पूर्ण या आंशिक रूप से चुनाव याचिका पर निर्णय लेने का प्रयास कर सकता है।

निर्वाचन न्यायाधिकरण के समक्ष प्रक्रिया

अधिनियम के प्रावधान के अधीन प्रत्येक चुनाव याचिका पर मुकदमों की सुनवाई के लिए चुनाव न्यायाधिकरण द्वारा जैसा कि हो सकता है नागरिक प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का केंद्रीय अधिनियम 5) के अन्तर्गत किया जाता है। निर्वाचन न्यायाधिकरण के पास किसी भी गवाह या गवाहों की जाँच करने के लिए लिखित में दर्ज किए जाने वाले प्रमाणों से इनकार करने का विवेक होगा, अगर यह राय है कि इस तरह के गवाह या गवाहों

के सबूत चुनाव के निर्णय के लिए भौतिक नहीं हैं। याचिका या यह कि इस तरह के गवाह या गवाह का पक्ष लेने वाली पार्टी चुनाव मैदान की कार्यवाही में देरी करने के लिए तुच्छ आधार पर या ऐसा कर रही है।

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (केंद्रीय अधिनियम, 1872) अधिनियम के प्रावधानों के अधीन, एक चुनाव याचिका की सुनवाई के लिए सभी मामलों में लागू करने के लिए समझा जाएगा। सबसे पहले, हम भ्रष्ट आचरण और चुनावी अपराधों पर चर्चा करेंगे, जो चुनावों के दौरान देखे जा सकते हैं।

भ्रष्ट आचरण और चुनावी अपराध

यहाँ यह भी उचित होगा, यदि हम चुनावों के दौरान सामान्य भ्रष्ट व्यवहारों को जाने और समझें। राज्य निर्वाचन आयोग अधिनियम (पंजाब) के तहत, निम्नलिखित को भ्रष्ट आचरण माना जाता है:

(I) रिश्वत

(i) किसी उम्मीदवार या उसके चुनाव एजेंट या उसकी सहमति से किसी भी व्यक्ति को उपहार की पेशकश या वादा, जो वस्तु के साथ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से किसी भी व्यक्ति को उपहार देकर निम्नलिखित के लिए उत्प्रेरित करना:

(क) एक व्यक्ति को चुनाव में उम्मीदवार के रूप में खड़े होने या खड़े न होने के लिए, या

(ख) मतदाता मतदान करने या मतदान करने से परहेज़ करता है, विशेषकर चुनाव पुरस्कार के लिए

● एक नागरिक जो चुनाव में उम्मीदवार के रूप में खड़ा होता है या नहीं खड़ा होता है, या उम्मीदवारी वापस लेता है, या उसकी उम्मीदवारी वापस नहीं लेता अथवा

● मतदान करता है या मतदान नहीं करता है।

(ii) रसीद या सहमति से प्राप्त की गई, कोई सन्तुष्टि, चाहे वह स्वाभाविक या इनाम के लिए,

(क) एक व्यक्ति द्वारा, उम्मीदवार के रूप में खड़े होने या उम्मीदवार होने से पीछे हटने के लिए, या

(ख) किसी व्यक्ति द्वारा स्वयं के लिए मतदान करने या मतदान करने से बचने के लिए, या किसी मतदाता को मतदान लिए प्रेरित करने या मतदान करने से बचने के लिए, या किसी भी उम्मीदवार को उसकी उम्मीदवारी वापस लेने के लिए।

(II) किसी भी चुनावी अधिकार का उपयोग करते हुए, किसी भी प्रकार का उम्मीदवार या उसके चुनाव एजेंट का हस्तक्षेप या हस्तक्षेप करने के प्रयास का अवांछित प्रभाव। इस संबंध में, अधिनियम के अनुसार:

(i) इस उपबंध के प्रावधानों का बिना पक्षपात किए, ऐसा कोई भी व्यक्ति जो

(क) किसी भी उम्मीदवार या किसी भी निर्वाचक को, किसी भी प्रकार की चोट जिसमें किसी भी जाति या समुदाय से सामाजिक बहिष्कार और पूर्व-संचार या निष्कासन की धमकी देता है; या

(ख) एक उम्मीदवार या मतदाता को यह विश्वास दिलाने के लिए प्रेरित करता है कि वह दिव्य नाराज़गी या आध्यात्मिक रूप से निन्दा का भागी माना जाएगा या बनेगा, और

(ii) लोक नीति की घोषणा सार्वजनिक कार्रवाई का वादा या चुनावी अधिकार के साथ हस्तक्षेप करने के उद्देश्य के बिना कानूनी अधिकार का मात्र प्रयोग, हस्तक्षेप नहीं माना जाएगा।

(iii) किसी उम्मीदवार या उसके एजेंट द्वारा उम्मीदवार की सहमति से धर्म, वंश, जाति, समुदाय या भाषा के आधार पर मतदान करने या मतदान करने से परहेज करने की अपील करना या उस उम्मीदवार के चुनाव की संभावनाओं को बढ़ाने के लिए, राष्ट्रीय चुनाव विनियमों, जैसे राष्ट्रीय ध्वज या धार्मिक प्रतीकों का उपयोग करना या करने की अपील करना।

(iv) अपने चुनाव की संभावनाओं को बढ़ाने के लिए, यदि कोई उम्मीदवार या उसका एजेंट या उम्मीदवार की सहमति से कोई अन्य व्यक्ति या उसका चुनाव एजेंट धर्म, वंश, जाति समुदाय या भाषा के आधार पर भारत के नागरिकों के विभिन्न वर्गों के बीच दुश्मनी या घृणा की भावना को बढ़ावा देने का प्रयास करे।

(v) अपने चुनाव की संभावनाओं को बढ़ाने के लिए, यदि कोई उम्मीदवार या उसका एजेंट या उम्मीदवार की सहमति से 'सती' प्रथा का प्रचार या महिमामंडन करने का प्रयास करे। इस अर्थ के प्रयोजनों के स्पष्टीकरण के तौर पर, सती के सम्बन्ध में 'सती' या 'महिमामंडन' का अर्थ सती (निवारण) अधिनियम, 1987 में दिया गया है।

(vi) यदि किसी उम्मीदवार के व्यक्तिगत चरित्र या आचरण के सम्बन्ध में किसी भी उम्मीदवार की उम्मीदवारी या उम्मीदवारी वापसी के संबंध में कोई तथ्य प्रकाशित किया जाता है जो कि गलत है तथा वह गलत मानता है तो इस बयान की गणना उम्मीदवार की चुनाव की संभावनाओं को हानि पहुँचाने के रूप में की जाएगी।

(vii) किसी उम्मीदवार या उसके एजेंट द्वारा उम्मीदवारी की सहमति से किसी वाहन का उपयोग चाहे भुगतान करके या फिर बिना भुगतान के निर्वाचक के अतिरिक्त, स्वयं उम्मीदवार, उसके परिवार के सदस्यों या उसके एजेंट द्वारा मुफ्त सुविधा के लिए ऐसे वाहनों का मतदान केंद्र पर जाने या आने के लिए उपयोग। एक निर्वाचक द्वारा या कई निर्वाचकों द्वारा किसी वाहन या पोट को अपने संयुक्त लागत पर किसी ऐसे मतदान केंद्र या चुनावी क्षेत्रों से चुनाव के उद्देश्य से आने या जाने के लिए उपयोग में लाये जाये तो इसे भ्रष्ट आचरण नहीं माना जाता, यदि वाहन या जहाज जिसे किराए पर लिया जाता है, वह यांत्रिक शक्ति द्वारा संचालित नहीं किया जाता है। इस तरह के किसी भी मतदान केंद्र या स्थान से आने या जाने के लिए किसी भी सार्वजनिक परिवहन वाहन या जहाज या किसी भी ट्रेन्चर या रेलवे गाड़ी का उपयोग किसी भी निर्वाचक द्वारा अपनी लागत से प्रयोग करता है तो इसके तहत भ्रष्ट आचरण नहीं माना जाता है।

(viii) किसी उम्मीदवार या उसके एजेंट द्वारा उम्मीदवार की सहमति से उम्मीदवार के चुनाव की संभावनाओं को बढ़ाने के लिए किसी भी व्यक्ति से जो सेवा में है, कुछ प्राप्त करने या खरीदने या प्राप्त करने का प्रयास, उस उम्मीदवार के संभावनाओं को बढ़ाने के लिए वोट देने के अतिरिक्त अन्य कोई भी सहायता।

(ix) उम्मीदवार या उसके एजेंट द्वारा बूथ कैचरिंग के केस में, 'एजेंट' से तात्पर्य एक चुनाव एजेंट से है, एक पोलिंग एजेंट जो उम्मीदवार की सहमति के साथ चुनाव के संबंध में एक एजेंट के रूप में काम करता है। ए. व्यक्ति यदि चुनाव में उम्मीदवार की संभावनाओं को बढ़ाने के लिए सहायता करता है, तो उसे उम्मीदवार का चुनाव एजेंट समझा जाएगा।

वर्गों के बीच शत्रुता को बढ़ावा देना

कोई भी व्यक्ति जो चुनाव के सिलसिले में धर्म, वंश, जाति, भाषा आदि के आधार पर प्रचार और प्रयास करता है, विभिन्न वर्गों के नागरिकों के बीच दुश्मनी या नफरत की भावना फैलाये तो यह एक दंडनीय अपराध है। जिससे तीन साल का कारावास या जुर्माना या दोनों हो सकता है।

यदि निर्वाचन न्यायाधिकरण का निर्णय किसी अन्य कानून में निहित नहीं है तो इस केस में किसी भी प्रश्न पर उच्च न्यायालय में अपील की जा सकती है, चाहे वह निर्वाचन न्यायाधिकरण के आदेश से संबंधित कानून अथवा तथ्य से संबंधित हो।

प्रश्न 7. चुनाव आयोग की निष्पक्ष चुनाव कराये जाने की दिशा में क्या कदम उठाए हैं? वर्णन कीजिए।

उत्तर- आधुनिकीकरण एवं निष्पक्ष चुनाव की दिशा में पहल

1. चुनावों में धन के बढ़ते प्रभाव को रोकने के लिए चुनाव आयोग ने आयकर विभाग के भारतीय राजस्व सेवा अधिकारियों को सभी चुनावों के लिए चुनाव पर्यवेक्षक के रूप में नियुक्त किया है। एक निश्चित धनराशि तय की गई है, जिसे एक उम्मीदवार चुनाव अभियानों के दौरान खर्च कर सकते हैं। इन सीमाओं को समय के साथ-साथ संपोषित किया जाता है। चुनाव आयोग, भारतीय राजस्व सेवा से व्यय पर्यवेक्षकों को नियुक्त करके व्यक्तिगत चुनाव व्यय के लेखा-जोखा पर दृष्टि रखता है। आयोग नामांकन पत्र जमा करते समय पथपत्र पर उम्मीदवार की संपत्ति का विवरण लेता है और उसे परिणामों की घोषणा होने पर 30 दिनों के भीतर अपने व्यय का विवरण देना होता है। लोकसभा और विधानसभा चुनावों के लिए आयोग द्वारा अभियान की अवधि को भी 21 से घटाकर 14 दिन का कर दिया गया है। यह चुनाव व्यय में कटौती करने के लिए किया गया है।

2. चुनाव आयोग ने इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन अर्थात् ई.वी.एम. के द्वारा चुनाव प्रक्रियाओं में सुधार किया है। ई.वी.एम. पहली बार 1982 के विधानसभा चुनावों के लिए केरल राज्य में एक प्रयोगात्मक आधार पर अपनाया गया था। सफल परीक्षण और कानूनी जाँचों के बाद, आयोग ने इन वोटिंग मशीनों के उपयोग के साथ चुनाव कराने का निर्णय लिया। ईवीएम पर उम्मीदवारों की फोटो के साथ फोटो मतदाता सूची बनाने की पहल बिहार विधान सभा चुनाव 2015 में की गई थी।

3. चुनावी धोखाधड़ी को रोकने के प्रयासों 1993 में मतदाता फोटो पहचान पत्र चालू किए गए, जो 2004 के चुनावों में अनिवार्य हो गए। हालाँकि, कुछ स्थितियों में, चुनाव के प्रयोजनों के लिए राशनकार्ड की अनुमति दी गई है।

4. चुनावों की सटीक जानकारी, प्रबंधन, प्रशासन, और तात्कालिक परिणाम प्रदान करने के लिए चुनाव आयोग ने फरवरी 28, 1998 को अपनी वेब साइट प्रारम्भ की। यह वेबसाइट सभी उपयोगकर्ताओं के लिए सुलभ है। इसे उपयोगकर्ताओं के लिए अधिकतम पहुँच और उपयोगिता प्रदान करने के उद्देश्य से बनाया गया है। यह सुनिश्चित किया गया है कि पोर्टल पर सभी जानकारी विकलांग लोगों के लिए भी सुलभ है। उदाहरण के लिए, दृश्य विकलांगता वाला एक उपयोगकर्ता सहायक तकनीकों का उपयोग करके इस पोर्टल तक पहुँच सकता है, जैसे कि, स्क्रीन रीडर और मैग्नीफायर। चुनाव आयोग का उद्देश्य मानकों

114 / उज्ज्वल नोदस भाइन्स इन्टरप्राइज प्रा. लि.
का अनुपालन करना और सार्वभौमिक डिजाइन व उपयोगिता के सिद्धान्तों का पालन करना है, जिससे इस पोर्टल के सभी आगंतुकों को सहायता मिल सके। की पालन करना है, जिससे इस पोर्टल के सभी /
जिन्होंने 1998 में आयोजन ने मतदाता सूची के कम्प्यूटरीकरण के लिए एक कार्यक्रम पर

निर्णय लिया। शिक्षा एवं निर्वाचक सहभागिता कार्यक्रम (एस.वी. ई.

5. 1998 में जिला शिक्षा एवं निर्वाचक सहभागिता कार्यक्रम (एस.बी. ई. निर्णय 1998)

6. सुदृढस्थित मतदाता शिक्षा एवं निर्वाचक सहभागिता कार्यक्रम (एस.बी. ई. निर्णय 1998)

7. जिस 2009 से चुनाव आयोग के एक प्रमुख कार्यक्रम के रूप से आयोजित किया गया है। इसका उद्देश्य सभी पात्र नागरिकों को मतदान के लिए प्रोत्साहित करना तथा मतदान के समय एक सुचित निर्णय लेने के लिए प्रोत्साहित करना है। यह कार्यक्रम नियन्त्रित हस्तक्षेपों पर आधारित है। यह राज्य के पिछले दौरो में चुनावी दरी के इतिहास और जनसांख्यिकीय प्रालेखों के साथ-साथ चुनावों के विप्लवे दौरो में चुनावी दरी के इतिहास और उत्तरे सीख पर आधारित है। एस.बी.ई.ई.पी. मतदाता शिक्षा, मतदाता जागरूकता के प्रयास, और मतदाता साक्षरता को बढ़ावा देने के लिए है।

8. यह लोकसभा क्षेत्रों के आम चुनावों में वोटर वेरिफाइड पेपर ऑडिट टूल (VVPAT) के उपयोग को बढ़ावा देने के लिए है।

7. 2014 में आठ लोकसभा क्षेत्रों के आम चुनावों में वोटर वेरिफाइड पेपर ऑडिट ट्रेल (VVPAT) का प्रारम्भ चुनाव आयोग के लिए एक बड़ी उपलब्धि थी। इस वी.वी.पी.ए.टी. (VVPAT) का प्रारम्भ चुनाव आयोग के साथ सितंबर 2013 में नागालैंड में नोकसेन विधानसभा प्रणाली का पहली बार ईवीएम के साथ सितंबर 2013 से देश के सभी विधानसभा निर्वाचन क्षेत्र में प्रयोग किया गया और अंततः सितंबर 2013 से देश के सभी विधानसभा चुनावों में ईवीएम के साथ प्रयोग किया गया। यह स्थापित करता है कि मतदाता द्वारा ईचिज्ज वोट उसके द्वारा एक विशेष राजनीतिक पार्टी को दिया गया है। यदि ईवीएम और वीवीपीटी परियों के बीच उम्मीदवारों के मतगणना के परिणामों में बड़ा अन्तर पाया जाता है, तब वी.वी.पी.ए.टी. पर्यी की पुनः गणना की जाती है। और फिर कोई संघर्ष होने पर वी.वी.पी.ए.टी. परियों के अनुसार मतगणना को अंतिम माना जाता है।

8. चुनाव आयोग के पास एक ओर इ.वी.एम. के साथ वी.वी.पी.ए.टी. तथा दूसरी ओर राजनीतिक दलों के प्रतिनिधि व चुनाव अधिकारियों के मध्य अंतरापृष्ठ और अन्योन्यक्रिया का एक सुदृष्ट, व्यवस्थित, और संस्थागत ढाँचा है। इस प्रकार सभी हितधारकों के इ.वी.एम. व वी.वी.पी.ए.टी. में अनिवार्य भागीदारी से सम्पूर्ण चुनाव प्रणाली पूर्ण रूप से पारदर्शी हो जाती है, और मशीनों के साथ किसी भी प्रकार से छेड़खानी समाप्त हो जाती है।

9. 2014 में NOTA को भी जोड़ा गया था जो वोटिंग मशीनों पर एक विकल्प की तरह था, और अब किसी भी चुनाव में इस विकल्प को प्रदान किया जाना अनिवार्य है।

परन्तु, चुनाव आयोग के कामकाज में स्वतंत्रता और निष्पक्षता एक सपने की बिल्कुल तरह है। पहली बात तो यह है कि भारत का संविधान सीईसी की योग्यता और कार्यकाल के बारे में कुछ नहीं कहता है। इस संबंध में प्रत्येक मामले को राष्ट्रपति के पास छोड़ दिया गया है, जिन्हें संसद द्वारा अधिनियमित कानून के प्रावधानों द्वारा निर्देशित किया गया है। इससे राजनीतिक आधार पर किसी व्यक्ति की नियुक्ति हो सकती है। इनकी नियुक्ति के लिए गोस्वामी रिपोर्ट के अनुसार, एक पैलत होना चाहिए, जिसमें सदस्यों के रूप में प्रधानमंत्री, विपक्ष का नेता, लोकसभा अध्यक्ष, और भारत के मुख्य न्यायाधीश होने चाहिए।

दूसरा, सीईसी, हालांकि निष्पक्ष रूप से चुनाव कराने का वाखूबी निभाता है लेकिन फिर भी उसे अपने कर्मचारियों की सेवा से संबंधित शक्तों को नियुक्त और विनियमित करने का अधिकार नहीं है। यह अधिकार सर्वोच्च न्यायालय और संघ लोक सेवा आयोग जैसे समान निकायों के लिए उपलब्ध है।

लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन (ई.वी.एम.) पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिए।

प्रश्न 1. इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन (ई.वी.एम.) पर सावधानीपूर्वक जाँच के बाद
उत्तर-चुनाव आयोग ने स्वतंत्रता और निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित करने के लिए डेडलाइन से
मुक्त इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनों का प्रयोग शुरू किया है। प्रत्येक मशीन में एक क्षेत्र के सभी
उम्मीदवारों के नाम और मशीन चिह्न होते हैं। एक मशीन में अधिकतम 16 उम्मीदवारों के नाम
आ सकते हैं। यदि संख्या 16 से बढ़ जाए तो एक से अधिक मशीनों का प्रयोग किया जा
सकता है। यदि उम्मीदवारों की संख्या बहुत अधिक हो तो मतपत्र का प्रयोग किया जा सकता
है। मतदान को अपनी पसंद के उम्मीदवार को मत देने के लिए उचित बटन दबाना होता है।
जैसे ही बटन दबाया जाता है मशीन उसके बाद अपने आप बंद हो जाती है। तब दूसरे
मतदाता की बारी आती है। मशीन द्वारा काम करवाना आसान है और इसके प्रयोग से मत
पत्रों तथा मत पेठियों का प्रयोग नहीं किया जाता है। अब गिनती करना बहुत आसान और
तेज होता है। 1999 में दिल्ली लोकसभा की सातों सीटों के चुनाव के लिए वोटिंग मशीनों का
प्रयोग किया गया और बाद में विधान सभा के चुनाव में भी इसका प्रयोग किया गया। 2004
में लोक सभा चुनावों में पूरे देश में इलेक्ट्रॉनिक मशीनों का प्रयोग किया गया था। सील की
गई मतपेटियों अथवा मशीनों को समुचित सुरक्षा के बीच मतगणना केन्द्रों पर लाया जाता है।
मतगणना रिटर्निंग अधिकारी की देखरेख में तथा उम्मीदवार अथवा उसके एजेंट की
उपस्थिति में की जाती है। यदि किसी मत पर अथवा उसकी वैधता पर कोई संदेह हो तो
रिटर्निंग अधिकारी का निर्णय अन्तिम माना जाता है। जैसे ही गिनती पूरी होती है तो सबसे
अधिक मत प्राप्त करने वाले उम्मीदवार को रिटर्निंग अधिकारी निर्वाचित घोषित करता है।

पुनर्मतदान-यदि मतदान के समय किसी मतदान केन्द्र पर असामाजिक तत्व कब्जा कर लेते हैं तो चुनाव आयोग पूरे क्षेत्र अथवा कुछ मतदान केन्द्रों पर पुनर्मतदान के आदेश कर सकता है।

चुनाव रद्द करना: यदि किसी मान्यता प्राप्त राजनीतिक दल के सही ढंग से नामांकित उम्मीदवार की नामांकन की अन्तिम तिथि के बाद और मतदान शुरू होने से पूर्व मृत्यु हो जाती है तो चुनाव आयोग चुनाव रद्द करने के आदेश देता है। यह केवल चुनाव स्थगन ही नहीं होता अपितु सम्बन्धित क्षेत्र के लिए पूरी चुनावी प्रक्रिया नामांकन से लेकर मतदान तक नए सिरे से दोहराई जाती है।

प्रश्न 2. भारतीय चुनाव प्रक्रिया के दोष (कमियां) क्या हैं?

उत्तर-भारतीय चुनाव प्रक्रिया की दुनिया भर में प्रशंसा हुई है। जिस तरह से भारत में चुनाव कराए जाते हैं उसकी लोगों ने सराहना की है। लेकिन इस प्रक्रिया को अपनी कुछ कमियाँ भी हैं। यह देखा गया है कि स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित करने के लिए चुनाव आयोग के प्रयासों के बावजूद हमारी चुनाव प्रक्रिया में कुछ त्रुटियाँ हैं। कुछ उल्लेखनीय त्रुटियों पर नीचे चर्चा की गई है।

धन-बल

चुनावों में बेहिसाब पैसों की भूमिका एक गंभीर समस्या बन गई है। राजनीतिक दल कम्पनियों और व्यापारियों से पैसा एकत्रित करते हैं और फिर इस पैसे को मतदाताओं को अपने पक्ष में करने के लिए प्रयोग करते हैं। व्यापारियों का योगदान अधिकतर नकद और हिंसा-किताब से बाहर होता है। चुनाव के दौरान अन्य कई भ्रष्ट तरीके जैसे रिश्वत देना, बेईमानी अथवा वोटों को डराना-धमकाना, जाली वोट डलवाना तथा मतदाताओं को मतदान केन्द्र तक लाने तथा वापस ले जाने के लिए परिवहन और अन्य साथ न मुहैया कराना आदि भी अपनाए जाते हैं। चुनाव के दौरान गरीब इलाकों में शराब बांटने की सूचनाएं आम बात हैं।

बाहु-बल

पहले अपराधी बंदूक की नोक पर मतदाताओं को डरा-धमका कर उनसे अपनी इच्छानुसार वोट डलवाकर उम्मीदवारों को सहयोग दिया करते थे। अब वे स्वयं चुनाव लड़ने के द्वारा खुलकर सामने आ गए हैं जिससे राजनीति का अपराधीकरण हुआ है। परिणामस्वरूप चुनावों के दौरान हिंसा की घटनाओं में वृद्धि हुई है।

जाति और धर्म

प्रायः राजनीतिक दल उम्मीदवारों को इस विचार के बाद टिकट देते हैं कि क्या वह संख्या की दृष्टि से बड़ी जातियों और समुदायों के वोट और सहयोग प्राप्त कर सकता है तथा क्या उसके पास पर्याप्त संसाधन हैं। मतदाता भी जातीय और साम्प्रदायिक आधार पर मतदान करते हैं। प्रचार अभियान में लोगों की साम्प्रदायिक निष्ठा का प्रयोग किया जाता है।

सरकारी मशीनरी का दुरुपयोग

सभी राजनीतिक दलों के पास संसाधनों तक पहुंचने के समान अवसर नहीं होते। सत्तारूढ़ दल सदैव विपक्षी दल से बेहतर स्थिति में होता है। आमतौर पर यह आरोप लगता है कि सत्तासीन दल सरकारी मशीनरी का दुरुपयोग करने से नहीं हिचकिचाते।

इन सब कारणों से हिंसा, मतकेन्द्रों पर कब्जा करना, बेईमानी, जाली मतदान, मतपत्रों, मतपेटियों को बलात् छीन ले जाना, वाहनों को आग लगा देने जैसी घटनाएं होती हैं जिसके फलस्वरूप लोगों का चुनावों पर से विश्वास कम होता जा रहा है।

प्रश्न 3. चुनाव सुधार पर संक्षिप्त लेख लिखिए।

उत्तर-लोकतांत्रिक चुनावी प्रक्रिया में जनता के विश्वास को पुनर्स्थापित करने के लिए क्रमशः 1974 और 1990 में विशेष रूप से चुनाव सुधारों की योजना का अध्ययन और सिफारिश करने के लिए नियुक्त की गई तारकुण्डे समिति द्वारा अनेक सुधारों की सिफारिश की गई है। इन सिफारिशों में से को कुछ लागू भी किया जा चुका है। वास्तव में यह उस समय के मुख्य चुनाव आयुक्त टी. आर. शेषन की अध्यक्षता में चुनाव आयोग ने स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव करवाने के लिए कई नए उपायों को अपनाया। अब तक लागू किए गए कुछ सुधार निम्नलिखित हैं-

(क) मतदान की आयु 21 वर्ष से घटाकर 18 वर्ष कर दी गई है। इससे वोटों की संख्या में वृद्धि तथा देश के युवाओं में विश्वास प्रकट किया गया है।

(ख) चुनावों को गंभीरता से न लेने वाले कई उम्मीदवारों को चुनाव लड़ने से रोकने के लिए सुरक्षा राशि को बढ़ा देना एक अन्य बड़ा परिवर्तन है।

(ग) जाली मतदान और बोगस मतदान के उन्मूलन के लिए फोटो पहचान पत्र शुरू किए गए हैं।

(घ) इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन का प्रयोग शुरू होने से मतदान केन्द्रों पर कब्जा, हेराफेरी और जाली मतदान सम्भव नहीं हो सकेगा। ई.वी.एम. के प्रयोग से कुछ समय बाद चुनाव करवाने के खर्च कम करने तथा गिनती के समय बेईमानी की घटनाएं भी कम होंगी।

(ङ) कुल डाले गए मतों की संख्या तथा गिने गए मतों की संख्या में अंतर मिलने पर रिटर्निंग अधिकारी सीधे चुनाव आयोग को सूचना दे सकता है। ऐसी रिपोर्ट मिलने पर चुनाव आयोग किसी विशेष मतदान केन्द्र पर हुए चुनाव को अवैध घोषित कर सकता है और नए चुनाव की तिथि निश्चित कर सकता है अथवा उस पूरे चुनाव क्षेत्र का चुनाव रद्द कर सकता है।

प्रश्न 4. राज्य निर्वाचन आयोग की भूमिका पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिए।

उत्तर-73वें और 74वें संवैधानिक संशोधन अधिनियमों के अनुसार, राज्य निर्वाचन आयोग स्थापित किये गए और यह देश के आधारभूत स्तर के लोकतंत्र को सुदृढ़ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। यह केन्द्रीय निर्वाचन आयोग के समान पैटर्न पर कामकाज कर रहे हैं, तथा स्थानीय निकायों के स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावों के संचालन के लिए इनमें लगभग समान शक्तियाँ प्रदत्त हैं। इस संबंध में, राज्य निर्वाचन आयोग विभिन्न प्रकार के कार्य और भूमिका निभा रहे हैं। इनकी भूमिका को नियामक प्रशासनिक तथा अर्ध-न्यायिक श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

राज्य वित्त आयोग की नियामक भूमिका पहले ही सूचीबद्ध किये गये कार्यों से स्पष्ट हो जाती है। वार्ड या क्षेत्रीय निर्वाचन क्षेत्रों, चुनाव चिन्हों, निर्वाचक नामावलियों, चुनाव खर्ची आदि के परिसीमन को नियंत्रित और विनियमित करने की इनकी शक्ति महत्वपूर्ण नियामक कार्य है, जो किसी भी चुनाव के सुचारु संचालन के लिए आवश्यक हैं। चुनावों के संचालन के लिए, अपने कर्मचारियों और स्थानीय स्तर पर अन्य विभागों के कर्मचारियों की मदद से बड़ी संख्या में प्रारंभिक कार्यों को करने की आवश्यकता होती है। इसमें राज्य निर्वाचन आयोग द्वारा किए जाने वाले विभिन्न प्रकार के प्रशासनिक और नियमित कार्य सम्मिलित हैं। साथ ही, राज्य निर्वाचन आयोग को चुनाव प्रक्रिया के दौरान कुछ अर्ध-न्यायिक कार्य भी करने होते हैं। वास्तव में, किसी भी चुनाव प्रक्रिया में कुछ विवादों का एक या अन्य पक्षों द्वारा उठाये जाने की संभावना होती है। चुनाव परिणामों को समयबद्ध तरीके से घोषित करने के लिए, राज्य निर्वाचन आयोग को चुनाव याचिकाओं या अपीलों आदि को निपटाने की शक्ति प्राप्त होती है। अनुच्छेद 243 (0) के प्रावधानों के अनुसार, न्यायालयों द्वारा हस्तक्षेप निर्दिष्ट किये गये हैं, हालांकि यदि कोई त्रुटि या अधिकार क्षेत्र का विवाद हो या किसी संवैधानिक प्रावधान का उल्लंघन हुआ हो तो राज्य निर्वाचन आयोग के निर्णय के विरुद्ध न्यायालय में अपील की जा सकती है। इस संदर्भ में अनियमित चुनावों से पहले की जाने वाली सामान्य शिकायतें अब न के बराबर हैं, और जहाँ भी इस तरह की घटनाओं की सूचना मिलती है, उनका सामान्यतः आयोग द्वारा सामाधान किया जाता है।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. राष्ट्रीय आपातकाल (352) किन स्थितियों में प्रभावी होता है एवं उसके क्या प्रभाव हैं? स्पष्ट कीजिए।

उत्तर- युद्ध एवं बाह्य आक्रमण के कारण आपातकाल जिस दिन से भारत स्वतंत्र हुआ, हमें देश के सामने मौजूद अनेक समस्याओं का सामना करने के लिए युद्ध स्तर पर संघर्ष करना पड़ा। जितना हमने उन्हें हल करने प्रयास किया, उतनी ही वे बढ़ती रहीं। परंतु एक राष्ट्र के रूप में हमने कभी हिम्मत नहीं हारी। तब जब हमारे एक पड़ोसी देश चीन ने 1962 में हमारी उत्तरी सीमाओं पर आक्रमण करके देश की सुरक्षा को चुनौती दी। केंद्र सरकार ने इस गंभीर स्थिति से निपटने के लिए असाधारण शक्तियों से अपने को लैस कर लिया, क्योंकि उसके पास और कोई विकल्प नहीं था। देश की सुरक्षा, एकता और स्थायित्व की रक्षा के लिए भारत के राष्ट्रपति को विभिन्न प्रकार की आपातकालीन स्थितियों से निपटने के लिए कुछ विशेष शक्तियाँ प्रदान की गई हैं।

राष्ट्रीय आपातकाल (अनुच्छेद 352) की घोषणा

भारतीय संविधान में राष्ट्रीय आपातकाल लागू करने का प्रावधान है। ऐसी घोषणा भारत का राष्ट्रपति कर सकता है। यदि वह संतुष्ट हो जाए कि स्थिति बहुत विकट है तथा भारत अथवा उसके किसी भाग की सुरक्षा खतरे में है- (क) युद्ध अथवा बाहरी आक्रमण के कारण (ख) देश के अंतर्गत सशस्त्र विद्रोह के कारण यह ध्यान रहे कि राष्ट्रपति यह घोषणा ऐसी स्थिति उत्पन्न होने से पहले भी कर सकता है। 44 वें संविधान संशोधन के अनुसार राष्ट्रपति ऐसी संकटकालीन घोषणा केवल मंत्रीमण्डल को लिखित सिफारिश पर ही कर सकता है।

ऐसी संकटकालीन घोषणा की पुष्टि संसद के दोनों सदनों के द्वारा एक मास के अंदर होना अनिवार्य है। नहीं तो वह घोषणा स्वयं समाप्त हो जाती है। संकटकालीन घोषणा के समय यदि लोकसभा भंग है अथवा उसका अधिवेशन नहीं चल रहा है तो इसकी पुष्टि राज्यसभा द्वारा एक महीने के अंदर होनी होती है तथा बाद में लोकसभा द्वारा अधिवेशन शुरू होने के एक मास के अंदर हो जानी चाहिए।

संसद द्वारा एक बार पुष्टि हो जाने पर आपातकाल का प्रभाव घोषणा की तिथि से छह महीने तक रहता है। यदि इसको छह महीने से आगे बढ़ाना है तो संसद द्वारा दूसरा प्रस्ताव पास किया जाना आवश्यक होता है। इस प्रकार आपातकाल अनिश्चित काल तक जारी

रहता है, परंतु स्थिति में सुधार होने पर राष्ट्रपति द्वारा घोषणा करने से आपातकाल समाप्त हो सकता है।

संविधान के 44वें संशोधन के अनुसार लोकसभा के 10 प्रतिशत या अधिक सदस्य लोकसभा के अधिवेशन की मांग कर सकते हैं तथा उस अधिवेशन में साधारण बहुमत द्वारा आपातकाल को रद्द अथवा समाप्त किया जा सकता है।

हमारे देश में तीन बार राष्ट्रीय आपातकाल की घोषणा की जा चुकी है। पहली बार 26 अक्टूबर 1962 को आपातकालीन घोषणा की गई थी जब चीन ने हमारी उत्तर पूर्व की सीमाओं पर आक्रमण किया था। यह राष्ट्रीय संकट 10 जनवरी 1968 तक जारी रहा। हालांकि तनाव बहुत पहले समाप्त हो गया था। दूसरी बार इसकी घोषणा दूसरे भारत-पाक युद्ध के समय तीन दिसंबर 1971 को की गई तथा यह 21 मार्च 1977 को समाप्त हुई। बाहरी आक्रमण के आधार पर यह आपातकाल चल ही रहा था, परंतु उसी समय 25 जून 1975 को तीसरी आपातकालीन घोषणा कर दी गई। यह घोषणा आंतरिक गड़बड़ी के आधार पर की गई, जिसको लागू करने का कोई औचित्य नहीं था। सरकार के पास 1971 के दूसरे राष्ट्रीय आपातकाल की शक्तियाँ पहले से ही थीं।

राष्ट्रीय आपातकाल का प्रभाव

राष्ट्रीय संकट की घोषणा से व्यक्तियों के अधिकारों व राज्यों की स्वायत्तता पर दूरगामी प्रभाव पड़ता है, जो इस प्रकार हैं:

(i) सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रभाव यह है कि संघीय संविधान का स्वरूप एकात्मक में बदल जाता है। केन्द्र की सत्ता में वृद्धि हो जाती है। संसद को राज्य सूची में वर्णित विषयों पर भी संपूर्ण देश अथवा उसके किसी भाग के लिए कानून निर्माण की शक्ति प्राप्त हो जाती है।

(ii) भारत का राष्ट्रपति राज्यों को कार्यपालिका संबंधी शक्ति के प्रयोग के तरीके के बारे में निर्देश दे सकता है।

(iii) इस आपातकाल के दौरान लोकसभा एक बार में अपने कार्यकाल में एक वर्ष तक की वृद्धि कर सकती है। परंतु घोषणा का प्रभाव समाप्त होने पर छह महीने से अधिक की वृद्धि नहीं की जा सकती है। इसी प्रकार राज्यों के विधानमण्डलों का कार्यकाल भी बढ़ाया जा सकता है।

(iv) आपातकाल के दौरान राष्ट्रपति को केन्द्र व राज्यों के बीच राजस्व के बंटवारे से संबंधित प्रावधानों में फेर बदल करने की शक्ति भी प्राप्त हो जाती है।

(v) अनुच्छेद 19 के अंतर्गत आने वाले मौलिक अधिकार, जिनके बारे में आप पहले पढ़ चुके हैं, स्वतः स्थगित हो जाते हैं। यह स्थगन आपातकाल की समाप्ति तक जारी रहता है। परंतु 44वें संशोधन के अनुसार केवल युद्ध या बाहरी आक्रमण के आधार पर ही इन स्वतंत्रताओं को स्थगित किया जा सकता है।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि संकटकाल में केवल राज्यों की स्वायत्तता ही स्थगित नहीं होती है, बल्कि भारतीय संघीय संरचना भी एकात्मक ढांचे में बदल जाती है। इसे आवश्यक माना जाता है, जिससे केंद्र सरकार को असामान्य स्थितियों का सामना करने के लिए पर्याप्त शक्तियाँ मिल सकें। परंतु 25 जून 1975 को घोषित राष्ट्रीय संकट के समय क्या हुआ? कुछ आलोचकों का कहना है कि इस काल में सत्ता का दुरुपयोग हुआ।

लोकसभा पर धरमों का अतिक्रमण हुआ, विरोधी दलों के नेताओं को जेलों में बंद कर दिया गया, चुनाव टाल दिए गए, लोकसभा की अवधि बढ़ा दी गई तथा प्रेस का गला घोट दिया गया।

संसद के इसी दुरुपयोग के परिणामस्वरूप 1977 में जनता सरकार का गठन हुआ, जिसमें संकटकालीन शक्तियों के विरुद्ध अनेक प्रावधान जोड़े गए हैं।

प्रश्न 2. अनुच्छेद 356 के अंतर्गत आपातकाल की स्थितियों को स्पष्ट कीजिए एवं उसके प्रभाव बताइये।

उत्तर- राज्य में संवैधानिक तंत्र की विफलता से उत्पन्न आपातकाल (अनुच्छेद 356)

यह केंद्र सरकार का कर्तव्य है कि वह सुनिश्चित करे कि प्रत्येक राज्य का प्रशासन संविधान के प्रावधानों के अनुसार चलाया जा रहा है। अनुच्छेद 356 के अंतर्गत भारत के राष्ट्रपति किसी राज्य में आपातकालीन घोषणा जारी कर सकते हैं, यदि वह राज्य के राज्यपाल की रिपोर्ट मिलने पर या किसी अन्य प्रकार से संतुष्ट हो जाए कि वहां ऐसी स्थिति हो गई है, जिसमें राज्य का प्रशासन विधिपूर्वक नहीं चलाया जा सकता है। ऐसी स्थिति में राष्ट्रपति द्वारा आपातकाल की घोषणा करके राज्य में संवैधानिक तंत्र की विफलता को रोकने का प्रयास किया जाता है। आम बोलचाल में इसे राष्ट्रपति शासन भी कहा जाता है।

राष्ट्रीय आपातकाल की तरह इस दूसरी प्रकार की आपातकालीन घोषणा को भी संसद के दोनों सदनों के सामने दो महीने के अंदर पुष्टि के लिए प्रस्तुत करना अनिवार्य है। संसद द्वारा दो महीने के अंदर पुष्टि न होने पर वह स्वतः ही समाप्त हो जाती है। संसद द्वारा पास होने पर घोषणा एक बार में छह माह तक वैध रहती है। इसको अगले छह महीने के लिए और भी बढ़ाया जा सकता है, किंतु इस अवधि को एक वर्ष से अधिक बढ़ाया जा सकता है यदि (अ) राष्ट्रीय आपातकाल पहले ही जारी हो (ब) चुनाव आयोग प्रमाणित करे कि राज्य विधानमंडल का चुनाव कराना संभव नहीं है।

इस प्रकार के आपातकाल को अधिकांश राज्यों में समय-समय पर अनेक बार लागू किया गया है। 1951 में पहली बार पंजाब राज्य में इस प्रकार का आपातकाल लागू किया गया था। 1957 में केरल राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू हुआ। 1977 में पूरे नौ राज्यों में एक साथ राष्ट्रपति शासन लागू किया गया। यह कदम मोरार जी देसाई की जनता पार्टी ने उठाया था। कांग्रेस ने इसकी कड़ी आलोचना की। 1980 में जब कांग्रेस की सरकार बनी तो जिन राज्यों में जनता पार्टी बहुमत में थी वहां राष्ट्रपति शासन लागू कर दिया गया। 1986 में उपद्रव और आंतरिक विद्रोह के कारण जम्मू व कश्मीर में आपातकालीन घोषणा की गई। कुल मिलाकर एक सौ बार से भी अधिक भिन्न-भिन्न राज्यों में एक अथवा दूसरे कारण से आपातकाल लागू हो चुका है।

राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू करने के प्रभाव

राज्य में संवैधानिक तंत्र की विफलता के कारण घोषित आपातकाल के निम्नलिखित प्रभाव होते हैं:

- (i) राष्ट्रपति राज्य सरकार के सभी कार्यों अथवा किसी एक कार्य को अपने हाथ में ले सकता है, अथवा उनको राज्यपाल या किसी अन्य कार्यकारी अधिकारी को सौंप सकता है।
- (ii) राष्ट्रपति राज्य विधानसभा को स्थगित अथवा भंग कर सकता है। वह संसद को राज्य विधानमंडल के स्थान पर कानून निर्माण के लिए प्राधिकृत भी कर सकता है।
- (iii) घोषित लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए राष्ट्रपति कोई अन्य आवश्यक प्रावधान भी लागू कर सकता है।

जिस प्रकार अनेक अवसरों पर राष्ट्रपति शासन लागू किया गया है, उसने अनेक प्रश्नों को जन्म दिया है। कई बार तो यह परिस्थिति की मांग थी। कई अवसरों पर राष्ट्रपति शासन केवल राजनैतिक आधार पर केन्द्र से भिन्न राजनैतिक दल की सरकार को गिराने के लिए लागू किया गया, यद्यपि उस दल का विधान सभा में पूर्ण बहुमत था। विधान सभाओं को स्थगित अथवा भंग करने तथा अन्य राजनैतिक दलों को राज्यों में सरकारों के निर्माण का अवसर न देना केंद्रीय सरकार के पक्षपातपूर्ण व्यवहार के कारण हुआ है, जिसके लिए अनुच्छेद 356 का स्पष्टतया दुरुपयोग हुआ है।

उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए भारतीय संविधान का अनुच्छेद 356 विवादग्रस्त रहा है। इसका अत्यधिक दुरुपयोग किया गया है। 44 वें संशोधन अधिनियम में दिए गए सुरक्षात्मक उपायों के बावजूद इस प्रावधान का केन्द्र सरकार द्वारा दुरुपयोग किए जाने का आरोप लगाया गया है। इसी कारण इस अनुच्छेद को संविधान में से हटाने अथवा इसके दुरुपयोग को समाप्त करने के प्रावधान बनाने की मांग सामने आई है। सरकारिया आयोग ने, जिसे केन्द्र-राज्य संबंधों का पुनर्निर्धारण करने के लिए नियुक्त किया गया था, अनुच्छेद 356 को अंतिम हथियार के रूप में प्रयोग करने की सिफारिश की है। आयोग के अनुसार, राज्य विधानसभा को उस समय तक भंग न किया जाए, जब तक संसद आपातकाल की घोषणा को स्वीकृत न करे। सरकारिया आयोग ने यह भी सुझाव दिया कि केन्द्र द्वारा राज्य में संवैधानिक तंत्र की सुझाव के विफलता के आधार पर आपातकाल की घोषणा से पहले वैकल्पिक सरकार निर्माण की राभी संभावनाओं के लिए समुचित प्रयास अत्यंत आवश्यक है।

लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. भारत में आपातकालीन प्रावधानों का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य क्या था?

उत्तर- आपातकालीन प्रावधानों को शामिल करने की जरूरत भारत में कठिन राजनीतिक परिस्थितियों परिप्रेक्ष्य क्या था? महसूस की गयी थी। भारत के संविधान में आपातकालीन प्रावधानों का विवरण है जो कि विश्व के अन्य संविधानों से लिया गया था। विशेषकर जर्मनी से एवं भारत सरकार अधिनियम 1935 से भारतीय संविधान में भारत सरकार अधिनियम 1935 के प्रावधान सम्मिलित किये गये हैं जिसमें आपातकालीन प्रावधान थे। केन्द्र के मामले में खण्ड 45 तथा प्रांतों में खण्ड 93 का प्रावधान दिया गया था। इसमें मुख्य कार्यपालिका को आपातकाल की घोषणा करने का अधिकार दिया गया था। भारत सरकार अधिनियम 1935 का मकसद था भारत में प्रांतीय स्वायत्ता प्रदान करना। लेकिन इसके आपातकालीन प्रावधान भी थे जिसमें प्रांतों की स्वायत्ता पर प्रतिबंध का भी प्रावधान

का एक और केन्द्र एवं प्रांतों की इकाइयों के बीच संबंधों का प्रश्न था अधिनियम ने यह सुझाव दिया कि केन्द्र को प्रांतों के मामलों में दखल देना चाहिये यदि कोई आपातकालीन स्थिति पैदा हो गयी हो जैसे कि युद्ध, आंतरिक अशांति इत्यादि। ऐसे मामलों में जहाँ कोई शक्ति आ जाती है तब केन्द्र को सभी मामलों में कानून बनाने का अधिकार आ जाता है। आपातकाल की घोषणा करने का अधिकार दिया गया था। भारत सरकार अधिनियम 1935 शामिल करने में काफी योगदान रहा। गवर्नर जनरल के पास विशेष जिम्मेदारी दी। भारत में अधिष्ठित थे तथा वे राज्यपाल के प्रमुख सूचना के स्रोत भी थे।

संविधान में आपातकालीन प्रावधानों को शामिल करने के उपर संविधान सभा के सदस्यों के बीच काफी मतभेद थे। ग्रेनविल ऑस्टिन के अनुसार, ए के अय्यर, और के एम मुंशी स्वतंत्रता पर अंकुश लगाने के समर्थक थे। के एम. मुंशी ने इस बात का समर्थन किया कि आपातकाल के समय केन्द्र सरकार को यह अधिकार होना चाहिये कि वह स्वतंत्रता के अधिकार को निरस्त कर सके। उनके विचारों को अधिकारों की उप-समिति ने भी समर्थन दिया। एक या दो को छोड़कर अय्यर ने यह सुझाव दिया कि संविधान में उल्लेखित अधिकार लोक समत, सुरक्षा एवं रक्षा तक महत्व रखते हैं। उन्होंने अपने विचारों को इन उदाहरणों से सही साबित किया कि बंगाल एवं असम में काफी गड़बड़ी थी तथा पंजाब एवं उत्तर पूर्वी प्रांतों में सामंदायिक दंगे थे। हालांकि मूल अधिकारों को निरस्त करने के सुझाव का तीन लोगों ने विरोध किया था। वे थे के. टी. साह, एच. बी. कामथ तथा एच. एन कुजूरू। वित्तीय आपात के संदर्भ में एच एन कुजूरू ने कहा कि ये राज्य के वित्तीय स्वायत्ता के लिए काफी गंभीर खतरा है। दोनों प्रकार के विचारों के बाद समिति ने एक नया संस्करण तैयार किया। ताकि आपातकाल के समय अधिकारों को निरस्त करने को समर्थन नहीं दिया। इस नये संस्करण ने अनुच्छेद 32 के अंतर्गत संविधानिक उपचारों तहत संसाधनों के निरस्तीकरण को मंजूरी दी। मौलिक अधिकारों के निरस्तीकरण को न्यायिक समीक्षा की परिधि से दूर रखा गया जब तक कि 1978 में 44वां संविधान संशोधन पारित नहीं हुआ।

प्रश्न 2. आपात प्रावधानों के दुरुपयोग पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिए।

उत्तर-आपातकालीन प्रावधानों का प्रयोग भारत में राष्ट्रीय आपातकाल लगाने एवं राष्ट्रपति शासन लगाने में किया गया है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में तीन बार राष्ट्रीय आपातकाल लगाया जा चुका है। दो बार देश में बाहरी आक्रमण से सुरक्षा करने के लिए राष्ट्रीय आपातकाल लगाया जिसमें 1962 में भारत-चीन युद्ध के समय तथा 1971 में भारत-पाक युद्ध के समय। लेकिन 1975 में इसे राजनीतिक कारणों से इसका प्रयोग किया गया था। असली समस्या तब खड़ी हुई जब अनुच्छेद 352 का प्रयोग किया गया था। जब श्रीमती इंदिरा गांधी के नेतृत्व में केन्द्र सरकार ने 1975 में भाषण की आजादी एवं संगठन पर पाबंदी लगाने की कोशिश की। राष्ट्रीय आपातकाल की उस समय बहुत आलोचना हुई थी। श्रीमती इंदिरा गांधी ने ऐसा इसलिए किया क्योंकि इलाहाबाद उच्च न्यायालय के फैसला श्रीमती इंदिरा गांधी के विपरीत था। इन परिस्थितियों में जयप्रकाश नारायण ने सेना, पुलिस

तथा सरकारी कर्मचारियों को इस आदेश को मानने से मना किया। क्योंकि ये आदेश उनकी राय में गलत था। उन्होंने मुख्य न्यायाधीश पी. एन. राय को भी चुनाव की अपील सुनने से मना किया था सभी विपक्षी दलों ने लोक संघर्ष समिति का गठन किया, जिसके अध्यक्ष जय प्रकाश नारायण थे। उन्होंने संपूर्ण क्रांति का नारा दिया जिसे जनता का व्यापक समर्थन भी मिला। भारत के संविधान निर्माताओं ने यह इच्छा जताई थी कि आपातकालीन प्रावधान केवल आपातकालीन परिस्थितियों - युद्ध, बाहरी आक्रमण, आंतरिक उथल-पुथल, सैनिक विद्रोह या वित्तीय संकट में ही लागू किये जायेंगे। अनुच्छेद 356 के दुरुपयोग की आशंका के बारे में चेतावनी देते हुए डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने कहा 'कभी इसका प्रयोग न किया जाए, सिवाय अंतिम विकल्प के रूप में जब अन्य सभी विकल्प असफल हो गए हों।' आपातकालीन प्रावधान स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् 1990 तक केवल राजनीतिक दुर्भावना के लिये दुरुपयोग किये गये थे। हालांकि 21वीं सदी में, इनके दुरुपयोग में कमी आई है। कुछ राजनीतिक दलों द्वारा जो कि केन्द्र सरकार में शासन में थे, इन प्रावधानों का दुरुपयोग किया है। इन दलों द्वारा राज्यों में विपक्षी दलों की सरकारों को हराने के लिये अनुच्छेद 356 का दुरुपयोग किया गया वहाँ पर राष्ट्रपति शासन लगाया गया। कई अवसरों पर भारत में इन प्रावधानों का केन्द्र सरकार द्वारा दुरुपयोग किया गया चाहे कांग्रेस हो या फिर गैर-कांग्रेस दोनों ही द्वारा। सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण है केरल में कम्युनिष्ट पार्टी के नेता ई. एम. एस. नम्बूदीरीपाद की सरकार को केन्द्र ने 1957 में बर्खास्त कर दिया था। यह सबसे पहला उदाहरण था किसी चुनी हुई सरकार को बर्खास्त करने तथा आपातकालीन प्रावधान का उपयोग करने का। 1980 में, इंदिरा गाँधी सरकार ने विभिन्न राज्यों में विपक्षी पार्टियों की सरकारों को बर्खास्त किया था। गैर कांग्रेसी सरकारों ने भी इस प्रावधान का दुरुपयोग किया है। यहाँ पर इसके दो प्रमुख उदाहरण हैं। पहला उदाहरण 1977 में जनता पार्टी सरकार का है जब मोरारजी देसाई प्रधानमंत्री थे। दूसरा उदाहरण जनता दल सरकार का जब वी. पी. सिंह प्रधानमंत्री थे। इन दोनों उदाहरणों में कांग्रेसी सरकारों को बर्खास्त किया गया था।

राज्यों में राष्ट्रपति शासन लगाने की प्रायः आलोचना हुई है। प्रायः यह आरोप लगाया जाता है कि केन्द्र सरकार ने अनुच्छेद 356 का दुरुपयोग करके विपक्षी दलों की सरकारों को बर्खास्त किया और राष्ट्रपति शासन लगाया। 1994 के बाद राष्ट्रपति शासन लगाने में कमी आई है। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि सर्वोच्च न्यायालय ने बोमई केस में अपना फैसला सुनाया था। बोमई फैसले के अनुसार किसी राज्य में राष्ट्रपति शासन लगाने के प्रस्ताव को संसद के दोनों सदनों द्वारा मंजूरी मिलनी चाहिए। इसने धारा 356 के दुरुपयोग को कठिन बना दिया है।

प्रश्न 3. वित्तीय आपातकाल (360) के बारे में बताइये।

उत्तर-तीसरे प्रकार का आपातकाल अनुच्छेद 360 में वर्णित वित्तीय संकट कहलाता है। इसके अनुसार यदि राष्ट्रपति संतुष्ट हो जाए कि भारत अथवा इसके किसी भाग की वित्तीय स्थिरता या साख को खतरा है तो वह वित्तीय संकट की घोषणा कर सकता है। अन्य दो प्रकार के आपातकाल की भांति इसको भी लागू होने के दो मास के अंदर संसद की स्वीकृति मिलना आवश्यक है। जब तक स्थिति में सुधार न हो, तब तक संकटकाल जारी रह सकता है तथा इसको बाद में घोषणा द्वारा समाप्त किया जा सकता है।

वित्तीय संकट की घोषणा के निम्नलिखित प्रभाव हो सकते हैं:

(क) केन्द्र सरकार किसी भी राज्य को वित्तीय मामलों से संबंधित निर्देश दे सकती है।
(ख) राष्ट्रपति राज्य के सरकारी कर्मचारियों के वेतन व भत्तों को कम करने की सिफारिश कर सकता है।

(ग) राज्य विधान मण्डल द्वारा पारित वित्त विधेयकों को संसद में विचार के लिए राष्ट्रपति, राज्य से सुरक्षित रखने के लिए कह सकता है।

(घ) राष्ट्रपति केन्द्रीय कर्मचारियों जिनमें उच्च और सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश शामिल हैं, उनके वेतन व भत्ते कम करने का निर्देश दे सकता है।

सौभाग्य से अभी तक भारत में वित्तीय आपातकाल की स्थिति पैदा नहीं हुई है।

प्रश्न 4. संशोधन प्रक्रिया की आलोचना पर टिप्पणी लिखिए।

उत्तर-संशोधन प्रक्रिया की आलोचना (संशोधन प्रक्रिया की आलोचना)

आलोचकों ने संविधान संशोधन प्रक्रिया के निम्नलिखित आधारों पर आलोचना की है:

1. सांविधानिक संशोधन के लिए किसी विशेष निकाय, जैसे-सांविधानिक सभा (अमेरिका) या विधान परिषद के लिए कोई उपबंध नहीं है। संसद को संवैधानिक शक्ति व्यापक रूप से प्राप्त है, राज्य विधानमंडलों में कुछ मामलों।

2. संविधान की शक्ति संसद में निहित है। इस प्रकार अमेरिका के विपरीत राज्यों, विधानमंडलों, विधान परिषदों के निर्माण या समाप्ति के प्रस्ताव के अतिरिक्त कोई भी संशोधन या संविधान संशोधन का प्रस्ताव नहीं लाया जा सकता है। इसे भी संसद में पारित किया जा सकता है या नहीं या इस पर कोई कार्यवाही नहीं की जा सकती है।

3. संविधान के बड़े हिस्से को अकेले ही विशेष बहुमत या एकल बहुमत द्वारा एकजुट किया जा सकता है। केवल कुछ मामलों में राज्य विधानमंडल की संस्तुति की आवश्यकता होती है, वह भी उनमें से शामिल है, जबकि अमेरिका में यह तीन-चौथाई राज्यों द्वारा स्वीकृत होना आवश्यक है।

4. संविधान ने राज्य विधान मंडलों द्वारा संशोधन एसोसिएटेड को मंजूरी दी या उनके विरोध को पेश करने की समय सीमा निर्धारित नहीं की है। वह इस मुद्दे पर मौन है कि आप अपनी संस्था के बाद इसे वापस ले सकते हैं।

5. किसी भी संविधान संशोधन अधिनियम के संदर्भ में गतिरोध हो तो संसद के दोनों सदनों की संयुक्त बैठक का कोई प्रावधान नहीं है, दूसरी तरफ संयुक्त बैठक पर एक व्यापक संवैधानिक मुद्दे की जा सकती है।

6. संशोधन की प्रक्रिया विधानमंडलीय प्रक्रिया के समान है। केवल विशेष बहुमत वाले मामलों के अतिरिक्त संविधान संशोधन को संसद से एक ही तरह का प्रस्ताव दिया जा सकता है, जैसे-साधारण सौलून।

7. संशोधन प्रक्रिया से संबद्ध व्यवस्था बहुत सारे सामान है; एटी: ड्यूक को नामांकित करने के व्यापक अवसर होते हैं।

इन कामों के बावजूद यह तय नहीं किया जा सकता कि प्रक्रिया सामान्य और सरल है और स्थिति और आवश्यकता के अनुसार है। संविधान संशोधन की प्रक्रिया को इतना लचीला नहीं किया जाना चाहिए कि पाए गए दस्तावेज़ पार्टी को अपने खाते से संशोधित कर लिया जाए, न ही इसे इतना कठोर किया जाना चाहिए कि आवश्यक कलाकारों को भी स्वीकार न किया जाए।

संशोधन प्रक्रिया का महत्व

के.सी. व्हाईयर ने ठीक ही कहा है- 'स्कैटर पन व पैटर्न के बीच बेहतर संतुलन है।' इस संदर्भ में पं. नेहरू ने संविधान सभा में कहा था, 'हम इस संविधान को इतना ठोस बनाना चाहते हैं कि इसे हम बना सकें और संविधान में कुछ भी ठोस नहीं है।' इसमें कुछ उपकरण होने चाहिए। यदि आपका संविधान कठोर और स्थिर है तो आप राष्ट्र की प्रगति को, भिन्न हैं।'

इसी तरह डॉ. बी.आर. कोम ने संविधान सभा में महसूस किया कि 'सभा ने इस संविधान पर किसी अंतिम और अपवित्र मोहर को स्थापित करने से खुद को दूर रखा है, ऐसा कनाडा के लोगों को संविधान संशोधन का अधिकार नहीं दिया गया, या अमेरिका या राष्ट्र की तरह विशिष्ट और मान्यता प्राप्त है 'समर्थन को पूरा करने के बाद संशोधन प्रक्रिया स्वयं को निर्देशित की जाती है, बल्कि संविधान संशोधन का सरल कार्य किया जाता है।' के.सी. वे भारत के संविधान में विभिन्न प्रकार के संशोधन प्रक्रिया के प्रशंसक हैं। वे कहते हैं 'संशोधन व्यवस्था में यह विविधता पूर्ण लेकिन कठिन से ही मिलने वाली है।' ग्रीनविले ऑस्टिन के 'संशोधन प्रक्रिया से आप यह सिद्ध करते हैं कि संविधान का सबसे बड़ा हिस्सा यही है।' हालाँकि यह बहुत जटिल है, 'यह काफी अलग गुण वाला है।'

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

- निम्नलिखित में से किसे 'संविधान की आत्मा' के रूप में वर्णित किया गया है?
(a) मौलिक अधिकार (b) मौलिक कर्तव्य
(c) राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत (d) प्रस्तावना
उत्तर- (d)
- भारतीय संविधान की प्रस्तावना किस पर आधारित है?
(a) भारत का दर्शन (b) उद्देश्य संकल्प पंडित नेहरू द्वारा तैयार और स्थानांतरित किया गया
(c) भारतीय संस्कृति (d) धार्मिक अवधारणा
उत्तर- (b)
- प्रस्तावना में 'हम' शब्द का अर्थ है
(a) भारत सरकार (b) सर्वोच्च न्यायालय
(c) भारत के लोग (d) भारतीय संसद
उत्तर- (c)
- भारतीय संविधान निम्नलिखित में से किस रूप में 'न्याय' सुनिश्चित करता है?
(a) सामाजिक (b) आर्थिक
(c) राजनीतिक (d) उपरोक्त सभी
उत्तर- (d)
- किस संशोधन अधिनियम द्वारा प्रस्तावना में संशोधन किया गया है?
(a) 27वां संवैधानिक संशोधन (b) 42वां संवैधानिक संशोधन
(c) 44वां संवैधानिक संशोधन (d) 40वां संवैधानिक संशोधन
उत्तर- (b)
- किस मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने विशेष रूप से राय दी कि प्रस्तावना संविधान का हिस्सा नहीं है?
(a) बेतुबारी यूनिनियन मामला (b) केशवनदा भारती मामला
(c) दोनों (a) और (b) (d) उपरोक्त में से कोई नहीं
उत्तर- (a)
- किस मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने पहले की राय को खारिज कर दिया और माना कि प्रस्तावना संविधान का अभिन्न अंग है?
(a) बेतुबारी यूनिनियन मामला (b) केशवनदा भारती मामला
(c) दोनों (a) और (b) (d) उपरोक्त में से कोई नहीं
उत्तर- (b)
- प्रस्तावना में कहा गया है कि संविधान अपना अधिकार प्राप्त करता है
(a) भारतीय संस्कृति (b) भारत सरकार
(c) भारत के लोग (d) रियासतें
उत्तर- (c)
- प्रस्तावना के अनुसार संविधान को अपनाने की तिथि है
(a) 26 जनवरी 1950 (b) 26 नवंबर 1949
(c) 11 दिसंबर 1946 (d) उपरोक्त में से कोई नहीं
उत्तर- (b)
- 42वें संवैधानिक संशोधन (1976) ने प्रस्तावना में कौन सा शब्द जोड़ा?
(a) समाजवादी (b) धर्मनिरपेक्ष
(c) संप्रभु (d) दोनों (a) और (b)
उत्तर- (d)
- भारतीय संविधान का कौन सा भाग स्पष्ट रूप से घोषित करता है कि भारत एक संप्रभु समाजवादी धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक गणराज्य है?
(a) मौलिक अधिकार (b) राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत
(c) प्रस्तावना (d) मौलिक कर्तव्य
उत्तर- (c)

- भारतीय संविधान के उद्देश्यों में से एक के रूप में 'आर्थिक न्याय' प्रदान किया गया है
(a) प्रस्तावना और मौलिक अधिकार
(b) प्रस्तावना और राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत
(c) मौलिक अधिकार और राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत
(d) उपरोक्त में से कोई नहीं
उत्तर- (b)
- प्रस्तावना में निम्नलिखित शब्दों का सही क्रम है
(a) संप्रभु, लोकतांत्रिक, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, गणतंत्र
(b) संप्रभु, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक, गणतंत्र
(c) संप्रभु, समाजवादी, लोकतांत्रिक, धर्मनिरपेक्ष, गणतंत्र
(d) इनमें से कोई नहीं
उत्तर- (b)
- किस देश का संविधान सबसे पहले प्रस्तावना से शुरू हुआ था?
(a) यूएसए (b) भारत
(c) ब्रिटेन (d) कनाडा
उत्तर- (a)
- प्रस्तावना में न्याय (सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक) के आदर्श से प्रेरणा मिलती है
(a) रूसी क्रांति (b) अमेरिकी गृहयुद्ध
(c) फ्रांसीसी क्रांति (d) जापानी संविधान
उत्तर- (a)
- प्रस्तावना में स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के आदर्श कहाँ से लिये गये हैं?
(a) फ्रांसीसी क्रांति (b) रूसी क्रांति
(c) अमेरिकी गृहयुद्ध (d) उपरोक्त में से कोई नहीं
उत्तर- (a)
- प्रस्तावना के बारे में निम्नलिखित में से कौन सा सत्य है?
(a) यह विधायिका की शक्ति का एक स्रोत है और विधायिका की शक्तियों पर प्रतिबंध का एक स्रोत है।
(b) यह न्यायसंगत है।
(c) इसके प्रावधान कानून की अदालतों में लागू करने योग्य हैं।
(d) उपरोक्त में से कोई नहीं।
उत्तर- (d)
- भारतीय संदर्भ में 'धर्मनिरपेक्ष' शब्द का क्या अर्थ है?
(a) सरकार की नजर में सभी धर्म समान हैं और राज्य किसी विशेष धर्म को अपने आधिकारिक धर्म के रूप में मान्यता नहीं देता है।
(b) अल्पसंख्यकों से संबंधित धर्म को विशेष महत्व।
(c) सरकार द्वारा एक धर्म को बढ़ावा दिया जाता है।
(d) निम्नलिखित में से कोई नहीं।
उत्तर- (a)
- 42वें संवैधानिक संशोधन द्वारा प्रस्तावना में निम्नलिखित में से कौन से 4 शब्द जोड़े गए?
(a) समाजवादी (b) धर्मनिरपेक्ष
(c) ईमानदारी (d) उपरोक्त सभी
उत्तर- (d)
- भारतीय संविधान की प्रस्तावना में निम्नलिखित में से किस शब्द का उल्लेख नहीं है?
(a) संप्रभु (b) समाजवादी
(c) लोकतांत्रिक (d) भारतीय
उत्तर- (d)
- प्रस्तावना में उल्लिखित 'संप्रभु' शब्द का तात्पर्य..... है

- (a) भारत एक स्वतंत्र राज्य है।
 (b) भारत न तो किसी अन्य राष्ट्र पर निर्भर है और न ही उसका प्रभुत्व है।
 (c) भारत अपने स्वयं के मामलों (आंतरिक और बाह्य दोनों) का संचालन करने के लिए स्वतंत्र है।
 (d) उपरोक्त सभी।

उत्तर- (d)

22. निम्नलिखित में से कौन सा कथन सत्य है/हैं?

- (a) राष्ट्रमंडल राष्ट्रों में भारत की सदस्यता किसी भी तरह से भारत की संप्रभुता को प्रभावित नहीं करती है।
 (b) संयुक्त राष्ट्र संगठन (यूएनओ) में भारत की सदस्यता भारत की संप्रभुता को सीमित नहीं करती है।
 (c) भारत या तो किसी विदेशी क्षेत्र का अधिग्रहण कर सकता है या अपने क्षेत्र का एक हिस्सा किसी विदेशी राज्य के पक्ष में सौंप सकता है।
 (d) उपरोक्त सभी।

उत्तर- (d)

23. अब तक भारत के संविधान की प्रस्तावना में कितनी बार संशोधन किया जा चुका है?

- (a) एक बार (b) दो बार
 (c) तीन बार (d) कभी नहीं

उत्तर- (a)

24. निम्नलिखित में से किसमें भारतीय संविधान के मूल लक्ष्यों और उद्देश्यों की चर्चा की गई है?

- (a) भाग - I (b) प्रस्तावना
 (c) भाग - II (d) अनुसूची

उत्तर- (b)

25. निम्नलिखित में से कौन सा कथन गलत है?

- (a) पं. द्वारा वस्तुनिष्ठ प्रस्ताव पारित किया गया। नेहरू ही भारत के संविधान की प्रस्तावना बने।
 (b) प्रस्तावना अदालत में लागू करने योग्य है।
 (c) प्रस्तावना में केवल एक बार 1976 में संशोधन किया गया है।
 (d) प्रस्तावना यह साबित करती है कि संप्रभुता अंततः भारतीय लोगों के पास है।

26. 42वाँ संविधान संशोधन किस वर्ष किया गया?

- (a) 1976 (b) 1966
 (c) 1986 (d) 1972

उत्तर- (a)

27. निम्नलिखित में से केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य मामले, 1973 का परिणाम क्या था?

- (a) प्रस्तावना भारतीय संविधान का एक हिस्सा है और संसद की संशोधन शक्ति के अधीन है।
 (b) प्रस्तावना भारतीय संविधान का हिस्सा नहीं है और संसद की संशोधन शक्ति के अधीन नहीं है।
 (c) प्रस्तावना संविधान का हिस्सा नहीं है बल्कि संसद की संशोधन शक्ति के अधीन है।
 (d) प्रस्तावना संविधान का एक हिस्सा है लेकिन संसद की संशोधन शक्ति के अधीन नहीं है।

उत्तर- (a)

28. भारतीय संविधान की प्रस्तावना का उद्देश्य सुरक्षित करना है

- (a) व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता।
 (b) सभी व्यक्तियों के लिए मौलिक अधिकार।
 (c) भारत के नागरिकों को मौलिक अधिकार।
 (d) सभी सरकारी कर्मचारियों को कार्यकाल की सुरक्षा।

उत्तर- (a)

29. भारतीय संविधान में 'समानता' का क्या अर्थ है?

- (a) अवसरों की कमी (b) समानता का अभाव
 (c) समाज के किसी भी वर्ग के लिए विशेष विशेषाधिकारों का अभाव और बिना किसी भेदभाव के सभी व्यक्तियों के लिए पर्याप्त अवसरों का प्रावधान।
 (d) उपरोक्त में से कोई नहीं।

उत्तर- (c)

30. डॉ. बी.आर. अम्बेडकर द्वारा संविधान सभा में अपने समापन भाषण में निम्नलिखित में से कौन सा शब्द 'त्रिमूर्ति के संघ' में शामिल नहीं किया गया था?

- (a) स्वतंत्रता (b) लचीलापन
 (c) समानता (d) बंधुत्व

उत्तर- (b)

31. संविधान को पवित्र दस्तावेज किसने कहा है?

- (a) बीआर अंबेडकर (b) महात्मा गांधी
 (c) दीनदयाल उपाध्याय (d) मोहम्मद अली जिन्ना

उत्तर- (a)

32. संविधान सभा के संबंध में निम्नलिखित में से कौन सा कथन सत्य है?

1. यह वयस्क मताधिकार पर आधारित नहीं था।
 2. इसका परिणाम प्रत्यक्ष चुनाव था।
 3. यह एक बहुदलीय संस्था थी।
 4. इसने कई समितियों के माध्यम से कार्य किया।
 नीचे दिए गए कोड से सही उत्तर चुनें:

- (a) 1 और 2 (b) 2 और 3
 (c) 1 और 4 (d) 1, 2, 3 और 4

उत्तर- (c)

33. भारतीय संसदीय प्रणाली भारत की ब्रिटिश संसदीय प्रणाली से भिन्न है

- (a) वास्तविक और नाममात्र कार्यकारी दोनों
 (b) सामूहिक जिम्मेदारी की एक प्रणाली
 (c) द्विसदनीय विधायिका (d) न्यायिक समीक्षा की प्रणाली

उत्तर- (d)

34. निम्नलिखित में से किसने प्रस्तावना को 'संविधान का पहचान पत्र' कहा था?

- (a) बीएन रॉय (b) बीआर अंबेडकर
 (c) एनए पालकीवाला (d) जवाहरलाल नेहरू

उत्तर- (c)

35. संविधान के कामकाज की समीक्षा के लिए राष्ट्रीय आयोग की स्थापना की गई थी

- (a) 2000 (b) 2001
 (c) 2002 (d) 2003

उत्तर- (a)

36. भारत के संविधान को अपनाने के लिए क्या प्रक्रिया अपनाई गई?

- (a) इसे अनुसमर्थन के लिए भारत के लोगों को प्रस्तुत किया गया था
 (b) इसे गवर्नर-जनरल को उनकी सहमति के लिए प्रस्तुत किया गया था

130 / उज्ज्वल नोट्स (माइनर इलेक्ट्रिव कोर्स)

- (c) इसे तब अपनाया गया जब अंतरिम सरकार ने इसे मंजूरी दे दी
(d) इसे तब अपनाया गया जब इस पर संविधान सभा के अध्यक्ष और सदस्यों के हस्ताक्षर प्राप्त हुए

उत्तर-(d)

37. संसद के संबंध में निम्नलिखित कथनों पर विचार करें।
1. किसी गणतंत्र में राज्य का मुखिया सीधे तौर पर चुना जाता है।
2. इसका अर्थ है लोगों में राजनीतिक संप्रभुता निहित करना।
3. किसी भी विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग का अभाव।
उपरोक्त में से कौन सा/से कथन सही है/हैं?

- (a) 1,2 (b) 1,3
(c) 2,3 (d) 1,2,3

उत्तर-(c)

38. निम्नलिखित में से कौन सा शब्द दर्शाता है कि हमारी प्रस्तावना में 'लोगों को निर्णय लेने का सर्वोच्च अधिकार है'?

- (a) गणतंत्र (b) संप्रभु
(c) धर्मनिरपेक्ष (d) उपरोक्त में से कोई नहीं

उत्तर-(b)

39. भारत के संविधान में मौलिक अधिकार

- (a) मूल संविधान का एक हिस्सा बना (b) चौथे संशोधन द्वारा जोड़े गए थे
(c) 1952 में संसद द्वारा जोड़े गए थे (d) बयालीसवें संशोधन के तहत जोड़े गए थे

उत्तर-(a)

40. देश का सर्वोच्च कानून कौन सा है?

- (a) भारतीय दंड संहिता (b) भारतीय संविधान
(c) सिविल प्रक्रिया संहिता (d) आपराधिक प्रक्रिया संहिता

उत्तर-(b)

41. निम्नलिखित में से कौन प्रारूप समिति की 7 सदस्यीय टीम का सदस्य नहीं था?

- (a) डॉ. के.एम. मुंशी (b) टी टी कृष्णामाचारी
(c) जवाहरलाल नेहरू (d) सैयद मोहम्मद सादुल्लाह

उत्तर-(c)

42. निम्नलिखित कथनों पर विचार करें,

1. भारतीय संविधान धर्मनिरपेक्षता की सकारात्मक अवधारणा का प्रतीक है।
2. एक लोकतांत्रिक राजनीति, जैसा कि प्रस्तावना में निर्धारित है, लोकप्रिय संप्रभुता के सिद्धांत पर आधारित है।
3. प्रस्तावना में प्रयुक्त 'लोकतांत्रिक' शब्द केवल राजनीतिक और सामाजिक लोकतंत्र को शामिल करता है।
4. उपरोक्त में से कौन सा/से कथन सही है/हैं?

- (a) केवल 1 (b) 1,2
(c) 1,3 (d) 2,3

उत्तर-(b)

43. निम्नलिखित में से कौन भारतीय राजनीति के लोकतांत्रिक चरित्र की अभिव्यक्तियाँ हैं?

1. सार्वभौम वयस्क मताधिकार 2. आवधिक चुनाव
3. कानून का शासन 4. न्यायपालिका की स्वतंत्रता
सही उत्तर कोड चुनें:
(a) 1,2,3 (b) 2,3,4
(c) 1,3,4 (d) 1,2,3,4

उत्तर-(d)

भारत के संविधान का परिचय / 131

44. समाजवाद का विरोध है:

- (a) सामाजिक सुरक्षा योजना (b) धन का समान वितरण
(c) अप्रतिबंधित प्रतिस्पर्धा (d) सामूहिक स्वामित्व और प्रबंधन

उत्तर-(c)

45. निम्नलिखित में से कौन सी विशेषताएँ और उनका स्रोत गलत मेल खाते हैं?

- (a) न्यायिक समीक्षा - ब्रिटिश अभ्यास
(b) समवर्ती सूची - ऑस्ट्रेलियाई संविधान
(c) निदेशक सिद्धांत - आयरिश संविधान
(d) मौलिक अधिकार - अमेरिकी संविधान

उत्तर-(a)

46. भारत का संविधान एकात्मक सरकार के रूप में कार्य करने के लिए बनाया गया है:

- (a) सामान्य समय में (b) आपातकाल के समय में
(c) जब संसद की इच्छा हो (d) राष्ट्रपति की इच्छा पर

उत्तर-(b)

47. धर्म की स्वतंत्रता की गारंटी है:

- (a) प्रस्तावना (b) कन्वेंशन
(c) मौलिक अधिकार (d) निदेशक सिद्धांत

उत्तर-(c)

48. वर्तमान में भारत के संविधान में कितने मौलिक कर्तव्य हैं?

- (a) 6 (b) 7
(c) 10 (d) 11

उत्तर-(d)

49. एक नए राज्य के गठन के लिए भारत के संविधान की निम्नलिखित में से किस अनुसूची में संशोधन करना होगा?

- (a) पहली अनुसूची (b) चौथी अनुसूची
(c) तीसरी अनुसूची (d) दसवी अनुसूची

उत्तर-(a)

50. भारतीय संसद की सबसे बड़ी विशेषता यही है

- (a) यह भारत में केंद्रीय विधानमंडल है (b) इसमें राष्ट्रपति भी शामिल है
(c) संसद का उपरी सदन कभी भंग नहीं होता है
(d) यह प्रकृति में द्विसदनीय है

उत्तर-(c)

51. जिसका वर्णन डॉ. बी.आर. ने किया। अम्बेडकर संविधान के 'हृदय और आत्मा' हैं?

- (a) समानता का अधिकार (b) शोषण के खिलाफ अधिकार
(c) संवैधानिक उपचार का अधिकार (d) धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार

उत्तर-(c)

52. सरकारों को एकात्मक एवं संघीय के रूप में वर्गीकृत करने का आधार क्या है?

- (a) विधायिका और कार्यपालिका के बीच संबंध
(b) कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच संबंध
(c) केंद्र और राज्यों के बीच संबंध
(d) सरकार की विधायिका, कार्यपालिका और न्यायिक शाखाओं के बीच संबंध

उत्तर-(c)

53. निम्नलिखित में से कौन सी भारतीय संविधान की विशेषता नहीं है?

- (a) सरकार का संसदीय स्वरूप (b) न्यायपालिका की स्वतंत्रता
(c) सरकार का राष्ट्रपति स्वरूप (d) संघीय सरकार

उत्तर-(c)

54. भारत में 'कानून के समक्ष समानता' से लिया गया है

- (a) केस लॉ (b) राजनीतिक सम्मेलन

- (c) संविधान (d) गांधीवादी दर्शन उत्तर-(c)
55. सरकार के संसदीय स्वरूप में वह समान लोगों में प्रथम हैं। वह कौन हैं?
(a) राष्ट्रपति (b) प्रधान मंत्री उत्तर-(b)
(c) विपक्ष के नेता (d) निचले सदन के अध्यक्ष
56. भारत का संविधान नागरिकों को आर्थिक न्याय का आश्वासन देता है
(a) मौलिक अधिकार (b) मौलिक कर्तव्य उत्तर-(d)
(c) प्रस्तावना (d) राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत
57. संसद् संसद की अवधारणा की उत्पत्ति हुई:
(a) इंग्लैंड (b) भारत उत्तर-(a)
(c) फ्रांस (d) जापान
58. भारतीय संविधान के संबंध में निम्नलिखित में से कौन सा सही है?
(a) यह कई संविधानों का मिश्रण है
(b) यह पूरी तरह से ब्रिटिश संविधान पर आधारित है
(c) यह केवल भारत सरकार अधिनियम के आधार पर बनाया गया है
(d) यह पूरी तरह से कनाडा के संविधान 1935 पर आधारित है उत्तर-(a)
59. लोकतंत्र की सफलता किस पर निर्भर करती है?
(a) आलोचना करने का अधिकार (b) एसोसिएशन का अधिकार उत्तर-(c)
(c) व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार (d) संपत्ति का अधिकार
60. लोकतंत्र की अनिवार्य विशेषता निम्नलिखित को प्रमुखता देना है:
(a) कार्यपालिका (b) न्यायपालिका उत्तर-(c)
(c) नागरिक (d) नागरिक समाज
61. राजनीतिक अधिकार में निम्नलिखित में से कौन सा शामिल नहीं है?
(a) वोट देने का अधिकार (b) जीवन का अधिकार उत्तर-(b)
(c) चुनाव लड़ने का अधिकार (d) सरकार के कार्यकारी निकायों के खिलाफ शिकायत दर्ज करने का अधिकार
62. निम्नलिखित में से कौन-सी भारतीय संविधान की संघीय विशेषताएँ नहीं हैं/हैं? /
1. संविधान लिखित है और इसमें आसानी से संशोधन नहीं किया जा सकता।
2. राज्यसभा में सभी राज्यों का समान प्रतिनिधित्व
3. राज्य सरकारें केंद्र से अधिकार प्राप्त करती हैं।
सही उत्तर कोड चुनें:
(a) 1,2 (b) 2,3 उत्तर-(b)
(c) 1,3 (d) 1,2,3
63. भारतीय संविधान में न्यायिक समीक्षा निम्न पर आधारित है:
(a) कानून का शासन (b) कानून की उचित प्रक्रिया उत्तर-(c)
(c) कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया (d) मिसालें और सम्मेलन
64. 'बृहत् भारत' शब्द का तात्पर्य है
(a) राजनीतिक एकता (b) सांस्कृतिक एकता

- (c) धार्मिक एकता (d) सामाजिक एकता उत्तर-(b)
65. हमारे संविधान की व्याख्या करने का अंतिम अधिकार है
(a) राष्ट्रपति (b) संसद उत्तर-(d)
(c) प्रधान मंत्री (d) सुप्रीम कोर्ट
66. 26 जनवरी 1950 को संविधान लागू होने पर भारतीय गणराज्य की सटीक संवैधानिक स्थिति क्या थी?
(a) एक लोकतांत्रिक गणराज्य (b) एक संसद् लोकतांत्रिक गणराज्य उत्तर-(b)
(c) एक संसद् धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक गणराज्य
(d) एक संसद् धर्मनिरपेक्ष समाजवादी लोकतांत्रिक गणराज्य
67. संघीय सरकार में, राज्य आनंद लेते हैं
(a) मूल शक्तियाँ (b) केंद्र द्वारा प्रत्यायोजित शक्तियाँ उत्तर-(c)
(c) संविधान द्वारा दी गई शक्तियाँ (d) लोगों द्वारा दी गई शक्तियाँ
68. राजनीतिक समानता पाई जाती है:
(a) विशेषाधिकारों का अभाव (b) सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार उत्तर-(b)
(c) धन का समान वितरण (d) व्यक्ति की तर्कसंगतता
69. प्रत्यक्ष लोकतंत्र सरकार की एक प्रणाली है जिसमें
(a) लोग सिविल सेवकों को चुनते हैं
(b) लोग सीधे अपने प्रतिनिधियों का चुनाव करते हैं
(c) लोग देश के नीति निर्माण और प्रशासन में सीधे भाग लेते हैं
(d) सरकारी अधिकारी विभिन्न नियुक्तियों पर लोगों से परामर्श करते हैं। उत्तर-(c)
70. भारत के संविधान में 'संवैधानिक उपचारों का अधिकार' अनुच्छेद में प्रदान किया गया है
(a) 30 (b) 31 उत्तर-(c)
(c) 32 (d) 35
71. भारतीय संविधान के अधिकांश प्रावधानों में संशोधन किया जा सकता है
(a) राज्य विधानसभाओं द्वारा एक साथ कार्य करना
(b) अकेले संसद द्वारा
(c) संसद और राज्य विधानमंडलों की संयुक्त मंजूरी से
(d) केवल आधे राज्यों द्वारा अनुसमर्थन पर उत्तर-(b)
72. भारतीय संविधान के निम्नलिखित भागों में से एक में न्यायपालिका को कार्यपालिका से अलग करने का प्रावधान किया गया है:
(a) प्रस्तावना (b) मौलिक अधिकार उत्तर-(c)
(c) राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत (d) सातवीं अनुसूची
73. हमारे संविधान की प्रस्तावना में इसका कोई उल्लेख नहीं है
(a) न्याय (b) भाईचारा उत्तर-(d)
(c) स्थिति की समानता (d) वयस्क मताधिकार
74. भारतीय संविधान किस प्रकार का है?
(a) केवल संघीय (b) केवल एकात्मक उत्तर-(d)
(c) केवल संसदीय (d) स्वरूप में संघीय और भावना में एकात्मक

86. संविधान में 'घमीनरपेक्ष' शब्द किन्ती बार आता है?
(a) 1 (b) 2
(c) 3 (d) 4 उत्तर-(b)
87. निम्नलिखित में से कौन सा कार्यालय भारतीय संविधान द्वारा प्रदान नहीं किया गया है?
(a) उप प्रधान मंत्री (b) राज्यसभा के उपसभापति उत्तर-(b)
(c) लोकसभा के उपाध्यक्ष (d) राज्य विधान सभा के उपाध्यक्ष उत्तर-(a)
88. भारतीय संविधान अल्पसंख्यकों को निम्न आधार पर मान्यता देता है-
(a) धर्म (b) जाति उत्तर-(a)
(c) रंग
(d) कुल जनसंख्या में समूह की जनसंख्या का प्रतिशत उत्तर-(d)
89. भारतीय संविधान की कौन सी विशेषताएँ जर्मनी से ली गई हैं?
(a) राष्ट्रीय आपातकाल के दौरान मौलिक अधिकारों के निलंबन से संबंधित प्रावधान उत्तर-(d)
(b) महासंघ का विचार (c) मौलिक कर्तव्य
(d) मौलिक अधिकार उत्तर-(a)
90. डॉ. बी.आर. अम्बेडकर निम्नलिखित में से किससे संविधान सभा के लिए चुने गए थे?
(a) संयुक्त प्रांत (b) पश्चिम बंगाल उत्तर-(b)
(c) बॉम्बे प्रेसीडेंसी (d) पंजाब उत्तर-(b)
91. भारत की संविधान सभा की उद्घाटन बैठक की अध्यक्षता किसने की?
(a) डॉ. राजेंद्र प्रसाद (b) पी. उपेन्द्र उत्तर-(c)
(c) सच्चिदानंद सिन्हा (d) डॉ. बी.आर. अम्बेडकर उत्तर-(c)
92. भारत में कैबिनेट मिशन का नेतृत्व किया गया था:
(a) स्टैफ़ोर्ड क्रिप्स (b) ए.वी. सिकंदर उत्तर-(c)
(c) लॉर्ड पेथिक लॉरेंस (d) ह्यू गैट्सकेल उत्तर-(c)
93. भारत का संविधान किसके द्वारा अपनाया गया था:
(a) गवर्नर जनरल (b) ब्रिटिश संसद उत्तर-(c)
(c) संविधान सभा (d) भारत की संसद उत्तर-(c)
94. अविभाजित भारत के लिए संविधान सभा की पहली बैठक हुई
(a) 6 दिसंबर, 1946 (b) 9 दिसंबर, 1946 उत्तर-(b)
(c) 20 फरवरी, 1947 (d) 3 जून, 1947 उत्तर-(b)
95. जब 31 अक्टूबर, 1947 को भारत डोमिनियन के लिए संविधान सभा पुनः एकत्रित हुई, तो इसकी घटी हुई सदस्यता थी:
(a) 299 (b) 311 उत्तर-(a)
(c) 319 (d) 331 उत्तर-(a)
96. निम्नलिखित में से कौन भारत की संविधान सभा के संवैधानिक सलाहकार थे?
(a) डॉ. बी.एन. राव (b) डॉ. बी.आर. अम्बेडकर उत्तर-(a)
(c) के.एम. मुंशी (d) एम.सी. सीतलवाड उत्तर-(a)
97. भारत का संविधान एक संविधान सभा द्वारा अधिनियमित किया गया था:

- (a) भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम, 1947 के तहत
(b) कैबिनेट मिशन योजना, 1946 के तहत
(c) अन्तिम सरकार के एक संकल्प के माध्यम से उत्तर-(b)
(d) भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा स्वतंत्र भारत के लिए संविधान बनाने वाली संविधान सभा की स्थापना की गई थी: उत्तर-(b)
87. (a) 1945 (b) 1946 उत्तर-(b)
(c) 1947 (d) 1949 उत्तर-(b)
88. भारत की संविधान सभा की उद्घाटन बैठक की अध्यक्षता किसने की?
(a) सच्चिदानंद सिन्हा (b) बी.आर. अम्बेडकर उत्तर-(a)
(c) डॉ. राजेंद्र प्रसाद (d) पी. उपेन्द्र उत्तर-(a)
89. निम्नलिखित में से कौन भारतीय संविधान की प्रारूपण समिति के अध्यक्ष थे?
(a) राजेंद्र प्रसाद (b) तेज बहादुर सप्रू उत्तर-(d)
(c) सी. राजगोपालाचारी (d) बी. आर. अम्बेडकर उत्तर-(d)
90. संविधान सभा को अंततः संविधान पारित करने में कितना समय लगा?
(a) लगभग 6 महीने 1949
(b) 26 नवंबर 1948 से ठीक एक साल पहले
(c) 15 अगस्त 1947 से लगभग 2 वर्ष
(d) 9 दिसंबर 1946 से लगभग 3 वर्ष उत्तर-(d)
91. संविधान सभा के अध्यक्ष कौन थे?
(a) पं. जवाहरलाल नेहरू (b) डॉ. राजेंद्र प्रसाद उत्तर-(b)
(c) डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (d) सी. राजगोपालाचारी उत्तर-(b)
92. संविधान सभा की मांग भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा 1936 में आयोजित अपने सत्र में रखी गई थी:
(a) कानपुर (b) बॉम्बे उत्तर-(c)
(c) लखनऊ (d) लाहौर उत्तर-(c)
93. संविधान सभा संविधान के विभिन्न प्रावधानों पर निर्णय पर पहुंची:
(a) बहुमत से (b) दो-तिहाई बहुमत से उत्तर-(c)
(c) सर्वसम्मति से (d) सर्वसम्मति से उत्तर-(c)
94. भारतीय संविधान के प्रारूपण पर सर्वाधिक गहरा प्रभाव किसका था?
(a) अमेरिकी संविधान
(b) ब्रिटिश संविधान
(c) भारत सरकार अधिनियम, 1935 उत्तर-(c)
(d) स्वतंत्रता और बंधुत्व के फ्रांसीसी आदर्श उत्तर-(c)
95. कोई व्यक्ति भारत से बाहर पैदा होने पर भी भारत का नागरिक बन सकता है, यदि:
(a) पिता भारत के नागरिक हैं (b) मां भारत की नागरिक हैं
(c) व्यक्ति के जन्म के समय पिता भारत का नागरिक है
(d) व्यक्ति के जन्म के समय पिता या माता भारत के नागरिक हैं उत्तर-(d)
96. निम्नलिखित में से कौन सा कथन सही है? डआईएस 2004.

111. संविधान के किस अनुच्छेद के तहत सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक अधिकार दिये गये हैं?
 (a) अनुच्छेद 29 और 31 (b) अनुच्छेद 29 और 32
 (c) अनुच्छेद 29 और 30 (d) अनुच्छेद 30 और 31 उत्तर- (c)
112. भारतीय संविधान किस संवैधानिक प्रणाली का बारीकी से अनुसरण करता है:
 (a) यूएसए (b) यूके
 (c) स्विट्जरलैंड (d) रूस उत्तर- (b)
113. निम्नलिखित में से कौन सी विशेषता भारतीय संघ और अमेरिकी संघ दोनों के लिए समान है?
 (a) एकल नागरिकता (b) दोहरी न्यायपालिका
 (c) संविधान में तीन सूचियाँ (d) संविधान की व्याख्या करने के लिए एक संघीय सर्वोच्च न्यायालय उत्तर- (d)
114. 'स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व' की प्रेरणा कहाँ से मिली:
 (a) अमेरिकी क्रांति (b) फ्रांसीसी क्रांति
 (c) रूसी क्रांति (d) उपरोक्त में से कोई नहीं उत्तर- (b)
115. भारतीय राष्ट्रपति और प्रधान मंत्री किस देश के राष्ट्राध्यक्षों की प्रतिकृति हैं?
 (a) ब्रिटेन (b) यूएसए
 (c) आयरलैंड (d) रूस उत्तर- (a)
116. भारतीय संघ के राष्ट्रपति के पास समान संवैधानिक अधिकार हैं:
 (a) ब्रिटिश सम्राट (b) यूएसए के राष्ट्रपति
 (c) मिस्र के राष्ट्रपति (d) रूस के राष्ट्रपति उत्तर- (a)
117. निम्नलिखित में से कौन भारत को एक धर्मनिरपेक्ष राज्य के रूप में वर्णित करता है?
 (a) मौलिक अधिकार (b) नौवीं अनुसूची
 (c) निदेशक सिद्धांत (d) संविधान की प्रस्तावना उत्तर- (d)
118. सरकार के संसदीय स्वरूप में, राज्य की वास्तविक शक्तियाँ निहित होती हैं:
 (a) प्रधान मंत्री की अध्यक्षता में मंत्रिपरिषद् (b) राष्ट्रपति
 (c) सरकार (d) संसद उत्तर- (a)
119. निम्नलिखित में से कौन भारतीय संविधान की मूल विशेषता नहीं है?
 (a) राष्ट्रपति सरकार (b) संसदीय सरकार
 (c) संघीय सरकार (d) न्यायपालिका की स्वतंत्रता उत्तर- (a)
120. निम्नलिखित में से कौन सी सरकार के संसदीय स्वरूप की विशेषता है?
 (a) कार्यपालिका न्यायपालिका के प्रति उत्तरदायी है
 (b) कार्यपालिका विधायिका के प्रति उत्तरदायी है
 (c) न्यायपालिका कार्यपालिका के प्रति उत्तरदायी है
 (d) विधायिका कार्यपालिका के प्रति उत्तरदायी है उत्तर- (b)
21. कानून के समक्ष समानता के संबंध में, भारतीय संविधान निम्नलिखित मामलों में अपवाद बनाता है:
 (a) राष्ट्रपति या राज्यपाल (b) केवल विदेशी संप्रभु
 (c) केवल राष्ट्रपति (d) कोई नहीं उत्तर- (a)

122. प्रेस की संसरणशक्ति:
 (a) संविधान द्वारा निषिद्ध है
 (b) वो तर्कसंगतता की कसौटी पर परखा जाना चाहिए
 (c) अनुच्छेद 19 में उल्लिखित प्रेस की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध है
 (d) संविधान के अनुच्छेद 31 में निर्दिष्ट है उत्तर- (b)
123. निम्नलिखित में से कौन भारतीय नागरिकों के मौलिक अधिकारों पर उचित प्रतिबंध लगा सकता है?
 (a) सुप्रीम कोर्ट (b) संसद
 (c) मंत्रिपरिषद् की सलाह पर राष्ट्रपति
 (d) इनमें से कोई नहीं; प्रतिबंध पहले ही संविधान में शामिल किए जा चुके हैं उत्तर- (b)
124. भारत में संवैधानिक उपचारों का अधिकार निम्नलिखित के लिए उपलब्ध है:
 (a) केवल भारत के नागरिक
 (b) किसी भी मौलिक अधिकार के उल्लंघन के मामले में सभी व्यक्ति
 (c) किसी भी व्यक्ति को सभी व्यक्तियों पर प्रदत्त मौलिक अधिकारों में से किसी एक को लागू करने के लिए
 (d) अकेले एक पीड़ित व्यक्ति उत्तर- (b)
125. भारतीय संविधान निम्नलिखित में से कौन सी विशेषता जर्मनी के वाइमर संविधान से उधार लेता है?
 (a) एक मजबूत केंद्र वाले संघ का विचार (b) राष्ट्रपति चुनाव की विधि
 (c) आपातकालीन शक्तियाँ
 (d) राष्ट्रीय आपातकाल के दौरान मौलिक अधिकारों के निलंबन से संबंधित प्रावधान उत्तर- (d)
126. निम्नलिखित में से कौन सी विशेषताएँ और उनका स्रोत गलत मेल खाते हैं?
 (a) न्यायिक समीक्षा - ब्रिटिश अभ्यास
 (b) समवर्ती सूची - ऑस्ट्रेलियाई संविधान
 (c) निदेशक सिद्धांत - आयरिश संविधान
 (d) मौलिक अधिकार - अमेरिकी संविधान उत्तर- (a)
127. किस संविधान ने कानून के शासन, संसदीय प्रणाली और कानून बनाने की प्रक्रिया की भारतीय अवधारणाओं को प्रेरित किया है?
 (a) अमेरिकी संविधान (b) ब्रिटिश संविधान
 (c) कनाडाई संविधान (d) उपरोक्त सभी उत्तर- (b)
128. प्रस्तावना के संबंध में निम्नलिखित में से कौन सा कथन सही है?
 (a) यह कानून की अदालत में लागू करने योग्य नहीं है
 (b) सुप्रीम कोर्ट ने हाल ही में फैसला सुनाया है कि यह संविधान का हिस्सा नहीं है
 (c) इसमें दो बार संशोधन किया गया है (d) उपरोक्त सभी सही हैं उत्तर- (a)
129. भारतीय संविधान ने प्रस्तावना के विचारों को कहाँ से उधार लिया है:
 (a) इतालवी संविधान (b) कनाडाई संविधान
 (c) फ्रांसीसी संविधान (d) संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान उत्तर- (d)

130. एक संघीय राज्य में:
 (a) राज्य केंद्र से अधिक शक्तिशाली है
 (b) केंद्र राज्यों की तुलना में अधिक शक्तिशाली है
 (c) सरकारी कार्यों का एक राष्ट्रपति स्वरूप
 (d) संविधान अधिकार क्षेत्र के उल्लंघन के खिलाफ सुरक्षा उपायों के साथ केंद्र और राज्यों के बीच शक्तियों का विभाजन करता है
 उत्तर- (a)
131. भारत ने संघीय सरकार का विकल्प चुना क्योंकि:
 (a) विशाल क्षेत्र (b) सांस्कृतिक एकीकरण
 (c) भाषाई और क्षेत्रीय विविधता (d) प्रशासनिक सुविधा
 उत्तर- (c)
132. भारतीय संविधान की प्रस्तावना में लिखा है:
 (a) हम, भारत के लोग - इस संविधान को अपनाते हैं, अधिनियमित करते हैं और भारत को देते हैं।
 (b) हम, संविधान सभा के लोग, इस संविधान को अपनाते हैं, अधिनियमित करते हैं और भारत को सौंपते हैं।
 (c) हम, भारत के नागरिक - इस संविधान को अपनाते हैं, अधिनियमित करते हैं और स्वयं को सौंपते हैं।
 (d) हम, भारत के लोग - हमारी संविधान सभा में - इस संविधान को अपनाते हैं, अधिनियमित करते हैं और खुद को सौंपते हैं।
 उत्तर- (d)
133. निम्नलिखित में से कौन सा कथन सही है?
 (a) संविधान को प्रस्तावना संविधान का हिस्सा है और इसे अनुच्छेद 368 के तहत संशोधित किया जा सकता है।
 (b) संविधान की प्रस्तावना संविधान का हिस्सा नहीं है और इसमें संशोधन नहीं किया जा सकता है।
 (c) प्रस्तावना संविधान की मूल संरचना का हिस्सा है और इसमें केवल तभी संशोधन किया जा सकता है जब मूल संरचना में कोई बदलाव नहीं किया गया हो।
 (d) प्रस्तावना को संसद द्वारा केवल एक वस्तुनिष्ठ संकल्प द्वारा संशोधित किया जा सकता है।
 उत्तर- (c)
134. हमारे संविधान में 'समाजवादी धर्मनिरपेक्ष' और 'राष्ट्र की एकता और अखंडता' शब्द जोड़े गए:
 (a) संविधान का 42वां संशोधन (b) संविधान का 44वां संशोधन
 (c) संविधान का 46वां संशोधन (d) उपरोक्त में से कोई नहीं
 उत्तर- (b)
135. भारत के संविधान की प्रस्तावना में परिकल्पना की गई है कि:
 (a) यह संविधान का हिस्सा होगा।
 (b) इसे संविधान से निरस्त या मिटाया जा सकता है।
 (c) यह संविधान के बारे में कुछ भी स्वीकार, मान्यता या प्रचार नहीं करता है।
 (d) संविधान में इसकी अलग इकाई है।
 उत्तर- (d)
136. प्रस्तावना के अनुसार भारत का सही नामकरण है:
 (a) संप्रभु, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य

- (b) संप्रभु, लोकतांत्रिक गणराज्य
 (c) संप्रभु, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य
 (d) संप्रभु, धर्मनिरपेक्ष, समाजवादी लोकतंत्र
 उत्तर- (c)
137. भारत एक लोकतांत्रिक गणराज्य है, क्योंकि:
 (a) न्यायपालिका की स्वतंत्रता है।
 (b) राज्य का मुखिया लोगों द्वारा चुना जाता है।
 (c) केंद्र और राज्यों के बीच शक्तियों का वितरण है।
 (d) संसदीय सर्वोच्चता है।
 उत्तर- (b)
138. हमारे संविधान की प्रस्तावना:
 (a) संविधान का एक हिस्सा है। (b) में संविधान की भावना समाहित है।
 (c) दी गई शक्ति पर एक सीमा है। (d) उपरोक्त में से कोई नहीं।
 उत्तर- (b)
139. निम्नलिखित में से कौन सा भारतीय संविधान की प्रस्तावना का हिस्सा नहीं है?
 (a) धर्मनिरपेक्षता (b) समाजवाद
 (c) लोकतांत्रिक गणराज्य (d) संघवाद
 उत्तर- (d)
140. भारत की संप्रभुता का स्रोत निहित है:
 (a) राष्ट्रपति (b) प्रधान मंत्री
 (c) संविधान की प्रस्तावना (d) भारत के लोग
 उत्तर- (c)
141. भारत का संविधान गणतांत्रिक है क्योंकि यह
 (a) एक निर्वाचित संसद का प्रावधान करता है। (b) वयस्क मताधिकार का प्रावधान करता है।
 (c) में अधिकारों का बिल शामिल है। (d) कोई वंशानुगत तत्व नहीं है।
 उत्तर- (d)
142. निम्नलिखित में से कौन सा कथन सही नहीं है?
 (a) अनुच्छेद 39(d), न्यायालय को राष्ट्रीयकरण कानूनों की संवैधानिकता को बनाए रखने में सक्षम बनाएगा।
 (b) अनुच्छेद 14, न्यायालय को उस कानून को रद्द करने में सक्षम करेगा जो समाजवादी लक्ष्य को पूर्ण सीमा तक प्राप्त करने में विफल रहा।
 (c) अनुच्छेद 25, न्यायालय को उस अनुच्छेद के तहत गारंटीकृत स्वतंत्रता सुनिश्चित करने में सक्षम करेगा।
 (d) अनुच्छेद 23, न्यायालय को आय और स्थिति में असमानता को कम करने में सक्षम करेगा।
 उत्तर- (c)
143. भारत में एकल नागरिकता की अवधारणा को अपनाया गया है
 (a) इंग्लैंड (b) यू.एस.ए.
 (c) कनाडा (d) फ्रांस
 उत्तर- (a)
144. भारतीय संविधान में डेडवूच 2011 शामिल है
 (a) 395 अनुच्छेद, 22 भाग और 12 अनुसूचियाँ
 (b) 371 अनुच्छेद, 21 भाग और 11 अनुसूचियाँ
 (c) 372 अनुच्छेद, 20 भाग और 7 अनुसूचियाँ
 (d) 381 अनुच्छेद, 23 भाग और 8 अनुसूचियाँ
 उत्तर- (a)
145. भारत के संविधान में मौलिक कर्तव्यों को किस देश से अपनाया गया है?

- (a) यूएसए (b) कनाडा
(c) तत्कालीन यूएसएसआर (d) यूके उत्तर- (c)
146. प्रस्तावना में 'समाजवादी' शब्द जोड़ा गया, इसका मुख्य उद्देश्य है:
(a) आर्थिक और राजनीतिक स्थिति में असमानता को खत्म करना
(b) राजनीतिक और धार्मिक मामलों में असमानता को खत्म करना
(c) आय, स्थिति और जीवन स्तर में असमानता को खत्म करना
(d) वर्ग आधारित समाज को खत्म करना उत्तर- (a)
147. इनमें से कौन सा जोड़ा सही सुनेलित है?
(a) गणतंत्र - राज्य का प्रमुख वंशानुगत सम्राट होता है
(b) संघर्ष - संविधान लोगों की इच्छा पर आधारित है
(c) लोकतांत्रिक - संविधान किसी अन्य देश की कानूनी सर्वोच्चता को मान्यता नहीं देता है
(d) धर्मनिरपेक्ष - राज्य का अपना कोई धर्म नहीं होता उत्तर- (c)
148. प्रस्तावना में कुछ आदर्शों को स्थापित किया गया है जिन्हें पहली बार बताया गया था:
(a) रावी के तट पर जवाहरलाल नेहरू का भाषण जब उन्होंने पूर्ण स्वराज का आह्वान किया
(b) नेहरू रिपोर्ट
(c) भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कराची अधिवेशन में अपनाया गया एक प्रस्ताव
(d) संविधान सभा द्वारा अपनाया गया उद्देश्य संकल्प उत्तर- (d)
149. संविधान का वह भाग जो निर्माताओं के मन और आदर्शों को दर्शाता है:
(a) निदेशक सिद्धांत (b) मौलिक अधिकार
(c) प्रस्तावना (d) नागरिकता उत्तर- (c)
150. निम्नलिखित में से कौन यह निर्धारित करता है कि भारतीय संविधान संघीय है?
(a) एक लिखित और कठोर संविधान
(b) एक स्वतंत्र न्यायपालिका
(c) अवशिष्ट शक्तियों का केंद्र के पास निहित होना
(d) केंद्र और राज्यों के बीच शक्तियों का वितरण उत्तर- (d)
151. भारतीय संविधान को माना जाता है:
(a) सघीय (b) एकात्मक
(c) स्वरूप में संघीय और भावना में एकात्मक (d) संसदीय उत्तर- (c)
152. संविधान के अनुच्छेद 19 में निम्नलिखित में से किसका विशेष उल्लेख नहीं है?
(a) भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता
(b) बिना हथियारों के शांतिपूर्वक इकट्ठा होने की स्वतंत्रता
(c) स्वतंत्र रूप से घूमने की स्वतंत्रता
(d) प्रेस की स्वतंत्रता उत्तर- (d)
153. संवैधानिक उपचारों का अधिकार इसके अंतर्गत आता है:
(a) मौलिक अधिकार (b) कानूनी अधिकार
(c) संवैधानिक अधिकार (d) प्राकृतिक अधिकार उत्तर- (a)
154. यदि किसी भारतीय नागरिक को उसके धर्म के कारण सार्वजनिक पद से वंचित कर दिया जाता है तो उसे निम्नलिखित में से किस मौलिक अधिकार से वंचित कर दिया जाता है?

- (a) स्वतंत्रता का अधिकार (b) समानता का अधिकार
(c) धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार (d) शोषण के विरुद्ध अधिकार उत्तर- (b)
155. आपातकाल के दौरान अनुच्छेद 19 के तहत मौलिक स्वतंत्रता निलंबित कर दी जाती है:
(a) युद्ध या बाहरी आक्रमण
(b) किसी राज्य की संवैधानिक मशीनरी की विफलता
(c) आंतरिक सशस्त्र विद्रोह (d) वित्तीय संकट उत्तर- (a)
156. धर्म आदि के आधार पर भेदभाव का निषेध (भारत के संविधान का अनुच्छेद 15) एक मौलिक अधिकार है जिसे इसके अंतर्गत वर्गीकृत किया जा सकता है:
(a) धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार (b) शोषण के विरुद्ध अधिकार
(c) सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकार (d) समानता का अधिकार उत्तर- (d)
157. मौलिक अधिकारों के उल्लंघन से संबंधित कोई भी विवाद प्रस्तुत किया जा सकता है:
(a) केवल उच्चतम न्यायालय में (b) केवल उच्च न्यायालय में
(c) या तो सर्वोच्च न्यायालय में या उच्च न्यायालय में
(d) पहले सुप्रीम कोर्ट में और फिर हाई कोर्ट में उत्तर- (c)
158. निम्नलिखित में से कौन राज्य के नीति निदेशक सिद्धांतों में शामिल है/हैं?
1. मानव तस्करी एवं बलात् श्रम पर रोक
2. नशीले पेय और स्वास्थ्य के लिए हानिकारक अन्य दवाओं के औषधीय प्रयोजनों को छोड़कर उपभोग पर प्रतिबंध।
(a) केवल 1 (b) केवल 2
(c) 1 और 2 दोनों (d) न तो 1 और न ही 2 उत्तर- (b)
159. भारतीय संविधान निम्नलिखित के आधार पर अल्पसंख्यकों को मान्यता देता है:
(a) धर्म (b) जाति
(c) जनसंख्या (d) रंग उत्तर- (a)
160. अनुच्छेद 14 कानून के समक्ष समानता और कानून के समान संरक्षण की गारंटी देता है:
(a) भारत के क्षेत्र के भीतर रहने वाले सभी व्यक्ति
(b) भारत में रहने वाले सभी भारतीय नागरिक
(c) भारत में रहने वाले सभी व्यक्ति
(d) सभी व्यक्ति प्राकृतिक और कृत्रिम दोनों उत्तर- (a)
161. भारत के संविधान की किस अनुसूची में कई राज्यों में अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन और नियंत्रण के लिए विशेष प्रावधान हैं?
(a) तीसरा (b) पांचवां
(c) सातवां (d) नौवां उत्तर- (b)
162. अस्पृश्यता को समाप्त कर दिया गया है और इसका अभ्यास इसके अनुसार दंडनीय है:
(a) अनुच्छेद 15 (b) अनुच्छेद 16
(c) अनुच्छेद 17 (d) अनुच्छेद 15(4) उत्तर- (c)
163. जहां तक सशस्त्र बलों का सवाल है, संविधान के अनुच्छेद 14 और 19 के तहत दिए गए मौलिक अधिकार हैं:
(a) बिल्कुल उपलब्ध नहीं है

- (b) सशस्त्र बलों के लिए उपलब्ध है लेकिन अन्य बलों के लिए नहीं
(c) केवल सेना प्रमुख के विवेक पर उपलब्ध है
(d) केवल संसद द्वारा बनाए गए कानून के अनुसार उपलब्ध है

उत्तर- (d)

164. इनमें से कौन सा सही सुमेलित नहीं है?

- (a) भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता - इसमें प्रेस की स्वतंत्रता शामिल है
(b) अंतरात्मा की स्वतंत्रता - इसमें सिखों द्वारा कृपाण पहनने और ले जाने का अधिकार शामिल है
(c) व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार - किसी भी व्यापार या व्यवसाय को जारी रखने का अधिकार शामिल है

(d) समानता का अधिकार - प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को शामिल करें

उत्तर- (c)

165. संविधान में हमारे देश का नाम इस प्रकार है:

- (a) भारत
(b) इंडिया, यानी भारत
(c) हिंदुस्तान
(d) आर्यावर्त

उत्तर- (b)

166. संविधान में प्रावधान है कि हिंदी होगी:

- (a) भारत की राष्ट्रीय भाषा
(b) राज्य सरकारों के बीच संचार की भाषा
(c) भारत संघ की आधिकारिक भाषा
(d) केंद्र सरकार और राज्य सरकारों के बीच संचार की भाषा

उत्तर- (c)

167. न्यूनतम अनुमेय पुलिस 1994 क्या है?

- (a) 12 वर्ष
(b) 14 वर्ष
(c) 16 वर्ष
(d) 18 वर्ष

उत्तर- (b)

168. भारत का नागरिक बनने के लिए निम्नलिखित में से कौन सी शर्त नहीं है?

- (a) जन्म
(b) संपत्ति अर्जित करना
(c) वंश
(d) प्राकृतिकीकरण

उत्तर- (b)

169. भारतीय नागरिकता प्राप्त करने के लिए शर्तें निर्धारित करने में कौन सक्षम है?

- (a) संसद
(b) राज्य विधानमंडल
(c) राष्ट्रपति
(d) अटॉर्नी जनरल

उत्तर- (a)

170. नागरिकता अधिनियम, 1955 के अनुसार, भारतीय नागरिकता प्राप्त नहीं की जा सकती:

- (a) 26 जनवरी, 1950 को या उसके बाद भारत में पैदा हुए राजनयिक कर्मियों या विदेशी दुश्मनों के बच्चे

- (b) विदेश में भारतीय नागरिकों से जन्मे बच्चे
(c) संविधान के प्रारंभ में भारत का हिस्सा नहीं बनने वाले क्षेत्र को शामिल करना
(d) प्राकृतिकीकरण

उत्तर- (a)

171. नागरिकता प्रावधान संविधान में निहित हैं:

- (a) भाग II
(b) भाग II, अनुच्छेद 5-11
(c) भाग II, अनुच्छेद 5-6
(d) भाग 1, अनुच्छेद 5-11

उत्तर- (b)

- (a) भारत की संविधान सभा का चुनाव वर्ष 1946 में प्रांतीय विधानसभाओं द्वारा किया गया था।
(b) जवाहर लाल नेहरू, एम.ए. जिन्ना और सरदार वल्लभभाई पटेल भारत की संविधान सभा के सदस्य थे।
(c) भारत की संविधान सभा का पहला सत्र जनवरी, 1947 में आयोजित किया गया था।
(d) भारत का संविधान 26 जनवरी, 1950 को अपनाया गया था।
97. भारतीय संविधान में अंतर्निहित दर्शन को काफी पहले ही उद्देश्य प्रस्ताव में शामिल कर लिया गया था, जिसे संविधान सभा के पहले सत्र (13 दिसंबर 1946 को) में पेश किया गया था:
(a) पंडित जवाहरलाल नेहरू (b) सरदार वल्लभभाई पटेल
(c) चक्रवर्ती राजगोपालाचारी (d) डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर
98. नागरिकता कैसे प्राप्त की जा सकती है और कैसे समाप्त की जा सकती है, इसका विवरण इसमें दिया गया है:
(a) संविधान का भाग II (b) नागरिकता अधिनियम, 1955
(c) संविधान की अनुसूची I (d) संसद द्वारा विभिन्न अधिनियम
99. राष्ट्रीय ध्वज का डिजाइन भारत की संविधान सभा द्वारा अपनाया गया था:
(a) जुलाई, 1948 (b) जुलाई, 1950
(c) जुलाई, 1947 (d) अगस्त, 1947
100. निम्नलिखित में से कौन भारत सरकार अधिनियम, 1919 की प्रमुख विशेषताएं हैं?
1. प्रांतों की कार्यकारी सरकार में द्वैध शासन की शुरुआत।
2. मुसलमानों के लिए पृथक सांप्रदायिक निर्वाचन क्षेत्र की शुरुआत।
3. केंद्र द्वारा प्रांतों को विधायी अधिकार का हस्तांतरण।
4. केन्द्रीय एवं प्रांतीय विधानमण्डल का विस्तार एवं पुनर्गठन।
(a) 1, 2 और 3 (b) 1, 2 और 4
(c) 2, 3 और 4 (d) 1, 3 और 4
101. निम्नलिखित में से कौन सा भारत में सभी ब्रिटिश सवैधानिक प्रयोगों में सबसे अल्पकालिक साबित हुआ?
(a) भारत सरकार अधिनियम, 1919 (b) भारतीय परिषद अधिनियम, 1909
(c) पिंदस इंडिया एक्ट, 1784 (d) भारत सरकार अधिनियम, 1935
102. निम्नलिखित में से किस अधिनियम ने पहली बार औपचारिक रूप से चुनाव के सिद्धांतों को पेश किया?
(a) भारतीय परिषद अधिनियम, 1909 (b) भारत सरकार अधिनियम, 1919
(c) भारत सरकार अधिनियम, 1935 (d) भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम, 1947
103. उद्देश्य संकल्प के बारे में निम्नलिखित में से कौन सा कथन सही है/हैं?
प्रथम-इसे जवाहरलाल नेहरू ने संविधान सभा में पेश किया था।
द्वितीय-इसने अल्पसंख्यकों के लिए उचित अधिकारों की मांग की।
तृतीय-इसने मौलिक अधिकारों पर अध्याय का आधार बनाया।
चतुर्थ-इसने एक समाजवादी और धर्मनिरपेक्ष राज्य व्यवस्था की स्थापना का आह्वान किया।
(a) I और II (b) I, II और III

- (c) III और IV (d) केवल III
104. निम्नलिखित में से कौन सी वस्तु गलत सुनेलित है?
(a) 9 दिसंबर, 1947 - संविधान सभा की पहली बैठक
(b) 26 नवंबर, 1949 - भारत के लोगों ने संविधान को अपनाया, अधिनियमित किया और स्वयं को सौंप दिया
(c) 24 जनवरी, 1950 - अंततः संविधान सभा के सदस्यों द्वारा संविधान पर हस्ताक्षर किये गये
(d) 26 जनवरी, 1950 - संविधान लागू होने की तिथि
105. संविधान का निम्नलिखित में से कौन सा प्रावधान 26 नवंबर, 1949 से लागू हुआ?
प्रथम-नागरिकता से संबंधित प्रावधान।
द्वितीय-चुनाव से संबंधित प्रावधान।
तृतीय-अंतिम संसद से संबंधित प्रावधान।
चतुर्थ-मौलिक अधिकार।
(a) I और II (b) I, III और IV
(c) I, II और III (d) कोई नहीं
106. निम्नलिखित में से किस अधिनियम ने विधानमंडल में पहली बार भारतीयों को प्रतिनिधित्व दिया?
(a) भारतीय परिषद अधिनियम, 1909 (b) भारतीय परिषद अधिनियम, 1919
(c) भारत सरकार अधिनियम, 1935 (d) उपरोक्त में से कोई नहीं
107. काउन ने भारत सरकार को अपने हाथों में ले लिया:
(a) चार्टर अधिनियम, 1833 (b) भारत सरकार अधिनियम, 1858
(c) भारतीय परिषद अधिनियम, 1861 (d) भारत सरकार अधिनियम, 1935
108. निम्नलिखित कथनों पर विचार करें. भारतीय संविधान है:
(1) अलिखित संविधान (2) लिखित संविधान।
(3) मुख्यतः भारत सरकार अधिनियम, 1935 पर आधारित।
(a) 2 और 1 सही हैं (b) 2 और 3 सही हैं
(c) 1 और 2 सही हैं (d) 1 और 3 सही हैं
109. भारतीय संविधान एक धर्मनिरपेक्ष राज्य की स्थापना करता है, जिसका अर्थ है:
1. राज्य सभी धर्मों के साथ समान व्यवहार करता है।
2. सभी लोगों को आस्था और पूजा की स्वतंत्रता की अनुमति है।
3. बिना किसी अपवाद के शैक्षणिक संस्थान धार्मिक शिक्षा देने के लिए स्वतंत्र हैं।
4. राज्य रोजगार के मामलों में धर्म के आधार पर कोई भेदभाव नहीं करता है।
(a) I और II (b) I, II और III
(c) II, III और IV (d) I, II और IV
110. संविधान सभा की राष्ट्रवादी मांग को पहली बार ब्रिटिश सरकार ने स्वीकार कर लिया, हालांकि परोक्ष रूप से और कुछ आपत्तियों के साथ:
(a) क्रिप्स प्रस्ताव (b) अगस्त प्रस्ताव
(c) कैबिनेट मिशन योजना (d) 1935 का अधिनियम